इस पुस्तक के
विषय का सुझाव म० गोर्की ने
दिया था। उन्होंने कहा था: "जानते
हो मैं इस तरह की किताब कैसे शुरू करता?
अनंत शून्य की कल्पना करो। नक्षत्र, नीहारिकाएं....
किसी विशाल नीहारिका की गहराई में कहीं सूरज
चमकने लगता है। ग्रह सूरज से अलग हो जाते हैं। किसी
छोटे-से ग्रह के धरातल पर पदार्थ सजीव हो उठता है, उसमें
अपने बारे में चेतना पैदा होने लगती है। मनुष्य उत्पन्न
होता है..." इस पुस्तक के लेखकों ने १९३६ में अपना
काम आरंभ किया। उन्होंने बताया है कि मनुष्य कैसे
उत्पन्न हुआ, उसने काम करना और सोचना कैसे आरंभ
किया, उसने आग और लोहे को अपने वश में कैसे
किया, उसने प्रकृति पर अपना प्रभुत्व कैसे
स्थापित किया, किस तरह उसने इस
दुनिया को समझा और उसका
पुनर्निर्माण किया।

अनुवादक: नरेश वेदी

डिज़ाइन और रूप सज्जा: लेओनीद श्चानोन।

छाया और स्लाइड: वालेन्तीन चेर्नोक (सौजन्य: ऐतिहासिक संग्रहालय)।
चित्रकार अलेक्सेई कोन्ली तथा पीटी योमान।

आवरण पर सामने घोड़ा और बैल। चित्र। लास्को गुफ़ा। फ्रांस। प्रारंभिक पुरापाषाण युग।
आवरण पर पीछे जाबरान (सहारा) में चट्टान पर खुदाई। ६,०००,००० से १,०००,००० वर्ष ई० पू० तक।

हिन्दी अनुवाद • रादुगा प्रकाशन • मास्को

सोवियत संघ में मुद्रित

М. Ильин, Е. Сегал

КАК ЧЕЛОВЕК СТАЛ ВЕЛИКАНОМ

на яз. хинди

Ilyin M. and Segal H.

HOW MAN BECAME A GIANT

in Hindi

ISBN 5-05-000405-9

И $\frac{[illegible]}{[illegible]}$ 362-85

मनुष्य महाबली है

इस धरती पर एक महावली रहता है।

उसके हाथ भीमकाय रेलवे इंजन को उठा सकते हैं।

उसके पैर हज़ारों कोस रोज़ नाप सकते हैं।

उसके पंख उसे बादलों के ऊपर ले जा सकते हैं, जहां कोई पक्षी भी नहीं पहुंच सकता।

उसके पर किसी भी मछली के परों से ज़्यादा शक्तिशाली हैं।

उसकी आंखें अदृश्य चीज़ों को देख लेती हैं, उसके कान दुनिया के दूसरे छोर पर बोले गये शब्द सुन लेते हैं।

वह इतना बलवान है कि पहाड़ों को आरपार छेद सकता है और झरनों को रोक सकता है।

वह धरती का चेहरा बदल रहा है, जंगल उगा रहा है, समुद्रों को जोड़ रहा है, रेगिस्तानों में पानी ला रहा है।

यह महाबली कौन है?

मनुष्य।

लेकिन वह महाबली क्योंकर बना, वह धरती व राजा कैसे बना?

यही इस पुस्तक की हकानी है।

अदृश्य पिंजरा

जमाना था जब मनुष्य महाबली नही, बौना था, प्रकृति का स्वामी नही, उसका सामान्य दास था।

प्रकृति पर उसका उतना ही बस था, वह उतना ही आजाद था जितना कि जगल का कोई जानवर या हवा मे उडनेवाला पक्षी।

कहावत है – चिडियो की तरह आजाद।

लेकिन क्या चिडिया सचमुच आजाद होती है?

ठीक है कि उसके पंख होते हैं। और उसके पंख उसे जगलो, पहाडो और सागरो के पार कही भी ले जा सकते है। शरद ऋतु मे दक्षिण की ओर जाते सारसो से हमे कितनी बार ईर्ष्या हुई है। ऊपर, ऊचे आसमान पर पक्षियो की कतारे पंख मारती चली जाती है और नीचे अचरज से सिर उठाये लोग कहते है – "जरा, चिडियो को तो देखो! वे कही भी जा सकती है!"

लेकिन बात क्या सचमुच यही है? क्या पक्षी हजारो किलोमीटर महज इसलिए उडकर जाते है कि उन्हे सैर करना अच्छा लगता है? नही, जो चीज उन्हे ले जाती !, वह आनंद नही, आवश्यकता है। ये घुमक्कड आदते पक्षियो की असख्य पीढियो लाखो वर्ष लबे जीवन-सघर्ष के दौरान पैदा हुई हैं।

पक्षी क्योकि एक जगह से दूसरी जगह आसानी से उडकर जा सकता है, इसलिए इस पर अचरज करना स्वाभाविक ही है कि पक्षियो की हर जाति ससार के हर भाग मे क्यो नही पाई जाती।

अगर ऐसा होता, तो हमारे उत्तरी चीड वन और भोज अरण्य चटकीले रगो के परोवाले तोतो से भरे होते, और जगलो मे हम मैदानी पक्षी भरत (लार्क) की सुपरिचित चहक सुन लेते। लेकिन ऐसा न है और न कभी हो सकता है, क्योकि पक्षी जितने आजाद नजर आते है, दरअसल उतने है नही। दुनिया मे हर पक्षी की अपनी जगह है। कोई जगल मे रहता है, कोई खेत मे, तो किसी का ठिकाना समुद्र के तट पर है।

सोचो तो, उकाब के पंख कितने शक्तिशाली होते है। फिर भी अपना घोसला बनाने की जगह चुनते समय वह एक अदृश्य सीमा को (जिसे नक्शे पर सचमुच अकित किया जा सकता है) कभी पार नही करेगा। सुनहरा उकाब सूने, वृक्षहीन मैदान मे अपना विशाल घोसला नही बनायेगा और मैदानी उकाब कभी जगल मे अपना घर नही बनायेगा।

एक अदृश्य बाड जगल को मैदान से अलग कर देती है, जिसे कोई भी जानवर या पक्षी पार नही कर सकता।

पिगल कुक्कुट (हेजेल-ग्राउज), स्वर्णचूड पक्षी (किगलेट) या गिलहरी जैसे वनवासी तुम्हे कभी मैदान मे नही मिल सकते। और सारग (बस्टर्ड) या बालमूष (जरबोआ) और धानीमूष जैसे असली मैदानी पशु-पक्षी कभी जगल मे नही मिलेगे।

इसके अलावा हर जगल और मैदान मे कितनी ही और छोटी-छोटी अदृश्य बाडे होती हैं, जो उन्हें कितनी ही नन्ही-नन्हीं दुनियाओं मे बाट देती है।

जंगल की सैर

जगल मे घूमते समय तुम लगातार अदृश्य बाडो को पार करते जाते हो। और जब तुम पेड पर चढते हो, तो तुम्हारा सिर कितनी ही अदृश्य बाडो को तोड देता है। सारा का सारा जगल एक बडे रिहायशी मकान की तरह मंजिलो और फ्लेटो मे बटा हुआ है। ये सब सचमुच में है, चाहे तुम उन्हे देख न सको।

जगल मे घूमते समय तुम यह अवश्य देख सकते हो कि वह एक जैसा नही है। मिसाल के तौर पर, तुम्हारा ध्यान इस तरफ जा सकता है कि अचानक देवदार की जगह चीड के पेड ले लेते हैं और कही चीड के पेड़ और जगहो के मुकाबले ऊंचे जाते हैं। कही तुम्हारे पैर काई के हरे कालीन पर पडते हैं, तो कहीं जमीन घास या पत्थर के फूलो (लाइकेन) से ढकी होती है।

देहाती इलाके में गरमिया बितानेवाला शहरी तुमसे कहेगा कि वह जगल में है। मगर तुम किसी वनविशेषज्ञ से पूछो, तो वह कहेगा कि यहा एक नहीं, चार जगल है। सीलन भरे उतार मे सरो के पेड़ रोपते हैं, जहा काई का मोटा कालीन है। उसके आगे, रेतीले ढाल पर, हरी काई भरी जमीन पर चीड का कुंज है, जिसमे लाल और काली बिलबेरियो की भाडिया भरी पडी हैं। इससे भी ऊपर, रेतीले टीलो पर सफेद काई चढे चीडो का वन है। और जहां नम जगह है, वहा चीडो के नीचे की जमीन घास से ढकी है।

जंगल को चार छोटी-छोटी दुनियाओ में बाटनेवाली तीन दीवारों को तुमने अभी-अभी उन्हे देखे बिना ही पार किया है।

मकानों पर जिस तरह नामों की तख्तिया लगी रहती हैं, वैसी वही जगल में भी होती, तो देवदार के जगल के पेडो पर तुम्हें ये नाम मिलते – श्री विषमचंचु (क्रॉसबिल), श्रीमती चटिका (सिस्किन), श्री स्वर्णचूड (किगलेट), श्री तिपजा कठफोड़वा। पत्रधारी जगलो मे बिलकुल दूसरे नाम मिल जाते – श्री हरित कठफोडवा, श्रीमती स्वर्णचटक (गोल्डफिंच), कुमारी नील बल्गुली (ब्लू टिटमाउस), श्री शलभाश (फ्लाइकैचर), श्रीमती द्रुमकूजिनी (चिफ-चैफ) श्रीमती मैना (मॉकिगबर्ड), श्री कालशीर्ष (ब्लैककैप), श्री कृष्ण कठफोडवा, आदि-आदि।

हर जगल की कई-कई मजिलें होती हैं।

चीड़ वन की दो – और कभी-कभी तीन भी – मंजिले होती है। निचली मंजिल काई या घास की होती है। बीच की भाडियो की होती है। ऊपरी मंजिल चीड वृक्षों की होती है।

शाहबलूत वन मे सात मंजिलें होती हैं। बलूत, प्रभूर्ज (ऐश ट्री), बागच्छाय (लिडन) और मेपल की सबसे ऊपरी मंजिल आसमान मे बातें करती है। वह वन

के ऊपर गरमियो मे हरी और शरद मे चटकीली सुनहरी छत बनाती है। बाज की आधी ऊंचाई तक पहुंची पहाडी प्रभूर्ज और जगली सेब तथा नाशपाती की फुनगिया होती हैं।

इनके नीचे झाड-झखाड की भरमार होती है – शबी कुज (नट ग्रोव), श्वेतकट (हॉथर्न)। झाडियो के नीचे फूल और घासे होती है। ये भी अलग-अलग स्तरो पर होते है और इनमें गोमेद (ब्लूबेल) अन्य फूलों से ऊंचे होते है। इनके नीचे, पर्णांग (फर्न) मे वासती नलिनी (लिली आफ द वैली) और गोधूम (काऊव्हीट) और इनके भी नीचे जमीन के और पास नील-पुष्प (वाइ-अ-लिट) और जगली स्ट्रॉबेरिया होती है। जमीन पर काई फैली रहती है।

जगल का तहखाना, जैसा कि होना भी चाहिए, जमीन के नीचे होता है। यही हमे पेडो, झाडियो और फूलो की जडे मिलती है।

चीड या पत्रधारी जगल की हर मजिल के अपने बाशिंदे होते है। बाज अपना घोंसला सबसे ऊंचाई पर बनाता है। उसके नीचे, किसी पेड के कोटर मे कठफोडवा अपने परिवार के साथ रहता है। कालशीर्ष ने अपना घोंसला झाडी मे बनाया है। जगली मुर्गा, जो निचली मजिल पर रहता है, जमीन पर घूमता है। जमीन के नीचे, तहखाने मे, जगली चूहो के बिल और घर है।

इस विशाल भवन मे सभी तरह के निवास-स्थान है। ऊपरी मजिले धूपदार और शुष्क हैं। निचली मजिल अधेरी और नम है। ऐसे ठडे निवास-स्थान भी हैं जो ग्रीष्मावासो का काम दे सकते है और ऐसे गरम निवास भी हैं, जो बारहो मास काम आ सकते है।

जमीन मे खुदा बिल गरम निवास है। वैज्ञानिको ने एक बिल का ताप नापा, जो डेढ मीटर गहरा चला गया था। यह सरदियो की बात है, बाहर का ताप –१८° (से०) था, लेकिन बिल मे तापमापी ने +८° दिखाया।

पेड के कोटर मे बहुत ठड होती है। यहा सरदियो मे जानवर जम तक सकता है। तथापि गरमियो मे यह जगह मजेदार हो जाती है, खासकर उल्लुओ और चमगादडो के लिए, जो हमेशा ही "रात की पाली" पर होते है और दिन का समय धूप से बचे-बचे किसी अधेरे कोने मे काटना पसद करते है।

लोग अपने निवास-स्थान बदलते ही रहते है और एक मकान से दूसरे मे, एक मजिल से दूसरी पर जाते ही रहते है। लेकिन जगल मे यह बात लगभग असभव है।

जगली मुर्गा कभी अपने अधेरे, नम मकान की जगह धूपी, धूपभरी अटारी नही लेगा। और अटारी का प्रेमी बाज कभी अपना घोंसला पेड के नीचे जमीन पर ले जाने को तैयार न होगा।

चलो, मान ले कि किसी गिलहरी ने अपने निवास की धानीमूष के निवास से अदला-बदली करने का निश्चय कर लिया। गिलहरी जंगल में रहती है, जबकि धानीमूष खुले स्तेपी या रेगिस्तान मे रहता है।

गिलहरी का घर पेड पर, ऊंचे पर, किसी कोटर मे या डालियों पर है। धानीमूष जमीन के नीचे बिल मे रहता है।

अपने नये घर मे पहुचने के लिए धानीमूष को पेड पर चढना होगा। मगर वह यह कर न पायेगा, क्योंकि उसके पजे चढने के लिए बेकार है।

इसके विपरीत, गिलहरी कभी भी जमीन के भीतर न रह पायेगी। उसकी सभी आदते और तौर-तरीके पेडो के बाशिंदो के ही हैं।

यह जानने के लिए कि वह कहा रहती है, हमारे लिए बस उसकी दुम और पजो को देखना काफी है।

गिलहरी के पजे डालियो को पकडने और पेडों से काष्ठफल और चीडफल तोडने के लिए बने हैं। उसकी दुम एक बाक़ायदा हवाई छतरी होती है, जो एक डाल से दूसरी डाल पर फलाग लगाते समय उसे हवा मे सहारा देती है। गिलहरी की दुम तब भी उसके काम आती है, जब उसे कसिया (मार्टेन) की पकड से बचने के लिए लपकना और छलाग लगाना पडता है।

लेकिन धानीमूष के पंजे, जो स्तेपी मे रहता है, एकदम दूसरी तरह के होते हैं और उसकी दुम गिलहरी की दुम से जरा भी मेल नहीं खाती। सपाट, खुले स्तेपी में छिपने के लिए न कोई झाडी होती है और न सुरक्षा प्रदान करने के लिए कोई पेड़। दुश्मन से बचने का अकेला तरीका होता है भागना, गायब हो जाना, सचमुच जमीन के भीतर घुस जाना। और यही असल मे धानीमूष करता भी है। जैसे ही उसे ऊपर मडराता कोई उल्लू या बाज़ नजर आता है, वह जितनी तेज़ी से हो सकता है, दूर छलाग लगा जाता है और किसी बिल मे गायब हो जाता है। इसीलिए उसके पजे ऐसे होते हैं। वह अपनी लंबी पिछली टागो का उपयोग छलाग लगाते समय जमीन से उछलने में करता है, जबकि उसकी अगली टागे खुदाई का काम करती हैं। अपने दुश्मनो से बचने के लिए वह अपने बिल मे छिपता है, जो उसे गरमियो मे गरमी से और सरदियो मे ठड से बचाता है।

और उसकी दुम? धानीमूष की दुम उसके पंजों की सबसे अच्छी मददगार है। जब यह छोटा-सा जानवर आसपास निगाह डालने के लिए अपनी पिछली टागो पर बैठता है, तो इसकी दुम ऊपर सीधे टिकने के लिए तीसरी टाग की तरह सहारे का काम देती है। और जब यह छलाग लगाता है, तो इसकी दुम छलाग को पतवार की तरह ठीक दिशा मे रखती है। दुम के बिना धानीमूष हर छलाग के समय हवा मे गुलाटिया खाता और धड़ाम से जमीन पर आ गिरता।

इसलिए, अगर गिलहरी और धानीमूष अपने घरों की अदला-बदली करे, जगल की जगह स्तेपी और कोटर की जगह बिल की अदला-बदली करे, तो उन्हें दुमो और पजो की भी अदला-बदली करना पडेगी।

अगर हम जगल और स्तेपी के अन्य निवासियो का बारीकी से अध्ययन करे,

तो हम देखेंगे कि उनमें से हर कोई दुनिया मे अपनी जगह से एक अदृश्य जंजीर से बधा हुआ है – एक ऐसी जजीर, जिसे तोडना बहुत मुश्किल है।

जगली मुर्गा जगल की निचली मजिल पर इसलिए रहता है कि उसका मनपसद खाना तहखाने मे है। उसकी लबी चोच खासकर केंचुए खोद निकालने के लिए बनी लगती है। पेड पर चूकि जगली मुर्गे की दिलचस्पी की कोई चीज नही है, इसलिए तुम्हे वहा कोई जगली मुर्गा कभी नजर आयेगा भी नही।

लेकिन तिपजा या चित्तीदार बडा कठफोडवा तुम्हे शायद ही कभी जमीन पर दिखाई देगा। कठफोडवा देवदार या भोज वृक्ष के तने पर ठोंग मारता अपने दिन काट देता है।

यह किसे ठोंग रहा है? यह किसकी तलाश कर रहा है?

अगर तुम देवदार के पेड की जरा सी छाल उखाडो, तो तुम्हे सभी तरफ जाती टेढी-मेढी लकीरे दिखाई देगी। ये लकडी मे छालभक्षी भृग की बनाई सुरगे हैं, जो सभी देवदार वृक्षो का एक स्थायी ग्राहक और निवासी है। हर टेढी-मेढी रेखा का अत एक छोटे से छेद मे होता है, और हर छेद मे भृग की इल्लिया (भृग की पख आने से पहले की कोषावस्था) होती है, जो फिर स्वय भृग मे परिणत होती हैं। इस भृग ने अपने को देवदार के अनुकूल कर लिया है और कठफोडवे ने अपने को इस भृग के अनुकूल बना लिया है। कठफोडवे की सख्त चोंच पेड की छाल को आसानी से छेद सकती है। और उसकी जीभ इतनी लबी और लचकदार होती है कि वह इन टेढी-मेढी रेखाओ से (या इन छेदो से) इल्लियो तक पहुच जाती है।

और इस तरह हमे एक जजीर मिल जाती है देवदार वृक्ष – छालभक्षी भृग – कठफोडवा।

यह उन बहुत-सी जजीरो मे से एक है, जिनसे कठफोडवा पेड से और जगल से बधा हुआ है।

जगल मे पेड पर इसे अपनी खुराक मिलती है – केवल छालभक्षी भृग ही नही, बल्कि अन्य कीट और उनकी इल्लिया भी। सरदियो मे कठफोड़वा बडी सफाई के साथ चीड़फल से गिरिया निकाल लेता है – यह चीडफल को टिकाये रखने के लिए उसे तने और एक डाल के बीच दाब देता है। कठफोडवा पेड के तने को खोखला करके घोसला बना लेता है। इसकी सीधी दुम और मजबूत पजे तने पर चढने-उतरने के लिए एकदम ठीक हैं। फिर यह पेडो की अपनी जिंदगी की किसी और जिंदगी से अदला-बदली भला क्यो करता?

हम देखते है कि कठफोडवा और गिलहरी जगल के निवासी नही, कैदी है।

मछलियां तट पर कैसे आईं

जगल की नन्ही-सी दुनिया उन बहुतेरी दुनियाओं मे । बडी दुनिया बनती है।

धरती पर केवल जगल और स्तेपी ही नही, पहाड, भी हैं।

हर पहाड पर अदृश्य बाडे एक नन्ही दुनिया को दूस

हर समुद्र अदृश्य छतों से पानी के नीचे मंजिलों में बटा हुआ है।

पानी के छोर पर ज्वार-क्षेत्र में पत्थर अनगिनती घोंघों से मढ़े होते हैं। पत्थर अपनी जगह इतनी मजबूती से जमे होते हैं कि तेज से तेज तूफान भी उ यहां से अलग नहीं कर सकते।

इससे आगे, धूप से दमकते पानी में रंगीन मछलियां हरी और कत्थई समु घास में थिरकती फिरती हैं, पारदर्शक जेली मछलियां इधर-उधर तैरती हैं अ तारा मछलियां तली में रेंगती फिरती हैं। जलमग्न चट्टानें ऐसे अद्भुत जन्तुओं मढ़ी होती हैं, जो पौधों जैसे ही निश्चल होते हैं। उन्हें अपने भोजन की तला नहीं करनी पड़ती – वह स्वयं उनके मुंह में पहुंच जाता है। ये लाल एक्टीनियन है जो देखने में दुहरी गरदनवाली सुराहियों जैसे लगते हैं। इन्हें अपना पोषण उन प्र णियों से मिलता है, जिन्हें ये पानी के साथ चूस लेते हैं। चटकदार समुद्री एनीमो अपने पंखुड़ियों जैसे स्पर्शकों से उन मछलियों को पकड़ लेते हैं, जो उनके बहु पास होकर गुजरती हैं।

तली की दुनिया का – समुद्र के अंधियाले फर्श का, जहां रात कभी दिन नहीं बदलती, जहां हमेशा अंधेरा छाया रहता है – हाल ही दूसरा है। समुद्र के गहराई में प्रकाश नहीं है, और इसका यह मतलब है कि वहां समुद्री घास भी नहं है, क्योंकि समुद्री घास को प्रकाश चाहिए।

समुद्र की तली एक विशाल कब्रिस्तान है, जिस पर ऊपर से समुद्री जन्तुओं तथा वनस्पति के अवशेष आते हैं।

लंबे मस्पर्शकोंवाले दशपाद केकड़े फुसफुसी गाद पर विचरण करते हैं। चौड़े थूथनोंवाली मछलियां अंधेरे में तैरती रहती हैं। किन्हीं-किन्हीं की तो आंखें ही नहीं होती। कुछ मछलियों की दूरबीन की तरह निकली दो आंखें होती हैं। ऐसी भी मछ- लियां होती हैं, जिनके बदन पर लाल चित्तियां होती हैं। ये तीव्र प्रकाशयुक्त झरोखों- वाले जहाजों जैसी लगती हैं। ऐसी भी मछलियां होती हैं, जिनके पास अपने प्रकाशदीप होते हैं, जो उनके सिर पर उगे एक ऊंचे डंठल पर दमकते रहते हैं।

हमारी दुनिया से यह अद्भुत दुनिया कितनी भिन्न है!

लेकिन तट के साथ की वह छिछली पट्टी भी तो सूखी जमीन से कितनी भिन्न है – चाहे उन्हें एक-दूसरे से एक रेखा ही अलग करती है – समुद्रतट की रेखा।

क्या एक दुनिया
को छोड़ सूखी जमीन

ऐसा होना एकदम
लित है। जमीन पर
परों की जगह पैरों की
के जीवन में केवल
न रहे।

क्या ऐसा हो सक

अगर तुम यह सवाल किसी वैज्ञानिक से पूछो, तो वह तुम्हे बतायेगा कि कई लाख वर्ष हुए मछली की कुछ जातिया सचमुच तट पर आ गई और वे मछलिया न रही। जल से थल के सक्रमण मे एक-दो नही, लाखो वर्ष लगे।

कई आस्ट्रेलियाई नदियो मे शृगी मछली की एक जाति ऐसी है, जिसके गलफडे फेफडे से मिलते-जुलते हैं। सूखे मौसम मे जब पानी का स्तर गिरने लगता है और नदियो को कीचड भरी तलैयो की शृखलाओ मे बदल देता है, तो और सभी मछलिया मर जाती है और उनकी सडती लाशे पानी को दूषित कर देती है। केवल शृगी मछली ही सूखे मे बच पाती है, क्योकि इसके गलफडो के अलावा फेफडे भी होते है और जब इसे हवा दरकार होती है, तो यह बस अपना सिर पानी के बाहर निकाल देती है।

अफ्रीका और दक्षिण अमरीका मे मछलियो की कुछ जातिया ऐसी हैं, जो पानी के बिना भी जिदा रह सकती है। अनावृष्टि के काल मे वे गाद मे जा घुसती है और वर्षाकाल के फिर आने तक वही अपने फेफडो से सास लेती निश्चल पडी रहती है।

इसका मतलब है कि मछली फेफडे विकसित कर सकती थी।

लेकिन टागे? हा, टागो को भी सिद्ध करने के लिए जिदा मिसाले हैं। उष्ण कटिबधीय प्रदेशो मे कीचडफाद मछलिया होती है, जो केवल तट पर ही छलागे नही लगा सक्ती, बल्कि पेडो पर भी चढ सकती है। उनके जोडेदार पर पैरो का काम देते हैं।

ये सभी विचित्र प्राणी इस बात के जीवित प्रमाण हैं कि मछलिया पानी से निकल-कर जमीन पर आ सकती थी। लेकिन हम यह कैसे कह सकते हैं कि ऐसा सचमुच हुआ?

विलुप्त जतुओ की हड्डिया हमे इसकी कहानी बताती हैं। प्राचीन निक्षेपो मे खुदाई करते समय पुरातत्वविदो को एक ऐसे जानवर की हड्डिया मिली, जो बहुत कुछ मछली जैसा भी था, मगर जो फिर भी मछली नही रहा था। यह एक उभयचर प्राणी था—कुछ मेढक या ट्राइटन जैसा जानवर। यह जतु स्टीगोसेफालस कहलाता था। पखो की जगह इसके बाकायदा पाच उगलियोवाले पैर थे। जब यह कुछ-कुछ समय के लिए तट पर आता था, तो यह इन पैरो पर—धीरे-धीरे ही सही—चल सकता था।

सामान्य मेढक का जरा बारीकी से अध्ययन करो। अडे मे निकलने के समय यह बैगची (टेडपोल) होता है, और बैगची और मछली मे बहुत का फर्क होता है।

इसलिए, नतीजा यह निकलता है कि कई लाख साल पहले मछली की कुछ जातियो ने उस बाड को पार कर लिया, जो समुद्र को सूखी जमीन मे अलग करती है। लेकिन इस प्रक्रिया के दौरान वे बदल गईं। मछली से उभयचरो का विकास हुआ और आगे चलकर ये स्वय सरीमृपो के पूर्वज हुए। सरीसृप स्तनधारी जतुओ और पक्षियो के आदि-पूर्वज थे, जिनमे कई ऐसे जतु और पक्षी भी सम्मिलित है, जो पानी का रास्ता बिलकुल ही भूल गये हैं।

हर समुद्र अदृश्य छतों से पानी के तीन मंजिलों में बटा हुआ है।

पानी के छोर पर ज्वार-क्षेत्र में पत्थर अनगिनती घोंघों से मढ़े होते हैं
पत्थर अपनी जगह इतनी मजबूती से जमे होते हैं कि तेज से तेज तूफान भी
वहां से अलग नहीं कर सकते।

इससे आगे, धूप से दमकते पानी में रंगीन मछलियां हरी और कत्थई म
भाग में थिरकती फिरती हैं, पारदर्शक जैसी मछलियां इधर-उधर तैरती हैं
तारा मछलियां तली में रेंगती फिरती हैं। जलमग्न चट्टानें ऐसे अद्भुत जंतुओं
सजी होती हैं, जो पौधों जैसे ही निश्चल होते हैं। उन्हें अपने भोजन की त
नहीं करनी पड़ती – वह स्वयं उनके मुंह में पहुंच जाता है। ये लाल एस्सीडियन
जो देखने में दुहरी गरदनवाली सुराहियों जैसे लगते हैं। इन्हें अपना पोषण उन
णियों से मिलता है, जिन्हें ये पानी के साथ चूस लेते हैं। चटकदार समुद्री एनीम
अपने पखुड़ियों जैसे सस्पर्शकों से उन मछलियों को पकड़ लेते हैं, जो उनके ब
पास होकर गुजरती है।

तली की दुनिया का – समुद्र के अंधियाले फर्श का, जहां रात कभी दिन
नहीं बदलती, जहां हमेशा अंधेरा छाया रहता है – हाल ही दूसरा है। समुद्र
गहराई में प्रकाश नहीं है, और इसका यह मतलब है कि वहां समुद्री घास भी न
है, क्योंकि समुद्री घास को प्रकाश चाहिए।

समुद्र की तली एक विशाल कब्रिस्तान है, जिस पर ऊपर से समुद्री जंतु
तथा वनस्पति के अवशेष आते हैं।

लंबे सस्पर्शकोंवाले दशपाद केकड़े फुसफुसी गाद पर विचरण करते हैं। चौ
थूथनोंवाली मछलियां अंधेरे में तैरती रहती हैं। किन्हीं-किन्हीं की तो आंखें ही न
होतीं। कुछ मछलियों की दूरबीन की तरह निकली दो आंखें होती हैं। ऐसी भी मछ
लियां होती हैं, जिनके बदन पर लाल चित्तियां होती हैं। ये तीव्र प्रकाशयुक्त झरोखे
वाले जहाज़ों जैसी लगती हैं। ऐसी भी मछलियां होती हैं, जिनके पा
अपने प्रकाशदीप होते हैं, जो उनके सिर पर उगे एक ऊंचे डंठल पर दमक
रहते हैं।

हमारी दुनिया से यह अद्भुत दुनिया कितनी भिन्न है!

लेकिन तट के साथ की वह छिछली पट्टी भी तो सूखी जमीन से कितनी भिन्न
है – चाहे उन्हें एक-दूसरे से एक रेखा ही अलग करती है – समुद्रतट की
रेखा।

क्या एक दुनिया के निवासी दूसरी दुनिया में जा सकते हैं? क्या मछली समुद्र
को छोड़ सूखी जमीन पर आ सकती है?

ऐसा होना एकदम असंभव लगता है। मछली पानी के जीवन के लिए अनुकू-
लित है। जमीन पर रहने के लिए गलफड़ों की जगह फेफड़ों की, और
परों की जगह पैरों की जरूरत होगी। मछली समुद्र के जीवन की सूखी जमीन पर
के जीवन से केवल तभी अदला-बदली कर सकती है कि जब वह मछली
न रहे।

क्या ऐसा हो सकता है कि मछली मछली न रहे?

अगर तुम यह सवाल किसी वैज्ञानिक से पूछो, तो वह तुम्हे बतायेगा कि कई लाख वर्ष हुए मछली की कुछ जातिया सचमुच तट पर आ गई और वे मछलिया न रही। जल से थल के सत्रमण मे एक-दो नही, लाखो वर्ष लगे।

कई आस्ट्रेलियाई नदियो मे शृगी मछली की एक जाति ऐसी है, जिसके गलफडे फेफडे से मिलते-जुलते हैं। सूखे मौसम मे जब पानी का स्तर गिरने लगता है और नदियों को कीचड भरी तलैयो की शृखलाओ मे बदल देता है, तो और सभी मछलिया मर जाती हैं और उनकी सडती लाशे पानी को दूषित कर देती हैं। केवल शृगी मछली ही सूखे मे बच पाती है, क्योकि इसके गलफडो के अलावा फेफडे भी होते हैं और जब इसे हवा दरकार होती है, तो यह बस अपना सिर पानी के बाहर निकाल देती है।

अफ्रीका और दक्षिण अमरीका मे मछलियो की कुछ जातिया ऐसी है, जो पानी के बिना भी जिदा रह सकती है। अनावृष्टि के काल मे वे गाद मे जा घुसती हैं और वर्षाकाल के फिर आने तक वही अपने फेफडो से सास लेती निश्चल पडी रहती हैं।

इसका मतलब है कि मछली फेफडे विकसित कर सकती थी।

लेकिन टागे? हा, टागो को भी सिद्ध करने के लिए जिदा मिसाले है। उष्ण कटिबधीय प्रदेशो मे कीचड़फाद मछलिया होती हैं, जो केवल तट पर ही छलागे नही लगा सकती, बल्कि पेडो पर भी चढ सकती हैं। उनके जोडेदार पर पैरो का काम देते हैं।

ये सभी विचित्र प्राणी इस बात के जीवित प्रमाण है कि मछलिया पानी से निकल-कर जमीन पर आ सकती थी। लेकिन हम यह कैसे कह सकते है कि ऐसा सचमुच हुआ?

विलुप्त जतुओ की हड्डिया हमे इसकी कहानी बताती है। प्राचीन निक्षेपो मे खुदाई करते समय पुरातत्वविदो को एक ऐसे जानवर की हड्डिया मिली, जो बहुत कुछ मछली जैसा भी था, मगर जो फिर भी मछली नही रहा था। यह एक उभयचर प्राणी था—कुछ मेढक या ट्राइटन जैसा जानवर। यह जतु स्टीगोसेफालस कहलाता था। परो की जगह इसके बाकायदा पाच उगलियोवाले पैर थे। जब यह कुछ-कुछ समय के लिए तट पर आता था, तो यह इन पैरो पर—धीरे-धीरे ही सही—चल सकता था।

सामान्य मेढक का जरा बारीकी से अध्ययन करो। अडे से निकलने के समय यह बैगची (टेडपोल) होता है, और बैगची और मछली मे बहुत का फर्क होता है।

इसलिए, नतीजा यह निकलता है कि कई लाख साल पहले मछली की कुछ जातियो ने उस बाड को पार कर लिया, जो समुद्र को सूखी जमीन से अलग करती है। लेकिन इस प्रक्रिया के दौरान वे बदल गई। मछली से उभयचरो का विकास हुआ और आगे चलकर ये स्वय सरीसृपों के पूर्वज हुए। सरीसृप स्तनधारी जतुओ और पक्षियों के आदि-पूर्वज थे, जिनमे कई ऐसे जतु और पक्षी भी सम्मिलित हैं, जो पानी का रास्ता बिलकुल ही भूल गये हैं।

मौन साक्षी

अश्मीभूत जतुओं की हड्डिया ये मौन साक्षी हैं, जो हमें यह बताती हैं कि सजीव प्राणी लाखों वर्षों तक बिना बदले नही रहे।

उनको परिवर्तन के लिए किसने विवश किया?

अंग्रेज वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन ने जब तक विकासवाद का अपना सिद्धात प्रतिपादित नही किया, यह एक रहस्य बना रहा। उनके शुरू किये काम को दो रूसी वैज्ञानिकों व० कोवालेव्स्की तथा क्री० तिमिर्याजेव ने जारी रखा। उनके विस्तृत अध्ययन जब पूरे हुए, तो उन्होंने उन चीजो को हमारे लिए एकदम साफ कर दिया, जिन्हे हमारे दादा-परदादा नही समझ सकते थे।

प्रत्येक सजीव प्राणी ससार में अपनी जगह के लिए, अपने पर्यावरण–अपने निवास के पास-पडोस के लिए अनुकूलित होता है। लेकिन ससार मे अचल और अटल कुछ भी नही है–गरम जलवायु ठडी हो जाती है, जहा कभी मैदान थे, वहा पहाड पैदा हो जाते हैं, समुद्र की जगह धरती ले लेती है, देवदार और चीड़ के सदाबहार जगलों का स्थान पतझड़वा जगल ले लेते हैं।

और जब आसपास की हर चीज बदल जाती है, तो सजीव प्राणियो का क्या होता है?

वे भी बदल जाते है।

फिर भी, इसका फैसला वे आप नही कर सकते कि वे बदलेंगे किस तरह। हाथी अचानक पत्ते, घास और फलो की खूराक से मास की खूराक पर नही आ सकता। भालू यह कहकर कि "मुझे गरमी लग रही है," अपने बाल नही झाड सकता।

सजीव प्राणी इच्छानुसार नही बदल जाते। वे इसलिए बदलते हैं कि उन्हें नये आहार खाने और नई परिस्थितियो मे रहने के लिए मजबूर होना पडता है। और जो परिवर्तन आते है, वे सदा ही उनके अच्छे के लिए नही होते, सदा ही उपयोगी नही होते।

अनेक बार जो जतु या पौधे अपने को नवीन पर्यावरण मे पाते हैं, वे सूख जाते है, क्योकि उन्हे अब वे चीजे नही मिल पाती, जो उन्हे जीते रहने के लिए चाहिए, जैसी कि उनके पूर्वजो को मिला करती थी।

वे बुभुक्षित हो जाते हैं और ठड से जम जाते है, या शायद वे असामान्य गरमी या खुश्की से पीड़ित होने लगते हैं। अपने शत्रुओ के लिए वे आसान शिकार बन जाते हैं। उनकी सतान और भी कमजोर होती है और इसलिए उसमें नयी परिस्थितियो मे जीने की और भी कम क्षमता होती है। अंत मे, सारी की सारी जाति मर जाती है, क्योकि वह परिवर्तनो पर काबू नही पा सकती।

लेकिन हो यह भी सकता है कि सजीव प्राणी ऐसे तरीके से बदले जो उनके लिए हानिकर नही, लाभकर हो। अनुकूल परिस्थितियो मे ऐसे हितकर परिवर्तन बाद की पीढ़ियों को मिलते चले जाते है, वे सग्रहीत होते जाते हैं, दृढ और पक्के होते चले जाते हैं।

समय बीतने पर हम पाते हैं कि सततिया अब अपने पूर्वजों से नही मिलती। उनकी प्रकृति ही बदल गई है, वे उन परिस्थितियो मे रह सकती हैं, जो उनके

पूर्वजो के लिए हानिकर थी। वे जीवन की नवीन परिस्थितियो के लिए अनुकूलि
अभ्यस्त हो गई हैं। इसमे जो हुआ, उसे प्राकृतिक वरण कहते हैं–जो प्राणी अ
को नई परिस्थितियो के लिए अनुकूलित नही कर सके, वे खत्म हो गये, जबी
जो कर सके, वे बचे रहे।

यह एक मिसाल है, जो तिमिर्याजेव ने सुझाई थी–जेरूसलम हाथीचक क
एक पौधा पहाड़ो पर लगाया गया। मैदानी हाथीचक का तना लबा और पत्ते मोटे
होते हैं। पहाडो मे यह एक नाटे पेड मे बदल गया, जिसके पत्ते जमीन से लगभग
लगकर फैले हुए थे।

यह परिवर्तन इसलिए आया कि हाथीचक ने अपने को नये पर्यावरण मे पाया–
पहाड़ो की जलवायु और मिट्टी मैदानो से बहुत भिन्न होती हैं। और यह परिवर्तन
उसके लिए अच्छा था। अब उसके लिए बर्फ मे अपने पत्ते छिपाना और ठडी हवाओ
और सर्दियों के पाले से त्राण पाना सुगमतर था।

पर्यावरण के परिवर्तन से सजीव प्राणी की प्रकृति मे परिवर्तन आने की ऐसी
ही कई मिसालें हैं।

मछलियो के उभयचरो मे क्रमिक रूपातरण से इसे स्पष्ट किया जा
सकता है।

इस सब की शुरूआत धीरे-धीरे सूखनेवाले प्रागैतिहासिक समुद्रो तथा झीलो
में हुई। मछलियो की वे जातिया, जो अपने-आपको एक नई जीवन-प्रणाली के अनकूल
ा ढाल सकी, मरती गईं। जो बच रही, उन्होने लबे-लबे समय के लिए पानी के
ना रहना सीख लिया था। सूखे के समय वे अपने को गाद से ढक लेती थी
पने परो को पैरो की तरह चलाते हुए कीचड के निकटतम गढो मे चली ज
ती थी।

प्रकृति ने सूखी जमीन पर सहायक हो सकनेवाले हर न्यूनतम शारीरिक परिवर्त
का उपयोग किया। इन मछलियो का गलफडा धीरे-धीरे फेफडो मे परिवर्तित ह
गया। जोडेदार पर पैरो मे विकसित हो गये।

इस प्रकार पानी के कुछ निवासियो ने धीरे-धीरे अपने-आपको जमीन के जीवन
के अनुकूल बना लिया।

परिवर्तनीयता ने मछली के परो, गलफडो तथा शारीरिक रचना को उसके
नये पास-पड़ोस के अनुसार बदल दिया।

वरण ने केवल उन्ही परिवर्तनो को बाकी रखा, जो सहायक थे, जबकि जो
हानिकर थे, वे खत्म हो गये।

आनुवशिकता ने इन सहायक परिवर्तनो को सग्रहीत और संपुष्ट करते हुए आने-
ली पीढियो को प्रदान कर दिया।

व० कोवालेव्स्की के अध्ययन के अनुसार घोडे के इतिहास से और भी ज्ञा-
र्धक जानकारी हासिल की जा सकती है।

इस पर विश्वास करना सचमुच कठिन है कि घोडा एक ऐसे छोटे से जतु से
न हुआ है, जो किसी समय घने जगलो मे घूमता हुआ गिरे हुए पेडो के तनो
ी सफाई के साथ गुजर जाया करता था। इस छोटे से जानवर के घोडे की तरह

खुर नही थे, बल्कि सिरे पर पाच उगलियोवाले पैर थे। इनसे जंगल मे असमतल ज़मीन पर अच्छी तरह पैर टिकाने मे सहायता मिलती थी।

कालातर मे महावन छितरकर मैदानो के लिए जगह करने लगे। घोडे के वनवासी पूर्वजो को अधिकाधिक खुले मैदानों मे आना पडता था। जब खतरा सिर पर होता, तो जगल की तरह छिपने को कोई ठौर न था। भागना ही बचने का अकेला साधन था। खुले मैदानो मे जंगल का खतरे से बचने का आरामतलबी का तरीका दुम दबाकर भागने मे बदल गया और पीछा किये जाने के दौरान कितने ही वनवासी जानवर खेत रहे। केवल सबसे लबी और तेज टांगोवाले जानवर ही जंगली जानवरो से बच सके, जीते रह सके।

हर ऐसे परिवर्तन को खोजने और सरक्षित करते हुए, जिसके कारण घोडा ज्यादा तेज दौड सकता था और हर ऐसी बात को त्यागते हुए जो दौड़ने मे किसी काम की न थी, एक बार फिर प्रकृति ने अपना वरण किया।

घोडे के पूर्वजो का जीवन ने जो पुनरावलोकन किया, उसने बताया कि तेज दौडनेवालो को अनेक उगलिया नहीं चाहिए। एक ही – अगर वह मजबूत और सख्त हो – काफी थी। धीरे-धीरे घोडो की तीन उगलियोवाली जाति और अत मे एक उगलीवाली जाति पैदा हुई। हम जिस घोडे को आज जानते हैं, उसकी बस एक बहुत लबी उगली (खुर) है।

घोडे ने जब जंगल का अपना पहला घर त्यागा, तो उसके केवल पैर ही नहीं बदले। उसकी सारी देह ही बदल गई। मिसाल के लिए, उसकी गरदन को ही ले लो। अगर उसकी टागे लबी हो जाती, जबकि गरदन छोटी ही रहती, तो घोडा अपने पैरों के नीचे की घास तक न पहुच पाता। ऐसा नहीं हुआ, क्योकि प्रकृति ने छोटी गरदनवाले घोड़े को अस्वीकार कर दिया, जैसे वह छोटी टागोंवाले घोड़ो को पहले ही अस्वीकार कर चुकी थी।

और घोडे के दांत? वे भी बदल गये। मैदानो मे घोड़े को मोटे, खुरदरे पौधे खाने पड़ते थे, जिन्हे उसे पहले अपने चर्वणदतों से पीसना पड़ता था। और इसलिए उसके दात भी बदल गये। अब घोड़ो के दात बाकायदा चक्की के पाटो और सिलबट्टो की तरह के होते हैं और वह भूसे तक को पीस सकता है।

घोड़े की टागो और उगलियों, गरदन और दांतो को बदलने के इस ज़बरदस्त काम के पूरा होने में पाच करोड़ वर्ष लगे। और न जाने कितने ही जानवर इस प्रक्रिया मे जाते रहे!

इसका मतलब है कि समुद्र को भूमि से और जंगल को मैदानों से अलग करनेवाली बाड़ें स्थायी नही हैं। सागर सूख जाते हैं या भूमि को प्लावित कर देते हैं। मैदान रेगिस्तानो मे बदल जाते हैं। समुद्र के निवासी सूखी भूमि पर रेग आते हैं। जगल के निवासी मैदानो के वासी हो जाते हैं। लेकिन जानवर के लिए अपनी नन्ही-सी दुनिया को छोड़ना, अपने को अपने पास-पडोस से बांधनेवाली जंजीरो को तोड़ना कितना कठिन है! इन जजीरो को तोड़ने के बाद भी वह आज़ाद नही होता, क्योंकि वह महज़ एक अदृश्य पिंजरे से दूसरे मे चला आता है।

जब घोडे ने जंगल को छोड़ मैदानों को अपनाया, तो वह वनवासी नही रहा

और इसके बजाय मैदानो का निवासी बन गया। मछली की एक जाति ने जहा एक बार पानी के बाहर अपना रास्ता निकाला और सूखी भूमि पर आ गई, फिर वह कभी समुद्र को नही लौटी, क्योकि ऐसा करने के लिए उसे फिर बदलना पडता। समुद्र को लौटकर जानेवाली कितनी ही स्थलीय जातियो के साथ बिलकुल यही हुआ। उनके पैर फिर परो मे परिवर्तित हो गये। ह्वेल को, मिसाल के लिए, इतना ज्यादा "मछलीनुमा" होना पड़ा कि जिन लोगो को उसके मूल का पता नही, वे उसे मछली समझते हैं, यद्यपि असल मे वह स्तनधारी ही है।

आदमी आजादी की राह पर

दुनियर मे जतुओ की कोई दस लाख भिन्न-भिन्न जातिया है और हर जाति अपनी ही छोटी-सी दुनिया मे रहती है, जिसके लिए वह सबसे अधिक अनुकूलित होती है।

उन जगहो पर, जहा किसी एक जाति को यह अदृश्य नोटिस मिलेगा – "प्रवेश वर्जित है!" वही दूसरी जाति को मिलेगा – "स्वागतम्!"

जरा कल्पना तो करो, सफेद रीछ अगर अपने को जगल मे पाये, तो क्या होगा! उसका दम घुट जायेगा, क्योकि उसका समूर (बालदार चमड़ा) उतारा नही जा सकता। लेकिन हाथी जैसा उष्णकटिबधीय प्राणी आर्कटिक के हिम मे जम जायेगा, क्योकि – जैसा कि गरम जगह मे अपना जीवन बितानेवालो के लिए ठीक भी है – उस पर उसकी खाल के अलावा और कुछ नही होता।

धरती पर केवल एक ही जगह है जहा सफेद भालू और हाथी पडोसी होते हैं और जहा तुम्हे दुनिया के सभी भागो के जानवर देखने को मिल जाते हैं। यहा मैदानी जानवर जगलों मे रहनेवाले जानवरो से हाथ-दो हाथ के फासले पर ही रहते है और उन्ही के पडोस में पहाडी जानवर भी होते है। यह जगह है चिडियाघर।

चिडियाघर मे दक्षिण अफ्रीका आस्ट्रेलिया के बराबर मे है और आस्ट्रेलिया उत्तर अमरीका के। जानवर दुनिया भर से आये हैं। लेकिन वे अपने-आप नही आये। आदमी ने उन्हे यहां एक साथ इकट्ठा किया है।

जरा सोचो तो, इन सब को सुखी रखना भी कितनी मुसीबत का काम है! हर जानवर अपनी ही नन्ही दुनिया का आदी है। और आदमी को उसके लिए चिडियाघर मे ऐसी परिस्थितिया पैदा करनी पडती है, जो बिलकुल उसी की अपनी नन्ही दुनिया जैसी हो।

कही तलैया मे यहा जरा-सा सागर होना चाहिए, तो वहा जरा-सा रेगिस्तान।

जानवरो को खिलाया जाना चाहिए, उन्हे एक-दूसरे को चट कर जाने से रोकना चाहिए। सफेद रीछ को नहाने के लिए ठडा पानी चाहिए; बदरो को गरमी चाहिए; शेर को रोज भरपेट कच्चा मास मिलना चाहिए, तो उकाब को अपने पख फैलाने की जगह की जरूरत है।

मैदानो, जगलो, पहाडो, रेगिस्तानो और समुद्रो के जतुओ को कृत्रिम रूप से साथ लाकर रखने के लिए मनुष्य को उन्हे मृत्यु से बचाने के लिए कृत्रिम परिस्थितिया प्रदान करनी पडी।

मनुष्य स्वयं किस प्रकार का जानवर है–मैदानों का जानवर, या जंगलों का, या पहाड़ों का?

क्या जंगल में रहनेवाले मनुष्य को "जंगली आदमी" और दलदल में रहनेवाले को "दलदली आदमी" कहा जा सकता है?"

बिलकुल नहीं।

जो आदमी जंगल में रहता है वह मैदानों में भी रह सकता है। और जो आदमी दलदल में रहता है, उसे तो सूखी जगह जाकर रहने में खुशी ही होगी।

आदमी कहीं भी रह सकता है। धरती पर मुश्किल से ही ऐसी जगहें बाक़ी बची हैं, जहां वह नहीं पहुंच सकता, या जहां यह अदृश्य नोटिस लगा हो–"मनुष्य का आना वर्जित है!" आर्कटिक अन्वेषक तैरते हिमखंडों पर रहते हैं। अगर उन्हें अचानक उष्णतम रेगिस्तानों में भी जाना पड़े, तो वे ऐसा बिना किसी कठिनाई के कर लेंगे।

आदमी अगर स्तेपी से जंगल में या जंगल से मैदानों में जाकर रहना चाहे, तो उसे अपने पैर, हाथ और दांत नहीं बदलने पड़ते। और महज़ इसलिए कि उसका बदन समूर से नहीं ढका है, वह दक्षिण से उत्तर जाने पर ठंड से मर नहीं जायेगा।

समूर के कोट, टोप और जूते उसे ठंड से वैसे ही बचा लेंगे, जैसे जानवर का समूर उसे बचाता है।

आदमी ने घोड़े से कहीं तेज़ चलना सीख लिया है, लेकिन ऐसा करने के लिए उसे अपनी एक भी उंगली को नहीं तजना पड़ा।

आदमी ने मछली से कहीं तेज तैरना सीख लिया है, मगर इसके लिए उसे पहले अपने हाथ-पैरों की परों से अदला-बदली नहीं करनी पड़ी।

सरीसृपों को पक्षी बनने में लाखों वर्ष लग गये। उन्हें इस परिवर्तन की ऊंची कीमत चुकानी पड़ी, क्योंकि इस प्रक्रिया में उन्हें अपने अगले पंजे गवाने पड़े, जो पंख बन गये। आदमी ने कुछ ही शताब्दियों के भीतर उड़ना सीख लिया है, लेकिन इसके लिए उसे पहले अपने हाथ नहीं गवाने पड़े।

आदमी ने बिना बदले उन बाड़ों से गुज़रना सीख लिया है, जिनमें जानवर कैद हैं।

आदमी उन ऊंचाइयों तक जा सकता है, जहां उसके सांस लेने को हवा नहीं है, फिर भी वह हंसता-खेलता धरती पर वापस आ जाता है।

जब समतापमंडलीय उड़ाकों ने ऊंचाई पर जाने के सभी पुराने रेकार्डों को तोड़ा, तो उन्होंने जीवन की गंतव्य ऊंचाई को उठा दिया और सजीव प्राणियों द्वारा आवासित संसार की सीमाओं को पार कर लिया।

पशु और पक्षी प्रकृति पर पूर्णतः आश्रित हैं। गणित में किसी समस्या का उत्तर समस्या के निबंधनों पर निर्भर रहता है। प्रकृति में भी यही बात है। हर जंतु एक समस्या है, जिसे जीवन ने सफलतापूर्वक हल कर दिया है। समस्या के निबंधन हैं हर जंतु के लिए जीवन की आवश्यक परिस्थितियां, जबकि उत्तर है पंजों, दांतों, पंखों, चोंचों, नखरों, आदतों और प्रवृत्तियों का एक विस्तृत सम्यूहन। उत्तर इस पर निर्भर रहता है कि जंतु को कहां और कैसे रहना है–नमकीन या मीठे पानी

में या धरती पर, तट पर या समुद्र में, सागर की तली में या सतह के पास, उत्तर में या दक्षिण में, पहाड़ों पर या घाटियों में, धरती की सतह पर या ज़मीन के भीतर, स्तेपी में या जगलों में। दूसरा महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि जतु के पडोसी कौन हैं।

जानवर अपने पर्यावरण पर पूर्णत आश्रित है।

लेकिन मनुष्य अपनी अनुकूल परिस्थितियों का स्वय निर्माण करता है। अधिकाधिक अवसरो पर वह प्रकृति की पुस्तक को उसके हाथो से झपट लेता है और उन निबधनो को काट देता है जो उसे अच्छे नही लगते।

प्रकृति की पुस्तक कहती है–"रेगिस्तान मे पानी बहुत कम है।" लेकिन हम जब रेगिस्तानो के पार गहरी नहरे ले जाते हैं, तो हम इस मान्यता का खडन कर देते हैं।

प्रकृति की पुस्तक कहती है–"उत्तरी प्रदेशो की ज़मीन अनुर्वर है।" हम मिट्टी मे खाद मिलाकर इसे बदल देते हैं। हम वर्षानुवर्षी खाद्य घासों और फलियो को उगाकर भी धरती को उपजाऊ बना लेते हैं।

प्रकृति की पुस्तक कहती है–"सरदियो मे ठड और रात मे अधेरा होना है।" लेकिन आदमी इन शब्दो की ओर जरा भी ध्यान नही देता और अपने घर को सरदियो मे गरम और रात मे प्रकाशपूर्ण बना लेता है।

हम अपने पर्यावरण को सतत परिवर्तित कर रहे हैं।

हमारे चारो तरफ जो जगल हैं, वे वृक्षारोपण और वनो की कटाई के फलस्वरूप अपना मूल रूप कभी का गवा चुके हैं।

हमारे स्तेपी पहले जैसे विजन, वीरान नही हैं। मनुष्य ने उन्हे खेती के लायक बना लिया है।

हमारी अब की वनस्पतिया–रई, गेहू, सेब, नाशपाती–जगली वनस्पति से बड़े ही हैं, जो कभी अछूती ज़मीन पर उगती थी।

प्रकृति मे तुम्हे भला "सेबिया-नाशपाती" कहा मिलती, या एक ऐसा फल कहा मिलता जो आधा मीठी चेरी और आधा विहग चेरी हो, या रूसी वैज्ञानिक और उद्यानविद इवान मिचूरिन द्वारा सर्जित अन्य अद्भुत फल ही कहा मिल पाते? उनकी शिक्षा पर चलकर अब वैज्ञानिक प्रकृति की परिवर्तनीयता, आनुवशिकता और वरण को इस प्रकार निदेशित कर सकते है जो मनुष्य के लिए उपयोगी है।

घोडे, गाय और भेड जैसे घरेलू जानवर जगली अवस्था मे नही मिलते। मनुष्य ने ही इनकी उत्पत्ति और वशवृद्धि की है।

मनुष्य ने जगली जानवरो तक को अपने तरीके बदलने के लिए मजबूर कर दिया है। कुछ अपने भोजन की तलाश मे मनुष्य के निवास और खेतो के बहुत पास रहते हैं, तो अन्य मनुष्य से बचने की चेष्टा मे और भी अधिक वन्य प्रदेशो मे चले गये हैं। मनुष्य के आगमन के पूर्व उनके पूर्वज कभी इन इलाको मे नही रहे थे। आनेवाले जमाने मे मनुष्य को अछूती प्रकृति देखने के लिए विशेष सरक्षित क्षेत्रों की यात्रा करनी होगी, क्योकि मनुष्य धरती का चेहरा पूरी तरह बदल चुका होगा।

इन सरक्षित स्थानों की सीमाएं निर्धारित करते समय हम मानो प्रकृति से कहते हैं – "इसके भीतर के प्रदेश की स्वामिनी हम आपको रहने देते हैं, लेकिन इस लकीर से बाहर की हर चीज हमारी है।"

मनुष्य लगातार प्रकृति का स्वामी बनता जा रहा है।

हमेशा से ऐसा न था।

हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वज प्रकृति के उसी प्रकार के दास थे, जैसे कि धरती पर रहनेवाले अन्य जानवर।

अपने पुरखों से मुलाक़ात

लाखों वर्ष पहले हमारे मौजूदा वनों और उपवनों की जगह दूसरे पेड़ों, कुंजों और घासोंवाले दूसरे ही जगल थे।

इन प्रागैतिहासिक वनों मे भोज, वागल्लाय (लिंडन) और मेपल के पेड़ और लॉरेल (बे वृक्ष), मिर्टल (विलायती मेहदी) और मैग्नोलिया के वृक्ष साथ-साथ ही उगा करते थे। शबी के पेड़ो पर अगूर की बेले लिपटी होती थी और बेंत के पडोस मे कपूर और अम्बर के पेड़ हुआ करते थे।

विशाल भीम वृक्षों के बराबर खड़े शाहबलूत के पेड बौने जैसे लगते थे।

अगर हम अपने मौजूदा जगलो की तुलना मकानो से करे, तो ये प्रागैतिहासिक वन गगनचुबी अट्टालिकाओं की तरह थे।

"अट्टालिका" की ऊपरी मजिले प्रकाश और कोलाहल से परिपूर्ण थी। वहा विशाल रग-बिरगे फूलो के बीच चटकीले रग के परोवाले पक्षी यहा-वहा उडा करते थे और उनकी चहचहाहट जगल मे गूजा करती थी, जबकि वानर डाल से डाल पर छलागे लगाते रहते थे।

देखो, वानरो का वह झुड डालियो मे इस तरह दौडा चला जा रहा है, मानो पुल पार कर रहा हो। माए चबाये हुए फलो से अपने नन्हे-मुन्नो के मुहो को भरते हुए उन्हे अपनी छाती से चिपटा लेती है। जो ज़रा बडे हैं, वे अपनी माओ की टागों को दबोच लेते हैं।

वानरो की यह कौनसी नस्ल है? आज तुम्हे ये किसी भी चिड़ियाघर मे नहीं मिलेगे।

ये वही वानर थे, जिनसे मनुष्य, चिपाजी और गोरिल्ला के सामान्य पूर्वजों का उद्भव हुआ था। हम अभी-अभी अपने प्रागैतिहासिक पूर्वजों से मिले हैं।

ये सभी जगल की सबसे ऊपरी मजिल पर रहा करते थे। वहा, ज़मीन से खूब ऊचाई पर वे डाल-डाल पर इस तरह चलते हुए कि जैसे वे पुल, छज्जे और गलियारे हो, एक पेड से दूसरे पेड तक जाता करते थे।

जगल ही उनका घर था। रात के समय वे पेड़ो की दुशाखो मे अटके डालियों के बडे-बडे मचानो पर बसेरा लिया करते थे।

जगल ही उनका किला था। ऊपरी मजिलो पर वे अपने सबसे भयकर शत्रु-असिदंत व्याघ्र – के लबे, छुरे जैसे पैने दातो से छिपा करते थे।

जगल ही उनका गोदाम था। यहा, सबसे ऊपरी शाखाओ मे उनके भोजन-

फलो और गिरीफलो, जिन पर वे गुजर करते थे—के भडार थे।

लेकिन जगल की छत पर रह पाने के लिए उनके लिए यह जानना जरूरी था कि डाल से डाल पर कैसे कूदे, पेडो के तनो पर कैसे तेज़ी के साथ चढे-उतरे और एक पेड से दूसरे पेड़ पर कैसे कूदे। उन्हे फल तोडने और गिरीफल फोडने मे सक्षम होना जरूरी था। उनके लिए दक्ष उगलियो, तेज आखो और मज़बूत दातो से लैस होना जरूरी था।

कितनी ही जजीरो ने हमारे पुरखो को जगल से, और जगल ही से नही बल्कि उसकी सबसे ऊपरी मजिलो से जकड रखा था। मनुष्य ने इन जजीरो को तोडा, तो कैसे? जगल के प्राणियो मे अपने पिजरे को छोडने और अपने घर की सीमाओ के बाहर जाने का साहस कैसे आया?

हमारे नायक के दादा-परदादा और भाई-भतीजे

पुराने जमाने में जब कोई लेखक किसी आदमी की आपबीती और जगबीती बताना शुरू करता था, तो वह आम तौर पर अपनी किताब के पहले कुछ अध्याय अपने नायक के परिवार और पुरखो के विस्तृत विवरण पर लगाता था।

कुछ ही पन्ने पढने के बाद पाठक को पता चल जाता था कि जवानी मे उसकी नानी कितने सुदर कपडे पहना करती थी और शादी के फौरन पहले उसकी मा ने क्या सपना देखा था। इसके बाद ससार मे नायक के आगमन, उसके पहले दात, पहले शब्दो, पहले कदम और पहली शरारतो का बडा लबा वर्णन होता था। दस अध्यायो के बाद लडका स्कूल मे पहुचता। दूसरे खड के अत मे उसे प्रेम होता, तीसरे खड मे कितनी ही घटनाओ के बाद, वह अत मे अपनी प्रेमिका के साथ विवाह-सूत्र मे बधता और कहानी का अत अनिवार्यत एक उपसहार के साथ होता, जिसमे वयोवृद्ध नायक और उसकी श्वेतकेशा पत्नी को अपने सेब जैसे लाल गालोवाले पोते को अपना पहला डगमगाता कदम रखते प्यार भरी आखो से निहारते दिखाया जाता।

हम भी तुम्हे मनुष्य की जीवन-गाथा और कारनामो के बारे मे बताना चाहते हैं। और, पुराने जमाने के उपन्यासकारो के उदाहरण पर चलते हुए, हम भी तुम्हे अपने नायक के पिता-पितामही के बारे मे, उसके परिवार और नाते-रिश्तेदारो के बारे मे, धरती पर उसके आगमन के बारे मे, उसने चलना, बात करना, सोचना कैसे सीखा – इसके बारे मे, उसके सघर्षो, उसके सुखो-दुखो, उसकी जयो-पराजयो के बारे में बताना चाहते हैं। लेकिन हम आरभ मे ही स्वीकार कर लेते हैं कि हम अपने को बडी मुश्किल मे पा रहे हैं।

अपने नायक की "नानी" का, उसी वानर-नारी का, जिससे हमारी जाति का उद्भव हुआ है, वर्णन हम कैसे कर सकते हैं, जबकि उसे मरे लाखो वर्ष बीत चुके है? हमारे पास उसकी तसवीर भी नही है, क्योकि हर कोई जानता है कि वानर तसवीरे नही बना सकते। अजायबघर मे भी यह जानना मुश्किल होता कि वह देखने मे कैसी लगती थी, क्योकि जो भी कुछ बचा है, वह है अफ्रीका, एशिया तथा यूरोप के विभिन्न भागो मे प्राप्त कुछ हड्डिया और थोडे से दात।

लेकिन अपने नायक के "भाई-भतीजो" से परिचय प्राप्त करने की सभावना ज्यादा अच्छी है।

जबकि मनुष्य अपने प्रागैतिहासिक अतीत के उष्णकटिबधीय जगलो को कभी का छोड चुका है और अब सही मानों मे धरती पर जमकर खड़ा है, उसके निकटतम सबधी – गोरिल्ला, चिपाजी, गिब्बन और ओरग-उटान – जगली जानवर ही बने रहे है। लोगो को इन ग़रीब नातेदारो की याद दिलाया जाना हमेशा अच्छा नही लगता। कुछ तो इससे भी इनकार करने की कोशिश करते हैं कि ये दूर के नातेदार हैं भी। ऐसे भी लोग हैं, जो यह समझते है कि इसका इगित करना भी पाप है कि मनुष्य और चिपाजी की एक ही प्रागैतिहासिक नानी थी।

लेकिन सच को छिपाया नही जा सकता। हम इस किताब को ऐसे तथ्यो से

भर सकते थे, जो मनुष्य की वानरों के साथ नातेदारी को सिद्ध कर देते। लेकिन विषय की लंबी, गरमागरम बहस के बिना भी, जो कोई भी चिड़ियाघर में चिंपाज़ियों और ओरंग-उटानों को देखने में एक घंटा लगा देगा, वह मनुष्य और इन वानरों के पारिवारिक सादृश्य से चकित हो जायेगा।

हमारे नातेदार राफ़ेल और रोज़ा

कई वर्ष हुए, राफेल और रोज़ा नामक दो चिंपाज़ियों को लेनिनग्राद के पास कोल्तुशी (अब पावलोवो) ग्राम में स्थित विख्यात रूसी वैज्ञानिक इवान पावलोव की प्रयोगशाला में लाया गया।

लोग अपने जंगलवासी नातेदारों के प्रति बहुत सहृदय नही होते और आम तौर पर उन्हे सीधे पिंजरों में डाल देते हैं। लेकिन इस बार अफ़्रीकी जंगल के इन अतिथियों का बड़ा सत्कार किया गया। उन्हें रहने के लिए एक अलग मकान दिया गया। उसमे एक शयनागार, एक भोजनकक्ष, एक खेलने का कमरा और एक गुसलखाना भी था। शयनागार में आरामदेह बिस्तर और छोटी मेजे थीं। भोजनकक्ष मे मेज़ पर सफेद कपड़ा बिछा था। अलमारी के खाने भोज्य पदार्थों से भरे थे।

इस आरामदेह घर मे कोई भी चीज़ इस बात का आभास नही देती थी कि इसमे वानर निवास करनेवाले थे। खाना प्लेटों में परोसा जाता, खाना खाने के लिए हमेशा चम्मच होते। रात को बिस्तर बिछाये जाते और तकिये फुला दिये जाते। ठीक है कि कभी-कभी अतिथि शिष्टाचार न बरतते और फलो की तरकारी को सीधे प्लेटो से सुड़पने लगते, और रात में अपने सिर तकियों पर रखने के बजाय, कभी-कभी तकियो को सिर पर रख लेते।

फिर भी, रोज़ा और राफ़ेल अगर बिलकुल ही मनुष्यो की तरह नहीं, तो काफ़ी-कुछ उन्ही जैसा आचरण करते थे।

मिसाल के तौर पर, रोज़ा अलमारी की चाभियों के गुच्छे का किसी भी अन्य गृहिणी जैसा ही इस्तेमाल कर लेती थी। आम तौर पर चाभियां चौकीदार की जेब मे रहती थी। रोज़ा पीछे से चुपके से उसके पास तक आ जाती और उन्हे उससे झपट लेती। पलक मारते वह अलमारी तक पहुंच जाती। फिर, एक कुरसी पर खड़ी होकर वह ताले मे सही चाभी लगाती। कांच के पार वह जायकेदार खुबानियों के ऊपर रखे अंगूर के गुच्छे देख सकती थी। चाभी घुमाने के साथ ताला खुल जाता और रोज़ा के हाथ मे अंगूर का एक गुच्छा आ जाता।

हमें राफ़ेल को नही भुला देना चाहिए। पढ़ाई के समय उसका क्या हुलिया होता था! उसके प्रशिक्षण-साधन खुबानियां भरी एक बाल्टी और विभिन्न आकारों के सात ब्लाक थे। लेकिन ये ऐसे ब्लाक नही थे, जिनसे बच्चे खेलते हैं। राफ़ेल के ब्लाक कहीं बड़े थे – उनमें से सबसे छोटा पायदान के बराबर था, और सबसे बड़ा तिपाई जितना था। खुबानियों की बाल्टी छत से लटकी रहती थी, और राफ़ेल की समस्या थी खुबानियों तक पहुंचना और उन्हे खाना।

आरंभ में वह समस्या को हल न कर सका।

जगल के अपने घर मे उसे प्राय मनपसद फल को पाने के लिए काफी ऊचा चढ़ना पडता था। लेकिन यहां फल डाल पर तो था नही – वह अधर मे लटका था। चढने के लिए बस सात ब्लाक थे। लेकिन अगर वह सबसे बडे ब्लाक के ऊपर भी चढ जाता, तो भी वह खूबानियो तक नही पहुच पाता था।

फलो तक पहुचने की कोशिश मे ब्लाको की उलटा-पलटी करते हुए राफेल ने एक खोज की – अगर वह ब्लाको को एक-दूसरे के ऊपर रख देता है, तो इससे वह खूबानियो के ज्यादा पास पहुच जाता है। थोडा-थोडा करके – पहले वह तीन, फिर चार और फिर पाच ब्लाको का पिरामिड बनाने मे सफल हो गया। यह कोई आसान काम न था, क्योंकि वह उन्हे मनमाने ढग से एक-दूसरे पर न रख सकता था। वे एक विशेष क्रम मे ही रखे जा सकते थे – सबसे पहले सबसे बडा, फिर उससे छोटा और फिर इसी प्रकार क्रमानुसार अन्य।

कितनी ही बार राफेल ने बडे ब्लाको को छोटो पर चुनने की कोशिश की। तब सारा ही ढेर डगमगाने लगता और गिरने को हो जाता। लगता था कि अगले ही क्षण ऊपर राफेल सहित सारा ही ढेर नीचे आ गिरेगा, लेकिन ऐसा कभी नही हुआ, क्योंकि आखिर वह था तो वानर ही और इसका मतलब हुआ कि वह चुस्त और फुर्तीला था।

आखिर, समस्या हल हो ही गई। राफेल ने सातो ब्लाको को आकार के अनुसार जमा दिया, मानो वह उन पर पुती सातो सख्याए पढ सकता था।

जब वह बाल्टी तक पहुंच गया, तो वह झोका खाते पिरामिड के ऊपर शिखर ही पर बैठ गया और मेहनत से प्राप्त की खूबानियो को मजे ले-लेकर खाने लगा।

और कौनसा जानवर इस मानव-सुलभ तरीके पर चल सकता था? क्या हम किसी कुत्ते के पिरामिड बनाने की कल्पना कर सकते हैं? और तिस पर भी कुत्ता बडा चतुर जानवर है।

राफेल को काम करते देखनेवाले सभी लोग मनुष्य से उसका सादृश्य देख हैरत मे आ गये थे। वह ब्लाक उठाता, उसे अपने कधे पर लादता और उसे एक हाथ से सहारा देता हुआ पिरामिड तक ले जाता। लेकिन अगर वह गलत आकार का ब्लाक होता, तो राफेल उसे नीचे रख देता और उस पर बैठ जाता, मानो सोच मे डूबा हुआ हो। कुछ क्षण के आराम के बाद वह अपनी गलती सुधारने के लिए फिर काम मे लग जाता।
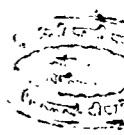
क्या चिंपांजी आदमी बन सकता है?

लेकिन सवाल है – क्या चिंपाजी को चलना, बोलना, सोचना और आदमी की तरह काम करना नही सिखाया जा सकता?

बहुत वर्ष हुए, विख्यात पशु-प्रशिक्षक व्लादीमिर दूरोव इसका स्वप्न देखा करते थे। उन्होंने अपने प्रिय चिंपाजी मीमुस को सिखाने मे कई महीने लगाये। मीमुस बडा ही तेज शिष्य था – उसने चम्मच से खाना, नैपकिन का उपयोग करना, कुरसी पर बैठना, सूप को मेजपोश पर गिराये बिना खाना और बर्फगाडी पर बैठकर ढाल के ऊपर से उतरना तक सीख लिया।

मगर वह इसान कभी नही बन सकता था।

इसमे अचरज की कोई बात नही, क्योंकि आदमी और वानर के रास्ते लाखो वर्ष पहले अलग हो गये थे। मनुष्य के प्रागैतिहासिक पूर्वज पेड़ों से जमीन पर उतर आये, उन्होंने दो पैरो पर सीधे चलना सीख लिया और इस तरह अपने हाथों को काम के लिए आजाद कर दिया। लेकिन चिपाजी के पूर्वज सदा पेड़ों पर ही रहे और पेड़ो के जीवन के और भी अधिक अनुकूलित हो गये।

यही कारण है कि चिपाजी का बदन आदमी की तरह का नही है। उसके हाथ अलग तरह के हैं, उसके पैर अलग तरह के हैं, उसका मस्तिष्क अलग तरह का है, उसकी जीभ अलग तरह की है।

चिपाजी के हाथ की तसवीर को ध्यान से देखो। यह आदमी के हाथ से जरा भी नही मिलता। चिपाजी का अगूठा उसकी कनिष्ठिका से छोटा होता है और दूसरी उगलियो के साथ उसी कोण पर नही होता, जिस पर हमारा होता है। लेकिन अगूठा हमारी उगलियो मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण, उन पाच कामगरो की टोली मे, जिसे हाथ कहते है, सबसे ज्यादा जरूरी होता है। अंगूठा बाकी चार में से किसी भी एक उगली के साथ या उन सबके साथ मिलकर काम कर सकता है। यही कारण है कि आदमी का हाथ जटिलतम औजारो का भी इतनी निपुणता के साथ उपयोग कर सकता है।

जब चिपाजी पेड से फल तोडना चाहता है, तो वह आम तौर पर डाल को अपने हाथों से पकडता है और फल को पैर की उगलियो से तोड़ता है। जब चिपाजी जमीन पर चलता है, तो वह अपने हाथों की मुड़ी हुई उगलियो पर टिका है। इसका मतलब है कि वह अकसर अपने हाथों को पैरों की तरह और पैरो को हाथों की तरह इस्तेमाल करता है।

लेकिन जो पशु-प्रशिक्षक अपने चिपाजियो को मनुष्य बनाना चाहते हैं, वे यह भूल जाते है कि हाथों और पैरो के फर्क के अलावा दोनो के बीच एक और बहुत महत्वपूर्ण अतर है। वे भूल जाते हैं कि चिपाजी का मस्तिष्क मनुष्य के मस्तिष्क से बहुत छोटा और कहीं कम विकसित होता है।

इवान पावलोव ने मानव-मस्तिष्क के अध्ययन मे कई वर्ष लगाये, और रोजा तथा राफेल के आचरण मे उनकी दिलचस्पी थी। उन्होंने उनका निकट से अध्ययन करने के लिए "वानर घर" मे कई-कई घटे बिताये। वे एकदम निर्धानपूर्ण आचरण करते थे। वे कोई काम करना शुरू करते, फिर अचानक ही उसे और उसके बारे मे भूल जाते और किसी और चीज मे दिलचस्पी लेने लगते।

मिसाल के तौर पर, राफेल अपना पिरामिड बनाने मे लगा होता और अपना एकाग्रचित्त नजर आता। अचानक उसकी निगाह किसी गेंद पर पड़ती, वह अपने काम के बारे मे बिलकुल भूल जाता और अपने सबसे पास वाले हाथ से गेंद को उछालने लगता। क्षण भर के बाद जब वह फर्श पर रेंगती किसी मक्खी को देखता, तो गेंद के बारे मे भूल जाता।

एक बार इस हरकत को देखते हुए पावलोव ने कहा

"उफ, कैसी गडबड है!"

हा, वानरो की गडबडी भरी गतिविधिया उनके मस्तिष्को की गडबडी भरी कार्यविधि का वास्तविक प्रतिबिंब होती हैं, जो मानव-मस्तिष्क की व्यवस्थित और एकाग्रतापूर्ण कार्यविधि से एकदम भिन्न होती है। और इतने पर भी चिपाजी काफी समझदार है, जगल के, यानी उस नन्ही दुनिया के, जिससे वह इतनी सारी अदृश्य जजीरो से बधा हुआ है, जीवन के लिए भली भाति अनुकूलित है।

एक बार एक फिल्म-निर्माता उस मकान मे आया, जिसमे रोज़ा और राफेल रहते थे। वह उनके बारे मे एक फिल्म बनाना चाहता था। फिल्म की पटकथा के अनुसार बदरो को कुछ देर के लिए बाहर छोड दिया जाना था। बाहर छोडे जाने के साथ ही वे सबसे पास के पेड पर जा चढे और उसकी डालियो पर मजे मे झूलने लगे। पेड पर उन्हे अपने आरामदेह मकान की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक लगा।

अफ्रीका मे चिपाजी जगल की सबसे ऊपरी मजिल पर रहता है। यह पेड पर अपना बसेरा बनाता है। अपने दुश्मनो से बचने के लिए यह पेड पर चढ जाता है। पेडो पर यह फल और गिरीफल पाता है, जो इसके भोजन हैं।

पेडो के जीवन का यह इतना अनुकूलित है कि पेड के खडे तने पर यह समतल जमीन पर चलने की अपेक्षा ज्यादा आसानी से चढ-उतर सकता है। तुम्हे चिपाजी ऐसी जगहो पर कभी नही मिलेगा, जहा जगल नही हैं।

एक बार एक वैज्ञानिक यह देखने के लिए कि अपने प्राकृतिक पास-पडोस मे चिपाजी कैसे रहते है, अफ्रीका मे कैमरून गये।

उन्होने कोई दर्जन भर चिपाजी पकड लिये और उन्हे घर जैसा ही महसूस कराने के लिए अपने फार्म के पास के जगल मे छोड दिया। मगर पहले उन्होने एक अदृश्य पिजरा बनवा दिया, जिससे वे भाग न सके। अदृश्य पिजरा दो साधारण औजारो–कुल्हाडी और आरे–की सहायता से बनाया गया था।

पहले लकडहारो ने जगल का एक छोटा-सा द्वीप छोडकर उसके इर्द-गिर्द के सभी पेडो को काट दिया। वैज्ञानिक ने अपने वानरो को वृक्षो के इस छोटे-से द्वीप पर आजाद कर दिया।

उनकी योजना अच्छी सिद्ध हुई, क्योकि वानर वनवासी जतु हैं। इसका मतलब है कि अपनी आज़ाद इच्छा से वे कभी जगल को नही छोडेगे। वानर खुले मैदान मे अपना घर नही बना सकता, जैसे कि सफेद रीछ रेगिस्तान मे अपना घर नही बना सकता। लेकिन अगर चिपाजी जगल को नही छोड सकता, तो उसका दूर का नातेदार–मनुष्य–उसे कैसे छोड पाया?

हमारा नायक चलना सीखता है

हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वज को अपने पिजरे को तोड निकलने और जगलों को छोडने के लिए आज़ाद होने और स्तेपियो और वृक्षहीन मैदानो मे अपना घर बनाने मे लाखो साल लग गये।

वृक्षवासी जतु को उन जजीरो को तोडने के लिए, जिन्होने उसे जगल

पैरों ने हाथों को काम के लिए कैसे आजाद किया

जब हमारे प्रागैतिहासिक पुरखे पेडो पर रहते थे, उन्होंने धीरे-धीरे अपने हाथों का पैरो से अलग कामो के लिए उपयोग करना सीख लिया। वे अपने हाथों का इस्तेमाल फल और गिरीफल तोडने और दुशाखे तनो में अपना घर (घोंसला) बनाने के लिए किया करते थे।

लेकिन जो हाथ गिरीफल पकड सकता था, वह डडा या पत्थर भी पकड सकता था। और डडा या पत्थर पकडे हुए हाथ का मतलब है कि वही हाथ ज्यादा लबा और मजबूत हो गया है।

पत्थर ऐसे गिरीफल को भी तोड सकता था, जिसे फोडना मुश्किल था। डडा जमीन से किसी स्वादिष्ट मूल को उखाड सकता था।

और इसलिए प्रागैतिहासिक मनुष्य ने अपना भोजन जुटाने के लिए इन औजारो का अधिकाधिक उपयोग करना शुरू कर दिया। डडे से खोदकर वह कद और मूल निकाल सकता था। पेडों के पुराने ठूठो को भारी पत्थरो से पीटकर वह भीतर कीडे-मकोडो की इल्लियो और लार्वा तक पहुच सकता था। लेकिन इसलिए कि वह अपने हाथो से काम कर सके, उसे उन्हें उनके दूसरे काम–चलने के काम–से मुक्त करना आवश्यक था। उसके हाथ जितने अधिक व्यस्त होते, उतना ही अधिक उसके पैरो को अकेले चलने की समस्या को हल करना पडता।

इस प्रकार, उसके हाथो ने उसके पैरो को चलने के लिए मजबूर कर दिया और उसके पैरों ने उसके हाथों को काम के लिए आजाद कर दिया।

भी ज्यादा अच्छी तरह सीख लिया। जो चढ़ने मे कम निपुण थे और अपने को ड़ो की फुनगियो के जीवन के लिए आसानी से अनुकूलित न कर सके, उनमे से वल सबसे बडे और शक्तिशाली वानर ही बच पाये। लेकिन वानर जितना भारी ौर बड़ा होता था, पेडो का जीवन उसे उतना ही मुश्किल लगता था। इसलिए न बड़े वानरो को पेडो पर से ज़मीन पर आने के लिए मजबूर होना पडा। गोरिल्ला भी तक जगल की सबसे निचली मंजिल पर ही रहता है। उसके हथियार न डडे और न पत्थर, बल्कि उसके शक्तिशाली जबडो से निकलनेवाले बड़े-बड़े ांत ही हैं।

इस प्रकार, आदिम-मानव और उसके दूरवर्ती सबधी सदा-सदा के लिए अलग । गये।

ुप्त कड़ी

मनुष्य ने तुरत दो पैरो पर चलना नही सीख लिया। आरभ मे वह इधर-उधर लडखडाता चलता था।

पहला कपि-मानव देखने मे कैसा था?

धरती पर कहीं भी कपि-मानव जीता नही बचा है। लेकिन क्या उसकी हड्डिया कही नही मिल सकती?

अगर ये हड्डिया मिल जाये, तो ये इस बात का अतिम प्रमाण प्रस्तुत कर देगी कि मनुष्य वानरो से उत्पन्न हुआ है, क्योकि कपि-मानव एक आदिम-मानव था, उस शृखला की एक महत्वपूर्ण कडी जो वानरो से शुरू होती है और आधुनिक मानव के साथ खत्म होती है। तथापि यह महत्वपूर्ण कडी नदीतटीन निक्षेपो मे, मिट्टी और रेत की परतो मे बिना किसी सुराग के लुप्त हो गई है।

पुरातत्वविद जानते है कि धरती की खुदाई कैसे करनी चाहिए। फिर भी खुदाई शुरू करने के पहले उन्हे एक स्थल का – लुप्त कडी की खोज करने की जगह का – निर्णय करना होता था। किसी चीज़ के लिए दुनिया भर मे तलाश करना कोई आसान काम नही है और आदिम-मानव की हड्डियो की तलाश भूसे के ढेर मे सूई की तलाश से भी ज्यादा मुश्किल है।

उन्नीसवी शताब्दी के अत मे एक जर्मन प्राणिशास्त्री ए० हेकेल ने पहले-पहल सुझाव दिया कि कपि-मानव (या जैसा कि वैज्ञानिक उसे कहते है, पिथेकैथ्रोपस) की हड्डिया कही दक्षिण एशिया मे मिलेगी। उन्होंने तो नक्शे पर ठीक वह जगह तक दिखा दी, जहा उनका खयाल था कि वे बची रही होगी। यह जगह थी सुडा द्वीपसमूह।

ऐसे कई लोग थे, जो हेकेल के मत को ठोस प्रमाणो से पुष्ट किया हुआ नही मानते थे। लेकिन हेकेल के मत को भूला नही दिया गया। एक सज्जन को तो उसमे इतनी गहरी आस्था थी कि उन्होने अपना काम ही छोड दिया और पिथेकैथ्रोपस के सभावित अवशेषो की खोज के लिए सुडा द्वीपसमूह के लिए कूच कर दिया।

इन सज्जन का नाम था [illegible] र वह एमस्टरडैम विश्वविद्या-
लय में शरीरविज्ञान के प्राध्यापक थे।

विश्वविद्यालय में उनके कितने ही सहकर्मियों और प्रोफेसरो ने आश्चर्य से अपने सिर हिलाये और एक राय से कहा कि कोई भी दुरस्त होश-हवास वाला आदमी कभी ऐसे असंभव कार्य की चेष्टा नही करेगा। ये सभी बड़े प्रतिष्ठित लोग थे, और एकमात्र सफर जो वे किया करते थे, वे थे विश्वविद्यालय आते-जाते समय एमस्टरडैम की शांत सडको पर दैनिक भ्रमण।

अपनी साहसपूर्ण योजना को क्रियान्वित करने के लिए डॉ० दुबुआ ने विश्वविद्यालय की अपनी नौकरी छोड दी, फौज में भरती हो गये और सुमात्रा रवाना हो गये, जहा उन्हे एक फौजी डाक्टर का काम करना था।

द्वीप पर पहुच जाने के बाद उन्होंने अपना सारा खाली समय खोज पर लगाना शुरू कर दिया। उनके निदेशन में खुदाई पर लगे मजदूरो ने मिट्टी के पहाड के पहाड लगा दिये। एक महीना बीता, दो बीते, तीन महीने बीत गये। लेकिन पिथेकेंथ्रोपस की हड्डी तो हड्डी, उससे मिलती-जुलती भी कोई चीज न मिली।

जब कोई आदमी अपनी खोई किसी चीज की तलाश करता है, तो उसे कम-से-कम यह मालूम होता है कि वह कही है और अगर वह उसकी जमकर तलाश करेगा, तो वह उसे मिल जायेगी। लेकिन दुबुआ के मामले में यह बात नही थी। उन्हें केवल अनुमान था – मगर वह निश्चय के साथ नही कह सकते थे – कि ऐसे अवशेष सचमुच हैं। फिर भी उन्होंने डटकर खोज जारी रखी। एक साल बीता, फिर दो और तीन साल भी बीत गये, लेकिन "लुप्त कडी" कही भी न मिली।

उनकी जगह कोई और होता, तो आखिर सारी ही कल्पना को मूर्खता मानकर छोड देता, लेकिन दुबुआ बीच में ही रुकनेवाले आदमी न थे।

जब उन्हे विश्वास हो गया कि कपि-मानव के अवशेष उन्हे सुमात्रा में नही मिलेंगे, तो उन्होंने अपनी खोज को जावा में जारी रखने का निश्चय किया।

और यही अंत में उन्हे सफलता प्राप्त हुई।

दुबुआ ने त्रिनिल गाव के निकट सोलो नदी के तट पर एक आदिम मानव की खोज की। अवशेषों में एक ऊर्ध्वस्थि, दो दांत और एक खोपडी का ऊपरी भाग ही थे। बाद में आसपास अन्य ऊर्ध्वस्थियों के टुकडे भी मिले।

अपने प्रागैतिहासिक पूर्वज के कपाल की ओर देखते हुए दुबुआ ने यह कल्पना करने की कोशिश की कि वह देखने में कैसा लगता होगा। मानवकपि का माथा नीचा और ढलवा था और उसकी आंखों के बीच मोटा हड्डीला पुल था। चेहरा मनुष्य की अपेक्षा वानर जैसा ही अधिक था। किंतु खोपडी के ऊपरी भाग के सूक्ष्म अध्ययन ने दुबुआ को विश्वास दिला दिया कि पिथेकेंथ्रोपस किसी भी पुरातन वानर की अपेक्षा कहीं अधिक बुद्धिमान था – उसका मस्तिष्क उनके मस्तिष्कों से कहीं बड़ा था।

इस खोपडी का ऊपरी भाग, दो दांत और एक ऊर्ध्वस्थि, सब पुरो से, [illegible]

खास मतलब के नही। लेकिन इस पर भी, सावधानीपूर्ण अध्ययन द्वारा दयुबुआ मानवकपि के जीवन के कई तथ्यो की पुनर्कल्पना करने मे सफल हो गये, जैसे ऊर्ध्वास्थि से पता चला कि वह अपनी मुडी हुई टागो पर लडखडाता चल सकता था।

दयुबुआ अपने पूर्वज की आसानी से कल्पना कर सके। वह मानो देख रहे थे कि वह जगल के एक वृक्षहीन भाग से भदभदाता जा रहा है, उसका बदन दुहरा हुआ जा रहा है, घुटने झुके हुए है और उसकी लम्बी बाहे जमीन पर घिसट रही है। मोटे भ्रू-उभारो के नीचे आखे जमीन पर टिकी हुई है – वह खाने योग्य किसी ी चीज को खोना नही चाहता।

वह अब वानर नही रहा था, लेकिन अभी वह मानव भी नही था। दयुबुआ अपने आदिम-मानवकपि को नाम दिया पिथेकेथ्रोपस इरेक्टस अर्थात् पिथेकेथ्रोपस-ाद या ऋजु मानवकपि, क्योकि वानरो की तुलना मे वह निश्चय ही ऋजु – शरीरवाला – था।

सोचा जा सकता है कि दयुबुआ अपने अतिम लक्ष्य पर पहुच गये थे – रहस्यमय ाथ्रोपस की खोज आखिर सफल हो ही गई। लेकिन इसके बाद ही उनकी ़गी के सबसे मुश्किल दिन और वर्ष आये। उन्होने पाया कि धरती की गह-परतो को खोदना मानविक पूर्वाग्रह को तोडने से कही आसान है।

यूजेन दयुबुआ की खोज को सभी ओर से क्रोध और उपहास का सामना करना क्योकि बहुत-से लोग यह मानने को तैयार नही थे कि मनुष्य और वानरो क ही प्रागैतिहासिक पूर्वज था। ईसाई चर्च और उसके अनुयायियो ने कहा बुआ को जो खोपडी मिली थी, वह गिब्बन की थी, जबकि ऊर्ध्वास्थि मनुष्य थी। दयुबुआ के शत्रुओ को जावा-मानवकपि को वानर और मनुष्य के मिश्रण र ही सतोष नही हुआ। उन्होने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि दयुबुआ ास्थि-अवशेषो की खोज की है, वे बहुत नये है और थोडे वर्षों से ही धरती ा दबे रहे हैं, न कि उनके दावे के अनुसार लाखो वर्षों से। उन्होने पिथेकेथ्रोपस-इरेक्टस को फिर से दफना देने, उसे मिट्टी से ढाक देने और यह दिखाने का हर सभव प्रयास किया कि अव्वल तो वह मिला ही नही है।

दयुबुआ ने अपनी खोज का साहसपूर्वक पक्षपोषण किया। और वे सभी उनके पक्ष मे थे, जो यह अनुभव करते थे कि विज्ञान के लिए वह खोज कितनी महत्वपूर्ण है। अपने विरोधियो से बहस करते हुए दयुबुआ ने सिद्ध कर दिया कि खोपडी गिब्बन की नही हो सकती थी, क्योकि गिब्बन के ललाट-विवर नही होते, जबकि पिथेकेथ्रोपस के ललाट-विवर थे।

कई वर्ष बीत गये, मगर पिथेकेथ्रोपस-इरेक्टस अभी भी मानव-परिवार से बहिष्कृत ही रहा।

तभी, वैज्ञानिको को अचानक एक नये मानवकपि के अवशेष मिले, जो जावा-ानव के बहुत समान था।

बीसवी सदी के प्रारभ मे चीन मे बैपीन नगर मे एक यूरोपीय वैज्ञानिक एक ी औषधविक्रेता के यहा जा पहुचा। वहा जो अजीब-अजीब चीजे रखी हुई थी,

उनमें जेन्शेन् नामक औषधिक जड़, जो मानव आकृति से मिलती-जुलती होती है, तरह-तरह के तावीज और गंडे और जानवरों की हड्डियां और दांत भी थे। जानवरों के दांतों के संग्रह में उन्हें एक ऐसा दांत मिला, जो निश्चित रूप से किसी ज्ञात जन्तु के दांतों से नहीं मिलता-जुलता था। फिर भी, वह बस मनुष्य के दांत से ही कुछ मेल खाता था।

वैज्ञानिक ने दांत खरीद लिया और उसे यूरोप के एक संग्रहालय को भेज दिया। इसे इस सतर्कतापूर्ण शीर्षक के अन्तर्गत दर्ज किया गया था–"चीनी दांत"।

पच्चीस वर्ष से अधिक बीत गये। तब पेकिंग के पास चोउ-कोउ-तिएन नामक गुफा में उसी प्रकार के दो और दांत मिले। और इसके बाद उन दांतों का मालिक भी मिल गया। उसका नाम रखा गया–साइननथ्रोपस (चीनी मानव)।

कोई पूरा कंकाल कभी नहीं मिला। नई खोजों में लगभग पचास दांत, तीन खोपड़ियां, ग्यारह जबड़े, एक ऊर्ध्वास्थि का खंड, एक कशेरुका, एक हंसली, एक कलाई और एक पैर का एक टुकड़ा थे।

इसका यह मतलब कदापि नहीं कि गुहावासी के तीन सिर और केवल एक टांग थी।

इसमें अजब कुछ भी नहीं है। सीधी-सी बात यह है कि चोउ-कोउ-तिएन गुफा में मानवकपियों का एक बड़ा दल रहा करता था। इस प्रागैतिहासिक काल के बाद जो लाखों साल बीते थे, उन के दौरान कई हड्डियां गायब हो गईं। लेकिन जो टुकड़े मिले, वे आदिम-गुहावासियों की मुखाकृति का पुनर्निर्माण करने के लिए काफी थे।

हमारा आदिम नायक देखने में कैसा था?

ईमानदारी की बात यह है कि वह कोई बहुत सुंदर न था।

अगर तुम्हारा उससे अचानक सामना हो जाता, तो तुम शायद डर से हड़बड़ा जाते, क्योंकि अपने चपटे माथे, अपने उभरे चेहरे और लंबी, बाल भरी बांहोंवाला यह आदिम-मानव अभी तक काफी कुछ वानर जैसा ही था। इसके विपरीत, अगर तुम यह मान लेते कि वह वानर है, तो तुम्हें तुरत अपनी राय बदलनी पड़ती, क्योंकि कोई भी वानर मनुष्य की तरह सीधा नहीं चलता है और किसी भी वानर का चेहरा मनुष्य से इतना नहीं मिलता है।

मानवकपि के पीछे-पीछे अगर तुम उसकी गुफा तक चले जाते, तो तुम्हारे सारे संदेह खत्म हो जाते।

देखो, अपनी टेढ़ी टांगों पर भदभदाता वह नदी के किनारे चला जा रहा है। अचानक वह रेत पर बैठ जाता है। पत्थर के एक बड़े टुकड़े में वह दिलचस्पी लेने लगता है। वह उसे उठा लेता है, उसे गौर से देखता है और फिर उसे एक और पत्थर पर दे मारता है। फिर अपनी खोजी चीज को लिये-लिये वह उठकर आगे जाने लगता है। आखिर वह एक कगार पर आता है। वहां एक गुफा के मुंह के पास उसका कुल इकट्ठा हुआ है। वे लोग एक झबरीले, दढ़ियल बूढ़े के आसपास भीड़ लगाये हैं, जो एक एण (काला हिरन) की लाश को पत्थर के औज़ार से काट रहा है। औरतें कच्चे मांस को अपने हाथों से नोच रही हैं। बच्चे उसके टुकड़े मांग रहे हैं। गुफा में काफी भीतर जलती आग से रोशनी आ रही है।

रहे-सहे संदेह भी भस्म हो गये – क्या दुनिया में कोई भी वानर ऐसा है, जो आग जला सकता है और पत्थर से औज़ार बना सकता है? लेकिन तुम पूछ सकते हो – हमें कैसे मालूम कि मानवकपि पत्थर और हड्डी से औज़ार बनाता था और आग का इस्तेमाल जानता था?

चोउ-कोउ-तिएन की गुफा ने इस प्रश्न का उत्तर प्रदान किया। जिन निक्षेपों ने इन आदिम-मानवों के अवशेष प्रदान किये उनमें पत्थर के दो हज़ार से अधिक अनगढ़ औज़ार और मिट्टी से मिली राख की सात मीटर गहरी परत भी थी। इसका मतलब था कि मानवकपि इस गुफा में बहुत-बहुत वर्ष रहे थे और उनकी आग दिन-रात जलती रहती थी। ज़ाहिरा तौर पर वे आग जलाना नहीं जानते थे बल्कि उसे "चुन" ही सकते थे, जैसे कि वे खाने योग्य मूल और अपने औज़ारों के लिए पत्थर चुना करते थे।

आग जंगल में आग लगने के बाद मिल सकती थी। प्रागैतिहासिक मनुष्य कोई दहकता अंगारा उठा लेता और उसे होशियारी के साथ अपने निवास-स्थान ले आता। वहां, हवा और पानी से सुरक्षित गुफा के भीतर वह इस आग की अपनी सबसे बड़ी निधि की तरह रक्षा करता था।

मनुष्य नियमों को तोड़ता है

हमारे नायक ने डडो और पत्थरो को काम मे लाना सीख लिय
अधिक शक्तिशाली और ज्यादा आजाद हो गया। पास मे अगर फलो या
पेड न भी होते, तो अब उसे कोई चिता न होती। भोजन की तलाश
की एक नन्ही दुनिया से दूसरी दुनिया मे जाते हुए, लबे अरसो तक
मैदानो मे रहते हुए, सभी नियमो को तोडते हुए, जिस भोजन को खाने
अपेक्षा न की जाती थी, उसी को खाते हुए अपने निवास-स्थान से अ
दूर तक जा सकता था।

और इस तरह, आरभ से ही मनुष्य प्रकृति के नियमो को तोडने लगा।
वृक्षवासी पेडो की फुनगियो से उतर आया और जमीन पर विचरने लगा।
ह दो टागों पर चलने के लिए हठधर्मीपूर्वक सीधा हो गया। मानो इतना ही काफी
ी था, अब वह प्रकृति के अज्ञात साधनो से अपना भोजन प्राप्त करके उन चीजो
भी खाने लगा, जो उसके खाने की नही थी।

ससार मे सभी जतुओ और पौधो की अन्योन्याश्रितता है, क्योकि वे "पोषण
." द्वारा जुडे हुए है। जगलो मे गिलहरिया चीडफलो को खाती है, जबकि
हरियो को कसिये खा जाते हैं। इस तरह हमारे सामने एक शृखला आ जाती
ीड़फल – गिलहरी – कसिया। लेकिन गिलहरिया केवल चीड़फल ही नही खाती।
वे खुमिया तथा अन्य गिरीफल भी खाती है। और गिलहरियो का शिकार करने-
वाला जतु अकेला कसिया ही नही है। गिलहरी का शिकार करनेवाले अन्य जानवर
और पक्षी भी हैं – जैसे बाज। इस तरह हमे एक शृखला और मिल जाती है
और गिरीफल – गिलहरी – बाज। जगल के सभी निवासी इन शृखलाओ की
कड़िया हैं।

हमारा नायक जगल की अपनी दुनिया मे एक "पोषण चक्र" की एक कडी था।
ह फल और गिरीफल खाता था, जबकि असिदत व्याघ्र उसे खा जाता था।

तभी, अचानक, हमारे नायक ने इन शृखलाओ को तोडना शुरू कर दिया।
उन चीजो को खाने लगा, जिन्हे उसने पहले कभी नही खाया था। उसने असिदत
घ्र और उन अन्य जगली जानवरो का शिकार बनने से इनकार कर दिया, जो
ो वर्षों से उसके पूर्वजो को मारते चले आ रहे थे।

वह इतना बहादुर कैसे बन गया? जमीन पर उतरने की हिम्मत उसमे कैसे
जहा रक्तपिपासु जगली जानवरो के पैने दात उसकी बाट जोह रहे थे? यह
ी ही बात हुई कि जैसे कोई चिडिया तब अपने पेड पर से नीचे फुदक आये,
ीचे बिल्ली उसकी घात मे बैठी हो।

ादमी का नवोन्मन्न साहस उसके हाथो मे आया। अपने हाथ मे उसने जो
े रखा था और जिस डडे का वह मूलो के खोदने मे इस्तेमाल करता था
हथियार थे। मनुष्य के पहले औजार उसके पहले हथियार बन गये।
र फिर, आदमी कभी जगलो मे अकेला नही भटका।

सारा का सारा मानव-समूह उस पर हमला करनेवाले किसी भी जानवर पर टूट पड़ता था और उसे अपने शोर हंगामे से भगा देता था।

हमें आग के बारे में नहीं भूलना चाहिए। आग के सहारे मनुष्य [illegible] पशु को डराकर भगा सकता था।

मानव के हाथों के छोड़े चिह्नों पर

प्रागैतिहासिक मानव जब आखिर उन जंजीरों को तोड़ने में सफल हुआ, जिन्होंने उसे पेड़ से बाध रखा था, तो उसकी यात्रा का क्रम इस प्रकार रहा – पेड़ से जंगल, जंगल से नदी-घाटिया।

हमें कैसे मालूम कि वह नदी-घाटियों की तरफ चला?

ऐसे चिह्न हैं, जो हमें वहा ले जाते हैं।

लेकिन ये चिह्न सुरक्षित कैसे रहे हैं?

ये उस तरह के सामान्य चिह्न नही हैं, जिन्हें पदचिह्न कहते हैं। ये मानव के हाथों के छोड़े चिह्न हैं।

कोई सौ वर्ष हुए, फ्रांस में सोमे नदी की घाटी में मजदूर रेत और बजरी के लिए खुदाई कर रहे थे।

बहुत-बहुत पहले, जब सोमे अल्पायु ही थी और अभी जमीन में अपना रास्ता काट ही रही थी, वह इतनी उद्दड थी कि बड़ी-बड़ी शिलाओं को साथ बहा लाती थी। उसके साथ-साथ तेजी से बहती हुई नदी में ये शिलाएं एक दूसरे से टकराती और रगड खाती थी और इस प्रक्रिया में गोल, चिकनी और छोटी होती जाती थी। बाद में, जब नदी अपेक्षाकृत शात और मदवेग हो गई, उसने इन ककरों को रेत और मिट्टी की परत से ढाक दिया।

मजदूर लोग नीचे के ककरों तक पहुच पाने के लिए इसी रेत और मिट्टी को खोद रहे थे।

अचानक, उनका ध्यान अजीब-अजीब चीजों पर जाने लगा। कुछ ककर चिकने और गोल नही थे। वे खुरदुरे थे और दो तरफ से तराशे हुए जैसे लगते थे। उन्हें इस शक्ल का किसने बनाया होगा? नदी ने निस्सदेह नही, जो पत्थरो को केवल गोल और चिकना ही बना सकती है।

इन विचित्र पत्थरो की तरफ़ जेक बुशे दे पेर्त नामक पुरासग्रही का ध्यान आकृष्ट किया गया, जो पास ही रहते थे। बुशे दे पेर्त के पास सोमे घाटी की बजरी में प्राप्त रोचक वस्तुओ का एक बडा सग्रह था। इनमें मैमथ के सामने के दात, गैंडे के सीग और गुहा-भालुओ की खोपडिया भी थी। ये सभी दैत्याकार पशु कभी सोमे के तट पर पानी पीने के लिए आते थे, जैसे अब गाये और भेड़ें आती हैं।

लेकिन प्रागैतिहासिक मानव कहां था? बुशे दे पेर्त उसकी हड्डियो का कोई सुराग न ढूढ पाये।

तभी उन्होंने रेत मे मिले विचित्र चकमक देखे। उन्हे दो तरफो पर किसने तराशा होगा? उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यह काम केवल मनुष्य के हाथों से ही किया जा सकता था।

धुनी पुरातत्वविद ने खोज की उत्साहपूर्वक परीक्षा की। ठीक है कि ये प्रागैतिहा-
सिक मानव के जीवाश्म अवशेष नही थे। किंतु ये वे चिह्न थे, जो उसने छोड़े
थे – उसके उद्यम के चिह्न। इसमें कोई शक नही हो सकता था – यह नदी का काम
नही था, यह आदमी का काम था।

बुशे दे पेर्त ने अपनी खोजों के बारे मे एक पुस्तक लिखी। उनकी कृति का साहस
भरा नाम था 'जीव-जंतुओं की उत्पत्ति पर निबंध'।

और फिर लड़ाई शुरू हो गई। उन पर सभी तरफ़ से हमला किया गया, जैसे
बाद मे द्युबुआ पर किया गया था।

उस जमाने के सबसे बड़े पुरातत्वविदों ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि
इस गंवार पुरासंग्रही को विज्ञान की जरा भी समझ नही है और उसके चकमक
के "कुल्हाड़े" नकली हैं और उसकी किताब गैरकानूनी कर दी जानी चाहिए,
क्योंकि वह मनुष्य की उत्पत्ति के बारे मे ईसाई चर्च की शिक्षा को चुनौती देती है।
लड़ाई पंद्रह साल तक चलती रही।

बुशे दे पेर्त धवलकेशी और वृद्ध हो गये, मगर उन्होंने मानव-जाति की घोर
पुरातनता सिद्ध करनेवाले अपने विचारों के लिए लड़ना जारी रखा। अपनी पहली
पुस्तक के प्रकाशन के कुछ ही बाद उन्होंने एक दूसरी और फिर तीसरी पुस्तक
खी।

शक्तियां असमान थीं, मगर जीत बुशे दे पेर्त की ही हुई। सर्वप्रमुख ब्रिटिश
भूवैज्ञानिक चार्ल्स लायेल तथा जोसेफ़ प्रेस्टविच ने बुशे दे पेर्त के मत का सार्वजनिक
समर्थन किया। दोनों ही ने सोमे घाटी और खुदी हुई स्थलियों की यात्रा की। उन्होंने
घंटों बुशे दे पेर्त के संग्रह को देखने मे लगाये और लंबे अध्ययन के बाद घोषित
किया कि उन्होंने जो औज़ार खोजे थे, वे सचमुच प्रागैतिहासिक मानव के औज़ार
थे, जो उन भीमकाय हाथियों और गैंडों का समकालीन रहा था जो अब फ्रांस
तथा यूरोप से लुप्त हो चुके थे।

लायेल की पुस्तक "मनुष्य की पुरातनता" (१८६३ मे प्रकाशित) ने बुशे
दे पेर्त के विरोधियों के सभी तर्कों का सफ़ाया कर दिया। तब उन सबने कहना
शुरू किया कि बुशे दे पेर्त ने असल मे कुछ भी नही खोजा था, क्योंकि प्रागैति-
हासिक औज़ार पहले भी कई जगहों पर मिल चुके थे।

इस नये तर्क का लायेल ने यह पैना उत्तर दिया, "हर बार जब विज्ञान कोई
त्वपूर्ण खोज करता है, तो आवाज़ें उसे धर्मविरोधी घोषित कर देती हैं, यद्यपि
द में यही आवाज़ें इस बात का दावा करती हैं कि यह तो अरसे से सभी की
जानी हुई बात थी।"

बुशे दे पेर्त ने सोमे घाटी मे जिस तरह के चकमक पाये थे, वैसे कई पत्थर
अब संसार के विभिन्न भागों मे मिल चुके हैं। उनके मिलने की सामान्य जगहें पुरानी
दियों की सतहटियों की वे खदानें हैं, जहां कंकरों और बजरी की खुदाई होती है।

इस प्रकार आधुनिक मानव का फावड़ा भूमि मे एक प्रागैतिहासिक युग के
ज़ारों से टकराता है, जब आदिम-मानव यह सीख ही रहा था कि काम कैसे किया
ता है।

पत्थर के औजार का सबसे पुराना नमूना ऐसा चकमक पत्थर है, जिसे एक दूसरे चकमक से दो तरफ से छील दिया गया है। पास ही आम तौर पर पत्थर की वे छिपटियां होती हैं, जो तराश दी गई थी।

पत्थर के ये औजार मनुष्य के हाथों के वे चिह्न हैं, जो हमें नदी-घाटियो और नदीतटीन वालू राशियों की तरफ ले जाते हैं। वहां, निक्षेपों और कछारों मे, आदिम-मानव अपने बनावटी पत्थर के पंजों और दांतों के लिए सामग्री खोजा करता था।

यह काम आदमी का काम था। कोई पशु या पक्षी अपने भोजन की और अपना घोसला बनाने के लिए निर्माण सामग्री की ही तलाश कर सकता है। लेकिन वह कभी ऐसी चीजों की तलाश मे नही जायेगा, जिनसे वह अपने लिए अतिरिक्त पजे या दांत बना सके।

जिंदा बेलचा और जिंदा पीपा

तुमने शायद पक्षियो, पशुओं और कीड़े-मकोडों की निर्माण-योग्यताओ के बारे मे पढा या सुना हो। हमे उनमे निपुण बढ़ई, राजमिस्त्री, बुनकर और दरजी तक होने की बात मालूम है। बीवर के तेज दात बिलकुल लकड़हारे की तरह पेड़ को गिरा सकते हैं। इसके बाद बीवर गिरे हुए तनो और डालियों का उपयोग करके सचमुच के बाध बना देते हैं। इन बांधों के कारण नदी अपने किनारो के बाहर निकल आती है और बीवरों के मनपसंद ठहरे पानी के तालाब बना देती है।

और जगल की सामान्य भूरी चीटियां, जो चीड़ की सूखी पत्तियो से अपनी बाबिया बनाती हैं? अगर हम किसी बाबी को डडे से उखाड़ें, तो हम देखेंगे कि वह कितनी चतुरता से बनाया गया कई मजिला मकान है।

सवाल उठता है—क्या कभी वह दिन भी आयेगा जब चीटिया और बीवर आदमी की बराबरी कर सकें? क्या अब से दस लाख साल बाद चीटियो के अपने चीटिया-असवार होगे, वे अपने चीटिया-कारखानों मे काम करेंगी, अपने चीटिया-हवाई जहाजों मे उडेंगी और रेडियो पर चीटिया-संगीत सुनेंगी? निस्संदेह नही। और यह सब इसलिए कि आदमी और चीटियो मे एक बहुत महत्वपूर्ण अतर है।

वह अतर क्या है?

क्या यह कि आदमी चीटी से बडा है?

नही।

क्या यह कि आदमी की केवल दो टागे हैं, जबकि चीटी के छः टागे होती हैं?

नही।

हम किसी बहुत ही भिन्न बात की चर्चा कर रहे हैं।

सोचो कि आदमी किस तरह काम करता है। वह अपने कोरे हाथों या अपने दांतों का उपयोग नही करता। वह कुल्हाड़ी, बेलचे या हथौड़े का इस्तेमाल करता है। लेकिन तुम चाहे कितना ही क्यों न देखो, चीटियों की बाबी मे तुम्हें चीटिया-कुल्हाड़ी या चीटिया-हथौड़ी नहीं मिलेगी।

जब चीटी किसी चीज को दो टुकड़ों मे काटना चाहती है, तो वह उन [illegible] कतरनियों का उपयोग करती है, जो उसके सिर का अग होती हैं। जब उसे [illegible]

खोदनी होती है, तो वह उन चार जिंदा बेलचो का इस्तेमाल करती है, जिन्हे वह
सदा साथ रखती है। ये बेलचे उसकी छ मे से चार टागे हैं। अगली दो खुदाई
करती हैं, पिछली दो मिट्टी को अलग उलीचती हैं, जबकि बीच की दो टागो पर
वह काम करते समय टिकती है।

चीटियो के जिंदा पीपे तक होते हैं। इन्हे कभी-कभी "चीटिया-गाय" कहते
!। चीटियो की कुछ जातिया अपनी बाबियो मे पूरी की पूरी गैलरिया इन
ंजदा पीपो से भर लेती है। जमीन के नीचे के इन अधेरे गोदामो मे इन पीपो की
कतारे की कतारे गैलरी की छत से लटकी रहती हैं। ये पीपे निश्चल होते हैं।
अचानक कोई कामगार चीटी गोदाम मे आती है। उसकी शृगिकाए पीपे का कई
बार स्पर्श करती हैं, जिससे वह चैतन्य हो जाता है और चलने लगता है।

उसके एक सिर, एक पेट और टागे होती है और असल मे यह उसके विशाल
फूले हुए उदर के ही कारण होता है कि वह पीपे जैसी नजर आती है। उसके जबडे
खुल जाते है और शहद की एक बूद उसके मुह से निकल आती है। कामगार चीटी,
जो अभी-अभी नाश्ते के लिए आई है, बूद को चाट लेती है और फिर काम पर
चली जाती है। और "चीटिया-गाय" फिर छत से लटकी-लटकी सो जाती है।

ये चीटी के "जिंदा" औजार हैं। वे हमारे औजारो की तरह कृत्रिम नही है,
ाल्कि प्राकृतिक औजार है, जिनसे वह कभी अलग नही हो सकती।

बीवर के औजार भी उसके अग होते हैं। उसके पास पेड को काटने के लिए
ल्हाड़ी नही होती। वह अपने दातो का उपयोग करता है। चीटिया और बीवर
ने औजार नही बनाते। वे उनके साथ पैदा होते हैं।

या, मिसाल के लिए, विपमचचु को ही ले लो।

विपमचचु जब खाता है, तो वह न छुरी का उपयोग करता है, न काटे का।
उसके खाने के बरतनो मे बस एक चिमटी होती है, जिससे वह बडी सफाई के साथ
चीडफलो को खोलता है और गिरियो को कुतर-कुतरकर निकाल लेता है।
विपमचचु कभी अपने बरतनो को अलग नही करता (सोते समय भी), महज
इसलिए कि उसकी अपनी चोच ही उसकी छुरी और काटा दोनो ही होती है।

इस पक्षी की चोच चीडफल खोलने के लिए उतनी ही उपयुक्त है, जितना कि
गिरीफल फोडने के लिए सरौता या डाट निकालने के लिए काग-पेच।

अतर बस यह है कि आदमी ने गिरीफलो के लिए सरौते का आविष्कार किया,
जबकि विपमचचु ने हजारो वर्षों के दौरान अपने को चीडवनो के जीवन और चीड-
फलो से गिरिया निकालने के लिए अनुकूलित कर लिया। पहली नजर मे ऐसे औजारो
पर ईर्ष्या हो सकती है—जो औजार अपना अग हो, उसे हम कभी खो या रखकर
भूल नही सकते। लेकिन अगर तुम इस पर विचार करो, तो तुम देखोगे कि ये
औजार असल मे इतने अच्छे नही है। उन्हे कभी सुधारा या बदला नही जा सकता।

बीवर के दात जब उम्र बढ जाने के कारण भोथरे हो जाते है, तो वह सानगर
के पास जाकर उन पर धार नही चढवा सकता। और चीटी ऐसी नई, सुधरी हुई
टाग की माग नही कर सकती, जो खुदाई तेजी से और गहरी करे।

हाथ या बेलचा

मान लो कि अन्य सभी जन्तुओं की तरह आदमी के भी सिर्फ औजार हैं दांत और नाखून; लोहे या इस्पात के बने कोई औजार न होते।

वह न किसी नये औजार की ईजाद कर सकता था, न जिन दूसरे औजार के साथ वह पैदा हुआ था, उसे बदल ही सकता था। और अगर उसे बेलचे की जरूरत होती, तो उसे बेलचेनुमा हाथ को लिये-लिये ही पैदा होना पड़ता। हम केवल इन सब बातों की कल्पना ही कर रहे हैं, क्योंकि ऐसा असल में कभी हो ही नहीं सकता। लेकिन मान लो कि कोई ऐसा विचित्र प्राणी पैदा हो ही जाये। मान लो वह बड़े शानदार खुदाई करनेवाला हो, पर वह किसी और को इतनी अच्छी खुदाई करना नहीं सिखा पायेगा – बिलकुल ऐसे ही जैसे अच्छी निगाहवाला कोई अपनी आंखें किसी और को उधार नहीं दे सकता।

ऐसे प्राणी को जिंदगी भर अपना बेलचाई हाथ साथ लिये-लिये घूमना होगा, पर वह किसी भी अन्य प्रकार के काम के लिए उपयोगी न होगा। जब वह मरेगा, तो उसके बेलचे का भी अंत हो जायेगा। यह जन्मजात खनक अपनी संतान पीढ़ियों को अपना बेलचा तभी दे पायेगा जब उसके पोते-परपोते उसके बेलचई हाथ को वंशानुक्रम में ही ग्रहण करें।

फिर भी, यह पूर्णत: सत्य नहीं है। कोई जिंदा औजार भावी संततियों का जीवित अंग तभी बनता है, जब वह उनके काम का हो; अगर वह हानिकर हो, तो वह उनका जीवित अंग नहीं बनता।

अगर लोग छछूंदर की तरह जमीन के भीतर रहते, तो उन्हें निस्संदेह बेलचई हाथों की जरूरत होती।

लेकिन जमीन के ऊपर रहनेवाले प्राणी के लिए ऐसा हाथ अनावश्यक दुः-साधन है।

किसी जिंदा और प्राकृतिक औजार की उत्पत्ति कितनी ही बातों पर निर्भर होती है। फिर भी, सौभाग्यवश, मनुष्य अपने विकास में दूसरे ही पथ पर चला। उसने इस बात की प्रतीक्षा नहीं की कि प्रकृति उसे बेलचाई हाथ प्रदान करे। उसने अपने लिए बेलचा खुद बना लिया। और केवल बेलचा ही नहीं, बल्कि छुरा और कुल्हाड़ा और कितने ही अन्य औजार भी।

मनुष्य ने अपने पूर्वजों से वंशानुक्रम में जिन दस हाथ की उंगलियों, दस पांव की उंगलियों और बत्तीस दांतों को प्राप्त किया, उनमें उसने हजारों ही अन्य भिन्न-भिन्न – लंबी और छोटी, पतली और मोटी, तेज और भोथरी, भुकनेवाली, काटनेवाली और चोट करनेवाली – उंगलियों, दाढ़ों, दांतों, पंजों और मुट्ठियों को और जोड़ लिया है।

और इसने उसे शेष जंतु-जगत के साथ होड़ में इतना तेज बना दिया है कि दूसरों के लिए कभी भी उसकी बराबरी कर पाना असंभव हो गया है।
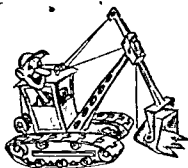
उद्यमी मनुष्य और उद्यमी नदी

जब आदिम-मानव धीरे-धीरे मनुष्य बन रहा था, तब वह पत्थर के अपने पंजे और दांत स्वयं नही बनाता था, बल्कि उन्हे उसी प्रकार इकट्ठा करता था जैसे हम खुमियां या बेरियां इकट्ठा करते है। नदियो के कछारो पर विचरते समय वह सावधानीपूर्वक उन नुकीले पत्थरो की तलाश करता, जिन्हे प्रकृति ने उसके लिए तराशा और चिकना किया था।

ये 'पैदाइशी' तेज पत्थर आम तौर पर वहा मिल सकते थे, जहा किसी जमाने मे किसी भंवर ने पत्थरो के विराट ढेरो को एक-दूसरे से इस तरह ठोकते हुए जैसे वे एक विशाल झुनझुने के हिस्से हो, नदी की तलहटी मे पड़ी चट्टानो को इधर-उधर फेंका था। भंवर मे किसी काम मे जुटते समय नदी को अपने 'श्रम' के परिणामो की ज्यादा परवाह न थी। यही कारण है कि प्रकृति ने जिन हजारो पत्थरो पर काम किया, उनमे से बहुत कम ही मनुष्य के किसी उपयोग के थे।

कालांतर मे वह पत्थरो को अपनी आवश्यकतानुसार गढ़ने लगा, वह अपने पहले पत्थर के औजार बनाने लगा।

और तब जो हुआ, मानव-जाति के इतिहास मे वह अनेक बार होनेवाला था – मनुष्य ने किसी ऐसी चीज की जगह, जिसे उसने उसकी प्राकृतिक अवस्था मे पाया था, अपनी बनाई किसी कृत्रिम वस्तु को दे दी। मनुष्य ने प्रकृति की विशाल वर्कशॉप के एक कोने मे अपनी निजी वर्कशॉप स्थापित कर दी और वहा उसने चीजो को उत्पन्न किया, ऐसी चीजे, जो उसे प्रकृति मे नही मिलती थी।

यह पत्थर के औजारो की कहानी है, यही – हजारो साल बाद – धातु की कहानी है। प्रकृत धातु के बजाय, जिसे पाना कठिन था, मनुष्य ने कच्ची धातु से धातु को प्राप्त करना शुरू किया। और हर बार जब उसने अपनी पाई हुई किसी चीज से लेकर किसी चीज को खुद बनाने तक की प्रगति की, उसने आजादी की तरफ, प्रकृति के बड़े दामन से अपनी स्वतत्रता प्राप्त करने की तरफ एक कदम और बढ़ाया।

पहले मनुष्य उन सामग्रियो का निर्माण नही कर सकता था, जिनकी उसे अपने औजारो के लिए आवश्यकता थी। उसने उन चीजो को, जिन्हे वह पा सकता था, अपनी आवश्यकताओ के अनुरूप ढालने के प्रयास के साथ शुरूआत की।

इस प्रकार, वह कोई अच्छा पत्थर ढूंढ लेता और उसके सिरो को किसी और पत्थर से छीलकर उसे एक औजार मे बदल लेता।

इससे तेज नोकवाला एक भारी औजार बन जाता, जिसे घन (प्रहारक) या एक तरह का कुल्हाड़ा कहते है। अलग होनेवाली छिपटिया भी कतरनियो, खुरचनियो और छेनियो के रूप मे काम मे ले आई जाती थी।

धरती मे काफी गहराई पर मिले सबसे पुराने प्रागैतिहासिक औजार प्रकृत पत्थरो से इतने मिलते-जुलते है कि कभी-कभी यह कहना मुश्किल हो जाता है कि काम किया किसने है – मनुष्य ने, नदी ने, या महज गरम ताप से ठंडे ताप मे परिवर्तन ने, जो वर्षा और पानी के साथ-साथ पत्थर को तड़का और तोड़ देता है।

तथापि, ऐसे भी औजार मिले है, जिनके बारे मे कोई शक नही पैदा होता। प्राचीन नदियो के कछारो और तटो पर, जो अब मिट्टी और रेत की गहरी परतो
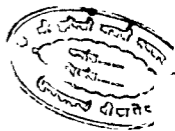
के नीचे दबे हुए हैं, वैज्ञानिकों ने प्रागैतिहासिक मानव की वास्तविक कार्यशालाओं को खोद निकाला है। इन खुदाइयों के दौरान तैयार प्रागैतिहासिक कुल्हाड़ियां और वे पत्थर भी मिले हैं, जो कुल्हाड़ियां बनाने को थे।

रूस में ये कुल्हाड़ियां दक्षिणी प्रदेशों में, सुखूमि के पास के समुद्री किनारे में और क्रीमिया में किइक-कोबा गुफा में मिली हैं।

अगर हम चकमक की कुल्हाड़ी को गौर से देखें, तो हम साफ देख सकते हैं कि चिप्पड़ियों को अलग करने और एक नुकीला सिरा बनाने के लिए उस पर चकमक के घन से बड़ी चोट की गई थी। हम उसके समतल और चिकना किये जाने के निशान भी देख सकते हैं।

प्रकृति कभी ऐसा काम नहीं कर सकती थी। केवल मनुष्य ही इसे कर सकता था।

इस बात को समझना कठिन नहीं है—प्रकृति में जो कुछ भी होता है, वह बड़े अव्यवस्थित ढंग से, बिना किसी योजना या मकसद के होता है। नदी का भवर बिना किसी ध्येय या प्रयोजन के पत्थरों को एक-दूसरे पर पटकता रहता है। आदमी भी यही करता है, लेकिन वह ऐसा सोच-समझकर करता है, वह जो करता है, उसका उसके पास उचित कारण होता है। अपने पाये पत्थर को अपनी आवश्यकता के अनुरूप बनाने के सामान्य प्रारभ से लेकर मनुष्य धीरे-धीरे प्रकृति को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए बदलने और फिर से बनाने लगा।

इसने उसे पशुओं से एक सीढ़ी और ऊपर उठा दिया, इसने उसे और ज्यादा आजादी दे दी, क्योंकि अब उसने इसकी प्रतीक्षा करना बद कर दिया कि प्रकृति उसे एक तेज पत्थर प्रदान करे।

अब वह अपने औजार खुद बना सकता था।

मनुष्य की जीवनी का आरंभ

जीवनी का प्रारभ आम तौर पर व्यक्ति की जन्मतिथि और जन्मस्थान के साथ होता है। मिसाल के लिए :

"इवान इवानोव का जन्म २३ नवंबर १८६७ को तबोव नगर मे हुआ था।"

यही जानकारी कभी-कभी जरा ज्यादा नाटकीय शैली मे भी दे दी जाती है। जैसे :

"नवंबर का महीना और १८६७ का साल था। मूसलाधार वर्षा हो रही थी। ऐसे ही एक दिन तबोव नगर के बाह्यांचल मे एक छोटे से घर मे इवान इवानोव का जन्म हुआ, जिन्होंने आगे चलकर अपने परिवार और जन्मस्थान का नाम बढ़ाया।"

लेकिन यहां हम तीसरे अध्याय के बीच मे आ चुके हैं, लेकिन हमने अभी तक इस बात का उल्लेख भी नही किया कि हमारा नायक कब और कहां पैदा हुआ था। हमने तो असल मे अभी उसका असली नाम तक नही बताया है। किसी जगह हमने उसे "कपि-मानव" कहा, तो किसी जगह उसे "मानवकपि" कहा गया है। उसे "प्रागैतिहासिक मनुष्य" और "आदिम-मानव" और "हमारा वनवासी पूर्वज" तक कहा गया है।

हम नामो के इस प्रकट घोटाले को साफ करने की कोशिश करेगे।

हम चाहे भी तो तुम्हे अपने नायक का असली नाम नही बता सकते, क्योकि उसके अनेको नाम है।

अगर तुम किसी भी जीवनी के पन्ने पलटो, तो तुम देखोगे कि नायक का नाम आदि से अत तक कभी नही बदलता। पहले वह बालक था, फिर लडकपन से गुजरा और अत मे दाढी-मूछवाला आदमी बन गया, मगर उसका नाम वही रहा, जो शुरु में था। अगर उसका नाम इवान रखा गया था, तो वह अपने जीवन के अत तक इवान ही रहेगा।

लेकिन जहा तक हमारे नायक की बात है, मामला ज्यादा पेचीदा है।

वह खुद एक अध्याय से दूसरे अध्याय तक इतना बदल जाता है कि हमारे पास इसी के अनुसार उसका नाम बदलने के सिवाय और कोई चारा नही।

अगर हम प्रागैतिहासिक मनुष्य में से सबसे पुरातन – जो अभी तक काफी कुछ वानर जैसा ही नजर आता है – की चर्चा कर रहे है, तो उसका नाम है पिथेके-थ्रोपस, साइनन्थ्रोपस और हाइडेलबेर्ग-मानव।

हाइडेलबेर्ग-मानव का जो अकेला निशान हमारे पास है, वह है जर्मनी मे, हाइडेलबेर्ग नगर के पास मिला उसका जबडा।

तथापि, वह इस बात का पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत करता है कि उसका मालिक मनुष्य था – उसके दात इसानी दात हैं; उसके भेदक दात निचले दातो के ऊपर इस तरह चढे हुए नही हैं, जैसे कि वानर के चढे होते हैं।

लेकिन हाइडेलबेर्ग-मानव भी अभी सच्चा मनुष्य नही है। उसकी पश्चगामी ठोडी यह बात हमे बता देती है।

पिथेकेथ्रोपस, साइनन्थ्रोपस, हाइडेलबेर्ग-मानव!

हमारे नायक के जीवन के एक ही काल, उसके विकास की एक ही अवस्था के लिए तीन बड़े-बडे नाम!

लेकिन वह बिन-बदला नही रहा। वह अधिकाधिक आधुनिक मनुष्य जैसा होता जा रहा था। जैसे शिशु बालक और बालक नवयुवक हो जाता है, उसी प्रकार प्रागैतिहासिक मनुष्य निआडरथाल-मानव हुआ, और निआडरथाल-मानव क्रोमन्यन-मानव बना।

तो, हमारे नायक के कुछ नाम अभी भी बाकी है!

लेकिन हमे अपने से ही आगे नही निकल जाना चाहिए। इस अध्याय में उसे "पिथेकेथ्रोपस – साइनन्थ्रोपस – हाइडेलबेर्ग-मानव" कहा गया है।

अपने दिन वह नदियो के किनारे उन चीजो की तलाश मे भटकते बिताया करता था, जिन्हे वह अपने औजारो मे बदल सकता था। वह सब के साथ चकमक के एक पत्थर से दूसरे पत्थर के टुकडो को छीलना उन भद्दी और बदशक्ल कुल्हाडियो को बनाना, जो वैज्ञानिको को अभी तक प्राचीन नदियो के निक्षेपो मे मिला करती है।

यही कारण है कि तुम्हे उसका नाम बतलाना इतना कठिन है।

तुम्हे यह बताना तो और भी कठिन है कि वह पैदा कब हुआ था, क्योकि हम सीधे-सीधे यह नही कह सकते – "हमारा नायक फला साल मे पैदा हुआ था",

क्योंकि मनुष्य किसी एक वर्ष के भीतर मनुष्य नहीं बन गया था। उसे चलना सीखने और अपने भद्दे औजार बनाने में लाखों वर्ष लग गये। इसलिए, अगर कोई हमसे पूछे कि मनुष्य की आयु कितनी है, तो हम केवल यही जवाब दे सकते हैं–कोई दस लाख वर्ष।

और यह कहना तो बहुत मुश्किल है कि मनुष्य पैदा कहां हुआ था।

हमने यह पता लगाने की कोशिश की कि हमारे नायक की नानी कहां रहती थी–वही आदिम नानी वानर, जिसके वंशजों में आदमी, चिंपाजी और गोरिल्ला सम्मिलित हैं। वैज्ञानिक इस वानर को ड्रिओपिथेकस कहते हैं। जब हमने उसका पता ढूंढना शुरू किया, तो हमें पता चला कि ड्रिओपिथेकस कितने ही पहले हो चुके हैं। कुछ पदचिह्न मध्य यूरोप की ओर ले जाते थे, कुछ पश्चिमी अफ्रीका को, तो कुछ दक्षिण एशिया को।

जाननेवाले लोगों ने हमें बताया कि दक्षिण अफ्रीका में कितनी ही दिलचस्प खोजें हुई हैं। वहां उन वानरों के अवशेष मिले हैं, जो अपने पिछले पैरों पर चलना जानते थे और जिन्होंने जंगलों में रहना छोड़ दिया था और खुले में रहते थे।

फिर हमें याद आया कि पिथेकैंथ्रोपस और साइनैनथ्रोपस के अवशेष एशिया में मिले थे, जबकि हाइडेलबर्ग-जबड़ा यूरोप में मिला था। तो मनुष्य का जन्मस्थान कौनसा था? और हमने अनुभव किया कि यह निश्चय करना कठिन होगा कि मनुष्य कौनसे महाद्वीप पर पैदा हुआ था, किसी देश की बात तो और भी मुश्किल है।

हमने सोचा कि हम अपनी खोज का आरंभ हर ऐसी जगह को जानकर कर सकते हैं, जहां पत्थर के औजार मिले हैं। आखिर, आदमी सचमुच आदमी तभी बना जब उसने खुद अपने औजार बनाना शुरू किये। शायद ये औजार हमें यह निश्चित करने में सहायता दें कि मनुष्य पृथ्वी पर कहां सबसे पहले प्रकट हुआ।

हमने दुनिया का नक्शा लिया और उस पर चकमक के कुल्हाड़े मिलने की हर जगह बना दी। जल्दी ही पूरा नक्शा बिंदुओं से भर गया। उनमें से अधिकांश यूरोप में थे, लेकिन कुछ बिंदु अफ्रीका और एशिया में भी थे।

जवाब अब साफ था–मनुष्य पहले पुरानी दुनिया में ही–एक साथ कई अलग अलग जगहों पर और किसी अकेली जगह नहीं–अवतरित हुआ था।

और यही बहुत करके हुआ भी, क्योंकि हम क्षण भर के लिए भी इसकी कल्पना नहीं कर सकते कि समस्त मानव-जाति "आदम वानर" और "हव्वा वानर" जैसे वानरों के किसी एक ही जोड़े से उत्पन्न हुई है। वानर का मनुष्य में रूपांतरण किसी एक ही प्रदेश में वानरों के एक ही झुंड के भीतर नहीं हुआ। यह कितने ही प्रदेशों में एक साथ हुआ, हर कहीं ऐसे वानर थे, जिन्होंने दो पैरों पर चलना और अपने हाथों का काम के लिए उपयोग करना सीख लिया था। और जैसे ही उन्होंने काम करना शुरू किया, एक नई शक्ति का जन्म हुआ, जिसने अंततः उन्हें मनुष्य में परिवर्तित कर दिया। यह शक्ति थी मानव-श्रम।

मनुष्य समय बनाता है

हर कोई जानता है कि खनिज लोहे और कोयले का खनन कैसे होता है और आग कैसे जलाई जाती है।

लेकिन समय कैसे बनाया जाता है?

बहुत कम ही लोग इसका उत्तर जानते हैं, चाहे मनुष्य ने समय का बनाना बहुत पहले सीख लिया था। जब उसने पहले-पहले औज़ार बनाना शुरू किया, उसकी ज़िदगी किसी नये ही काम मे लग गई, और यह वास्तविक, मानविक कार्य था–यह श्रम था। लेकिन श्रम समय लेता था। पत्थर का औज़ार गढने के लिए मनुष्य को पहले अच्छा पत्थर ढूढना पडता था, क्योंकि हर पत्थर को कुल्हाडी मे नही बदला जा सकता था।

औज़ारो के लिए सबसे अच्छा पत्थर चकमक था, जो सख्त और भारी था। लेकिन चकमक के टुकडे हर कही नीचे ही नही पडे रहते थे, उन्हे ढूढना होता था। मनुष्य घटो चकमक की तलाश मे लगाता, और अकसर उसकी तलाश बेकार जाती। तब उसे कम सख्त चकमक का और बलुआ पत्थर तथा चूना पत्थर जैसी मुलायम चीज़ो तक का उपयोग करना पडता।

आखिर वह ठीक तरह का पत्थर ढूढ लेता। फिर भी वह कोरा पत्थर ही होता था, उसको पत्थर के एक घन से तोडना और गढना जरूरी होता था। इसमे भी समय लगता था। आदमी की उगलिया तब इतनी तेज और निपुण नही थी जैसी कि वे अब हैं, वे काम करना सीख ही रही थी। यही कारण था कि अपने भद्दे कुल्हाडे बनाने मे भी उसे इतना अधिक समय लगाना पडता था, जितना आजकल इस्पात के कुल्हाडे के लिए नही लगता है।

लेकिन इस काम के लिए आवश्यक समय वह कहा से लाता?

प्रागैतिहासिक मानव के पास बहुत कम फालतू समय था। उसके पास आज के व्यस्त से व्यस्त आदमी से भी कम समय था। सुबह से शाम तक वह जगलो और वृक्षहीन स्थलो मे अपने और अपने बच्चो के लिए भोजन बटोरता घूमा करता था, और खाने योग्य हर चीज सीधे उनके मुह मे पहुच जाती थी। सोने पर न लगा सारा समय खाना इकट्ठा करने और खाने मे लग जाता था, क्योंकि प्रागैतिहासिक मनुष्य जो भोजन करता था, वह बहुत पोषक न था और उसे उसकी बडी मात्रा की आवश्यकता होती थी।

सोचो तो कि अगर उसके भोजन मे बस बेरिया, गिरीफल, घोंघे, चूहे, हरी टहनिया, मूल, कीडे-मकोडो की इल्लिया और ऐसी ही और अल्लम-गल्लम चीज़े होती हो, तो उसे कितना खाना पडता होगा!

मनुष्यो के झुड तब जगलो मे उसी प्रकार चरा करते थे जैसे अब हिरनो के झुड जगह-जगह घास और काई चरते और चबाते रहते हैं। लेकिन अगर मनुष्य को अपना सारा दिन भोजन तलाश करने और चबाने में ही लगाना पडता, तो वह काम कब कर सकता था?

और तब उसने पता लगाया कि काम में एक अद्भुत गुण है–वह केवल उसके समय को ले ही नही लेता था, यह उसे अधिक समय देता भी था।

सचमुच, अगर तुम किसी ऐसे काम को चार घटे मे कर लो, जिसमे किसी

और को आठ घंटे लगते हैं, तो तुमने चार घंटे बचा लिये। अगर तुम कोई ऐसा औजार ईजाद कर लो, जो तुम्हारा काम जितनी तेजी से तुम उसे पहले करते थे, उससे दुगनी तेजी से कर दे, तो तुमने वह आधा समय बचा लिया, जो आम तौर पर तुम्हें उसे करने में लग जाता।

प्रागैतिहासिक मनुष्य ने यह खोज कर ली।

चकमक को तेज करने में उसे कई-कई घंटे लग जाते थे। लेकिन तब वह इस तेज औजार को पेड़ की छाल के नीचे से इल्लियां निकालने में इस्तेमाल कर सकता था।

चकमक से डंडे को नुकीला करने में उसे बहुत देर लगती थी। लेकिन फिर उसके लिए इस नुकीले डंडे का उपयोग सुस्वादु मूलों को खोद उखाड़ने या छोटे जानवरों को मारने मे करना बहुत आसान था।

इसने प्रागैतिहासिक मनुष्य का अपने और अपने बच्चों के लिए भोजन इकट्ठा करने का काम बहुत आसान और तेज कर दिया और काम के लिए उसे ज्यादा समय दे दिया। अपने खाली समय में वह औजारों को गढ़कर उन्हें लगातार ज्यादा तेज और अच्छा बनाता जाता था। लेकिन चूंकि हर नये औजार का मतलब था ज्यादा भोजन, इसलिए इसका मतलब अंत मे ज्यादा समय का बचना भी था।

शिकार ही आदमी को सबसे अधिक खाली समय प्रदान करता था। गोश्त चूंकि बहुत शक्तिप्रद था, इसलिए गोश्त खाने में लगाया गया आधा घंटा उसकी दिन भर की भूख को शांत कर देता था। लेकिन आरंभ मे लोगों को गोश्त बहुत कम मिलता था। बड़े जानवर को डंडे या पत्थर से मारना बहुत मुश्किल था, और चूहे से बहुत मांस मिलता न था।

मनुष्य अभी असली शिकारी नहीं बना था। वह बिनाई करनेवाला ही था।

बिनाई की जिंदगी

आज के जमाने मे बिनाई करनेवाला बनना बहुत आसान है। तुममें से अधिकतर जंगलों मे बेरियों और खुमियों की चुनाई कर चुके हो। काई से झांकती भूरी खुमी या घास से झांकती लाल खुमी को ढूंढ़ना कितना मजेदार होता है। काई में खूब गहरे हाथ डालकर खुमी के मजबूत तने को पकड़ने और फिर उसे सावधानी से खींचने में कितना आनंद आता है!

लेकिन क्षण भर के लिए कल्पना करो कि खुमी या बेरियां चुनना ही तुम्हारा मुख्य काम है। तुम्हारे खयाल से क्या इसी से तुम्हारा पेट भर जाया करेगा? तुम जब खुमी चुनने जाते हो, तो कभी-कभी तुम्हारा झोला पूरा भरा होता है, कुछ खुमियां तो तुम्हारी टोपी में भी भरी होती हैं। लेकिन कभी-कभी जंगलों में सारा दिन बिताने के बाद जब तुम हारे-थके लौटते हो, तो तुम्हारे झोले में एक मुड़ी-तुड़ी खुमी के अलावा और कुछ दिखाने को नहीं होता।

हमारी एक दसवर्षीया सहेली जब-जब खुमियां चुनने जाती, वह शेखी बघारती हुई कहती

"मैं पूरी सौ बढ़िया खुमियां लेकर आऊंगी!"

लेकिन आम तौर पर वह खाली हाथ ही लौटती। घर पर उसके खाने के लिए कुछ और न होता, तो वह भूखो ही मर जाती।

प्रागैतिहासिक काल में बिनाई पर जीनेवाले मनुष्य की जिंदगी बड़ी कठिन थी। अगर वह भूखों नहीं मरा, तो वह महज इसलिए कि उसे जो कुछ भी मिल जाता, उसके खाने से उसे कोई परहेज न था और वह अपने दिन भोजन की तलाश में ही बिताता था। यद्यपि वह पेड़ों पर रहनेवाले अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक शक्ति-ली और स्वतंत्र हो गया था, फिर भी उसकी हालत खासी पतली ही थी। दर-ल, वह बस एक अधभूखा प्राणी ही था, और कुछ नहीं।

और इसी बीच, एक भयानक आपदा दुनिया की सूरत ही बदलने जा रही थी।

पदा सिर
आई

किन्हीं कारणो से, जो अभी तक समझ में नहीं आ सके है, उत्तरी हिमावरण स्थानच्युत हो गये और दक्षिण की ओर खिसकने लगे। बर्फ की बडी-बडी नदियां ढलानो को रौंदती हुई, पहाडियो की चोटियो को काटती हुई, चट्टानो को तोड़ती और चूर-चूर करती हुई और टूटी हुई चट्टानो के बडे-बडे अबारो को बहाती हुई पहाडो और मैदानो पर प्रवाहित होने लगी। हिमनदियों के मुखो पर पिघलती बर्फ ने तूफानी नदियो को जन्म दिया, जिन्होंने पृथ्वी पर नदियो की तलहटियां बनाते हुए गहरी खाइयां खोद दी।

उत्तर से बर्फ विजेताओ की एक बडी सेना की तरह आगे बढी। रास्ते में इसमें शिखरो और घाटियो से आती हिमनदियां भी सम्मिलित हो गई।

सोवियत सघ तथा पड़ोसी देशो के मैदानो में पाये जानेवाले गोलाश्मो में हम -भिन्न हिमनदियो के चिह्न देख सकते है। कभी-कभी कारेलिया के चीडवनो म्हारे सामने अचानक एक विशाल काई चढ़ा गोलाश्म आ जाता है। यह यहां ा, तो कैसे? इसे यहां कोई हिमनदी छोड गई थी।

उत्तरी हिमनदियां दक्षिण की तरफ पहले भी आई थी, लेकिन पहले कभी वे दूर दक्षिण तक नही धस आई थी। रूस मे हिमनदियां वोल्गोग्राद और दूने-ोल्क नगरो तक पहुच गई थी। पश्चिमी यूरोप में वे जर्मनी के पर्वतीय प्रदेशो पहुच गई थी और ब्रिटिश द्वीपसमूह के अधिकांश पर छा गई थीं। उत्तरी अमरीका बडी झीलों से भी नीचे तक आ गई थी।

हिमनदियां धीमी गति से आगे बढती रही और प्रागैतिहासिक मनुष्य धरती पर जगहो पर रह रहा था, वहां तक उनकी ठड पहुंचने में काफी समय गया। तथापि, समुद्र के प्राणियो ने ही बर्फानी झोंके को सबसे पहले व किया।

तटवर्ती प्रदेश अभी तक गरम ही थे। अगल लॉरेल और मैग्नोलिया के वृक्षो रे हुए थे। मैदानो की ऊंची घास में भीमकाय दक्षिणी हाथी और गैंडे विचरते थे। लेकिन समुद्रो मे पानी लगातार ठडा होता जा रहा था। धाराएं उत्तरी दियो की ठड और कभी-कभी प्लावी हिमखडो को भी समुद्र में से होकर बहने-नदियो ही की तरह साथ बहाती जाती थी।

सागरतटीय कगार हमें गरम समुद्रो के ठडे होने की कहानी बताते है। एक समय, जब उष्माप्रेमी पशु और पौधे अभी तक भूमि पर निवास कर रहे थे, की आबादी बदलने लगी थी। अगर हम उस काल के जीवाश्म-निक्षेपो का न करें, तो हमें मोलस्क प्राणियो के कवच मिलेंगे, जो केवल ठडे पानी में ह सकते है।
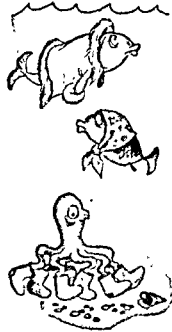
जंगलों की लड़ाई

हिमनदियों के आगमन को धरती पर भी अनुभव किया जाने लगा।

और इसमें अचरज की बात क्या है, स्वयं आर्कटिक अपनी जगह से खि
था और अब धीरे-धीरे दक्षिण की ओर बढ़ता चला आ रहा था! इसने उत्त
टुंड्रा और चीड़वनों को भी डांवाडोल कर दिया और उन्हें भी दक्षिण की
धकेल दिया।

टुंड्रा ने तैगा पर खुले युद्ध की घोषणा कर दी। तैगा को पीछे हटना पड़ा
इसलिए वह पत्रधारी वनों पर छाने लगा।

जंगलों का महायुद्ध शुरू हो चुका था।

जंगल अब भी एक-दूसरे से जूझ रहे हैं। देवदार और एस्प जानी दुश्मन
एस्प को छाया से चिढ़ है, जबकि देवदार को इससे कोई परहेज नहीं।

अगर देवदार वन में तुम्हारी निगाह एस्प वृक्षों पर पड़े, तो तुम देखोगे
वे नन्हे अंकुर जितने ही हैं – छायादार देवदार उन्हें बढ़ने ही नहीं देते। लेकिन
लकड़हारे देवदार को काट डालते हैं, तो तेज धूप में एस्प फिर जी उठते हैं
तेजी के साथ बढ़ने लगते हैं।

फिर सब कुछ बदलने लगता है – देवदार की जड़ों के पास जो छायाप्रेमी
उग आती थी, वह मुरझाकर मर जाती है। जो देवदार इतने छोटे थे कि
नहीं जा सकते थे, उषाकालीन तुषार से वे पीले पड़ जाते हैं। जब उनके पि
विशाल देवदार – जीवित थे, तो उनकी हरी बांहों के साये के नीचे नन्हे दे
मजे से रहते थे। लेकिन जब वे खुले में अकेले रह गये, तो वे पीले पड़ गये
उन्होंने बढ़ना बंद कर दिया।

अब एस्प विजयी हो गये। पहले, उन्हें धूप के वे टुकड़े ही मिल पाते थे,
उनके शत्रु देवदार अपनी टहनियों से गुजरने देते थे। अब तो, जब देवदार
दिये गये, एस्प जंगल के राजा बन गये।

कुछ ही वर्षों में, जहां पहले देवदार का स्याह जंगल था, वहां हमें एस
चमकदार जंगल नजर आता है।

लेकिन समय गुजरता जाता है। और समय बड़ा कर्मी है। धीरे-धीरे, औ
तरह कि आरंभ में एकदम नजर में आता ही नहीं, वह इस वन्य भवन का पुनि
कर देता है। एस्प ऊंचे और ऊंचे होते चले जाते हैं और उनकी घनी फु
लगातार पास आती चली जाती हैं। उनके तनों पर पड़नेवाली छाया, जो
मामूली-सी और चलती-फिरती थी, घनी और गहरी हो जाती है। एस्प दे
के साथ अपनी लड़ाई जीतते हैं, लेकिन उनकी विजय ही उनकी मृत्यु का
बनती है।

अपनी छाया से कभी कोई आदमी नहीं मरता। फिर भी पेड़ के जीव
ऐसा अक्सर होता है। शाखदार एस्पों के नीचे छोटे और अदाकन नन्हे देवदार
हैं। समयांतर में ये नन्हे शत्रु फिर जी उठते हैं। एस्प की गिरी हुई पत्तियों की
चादर नीचे जमीन को गरम रखती है और जल्दी ही वह नन्हे देवदार के पत
से भी ढक जाती है। बीस वर्षों में देवदार की चोटियां एस्पों की चोटियों तक
जाती हैं। जंगल हवादार, प्रकाशपूर्ण और मिला-जुला हो जाता है। एस्पों का

हरा रग देवदारों की काही नुकीली चोटियो से गुथता जाता है। देवदार ऊचे और ऊचे होते चले जाते हैं और कुछ समय के बाद उनकी मोटी हरी सूइया एस्पो पर छाया डालना शुरू कर देती है।

एस्पो का काल आ जाता है। देवदार की छाया मे वे मुरझाने लगते है। देवदार जंगल के स्वामी बन जाते हैं। वे अपना पूर्व बल फिर प्राप्त कर लेते हैं।

आदमी और उसके कुल्हाड़े जब उनके जीवन मे हस्तक्षेप करते हैं, तो जगल इस तरह आपस मे जूझते हैं।

लेकिन जब हिम-युग की सर्दी ने उनके जीवन मे हस्तक्षेप किया, तो जगलो की लडाई और भी प्रचड हो गई।

ठड ने ऊष्माप्रिय पेडों को मार दिया और उत्तर के जगलो के लिए रास्ता खोल दिया। चीड़, देवदार और भुर्ज ने बाज और लिडन के खिलाफ जग का ऐलान कर दिया। बाज और लिडन को पीछे हटना पडा, और इसमे उन्होंने सदाबहार पेडो में से बच रहे अतिम पेडो–लॉरेल, मैग्नोलिया और अजीर–को धकेल बाहर किया।

लाड में पले, ऊष्माप्रिय पेड सभी तरह की हवाओ और ठड के लिए खुली, आश्रयहीन जगहो मे जिंदा न रह सके और इसलिए विजेताओ के लिए जगह खाली करते हुए वे मर गये।

पहाडो में ही उन्हे अकेला आश्रय मिला। वहा हर सरक्षित घाटी मे ऊष्माप्रिय पेड छिपे रहे। लेकिन फिर पर्वतीय चोटियो से और हिमनदियो ने उतरना शुरू कर दिया और वे अपने साथ-साथ पहाडी देवदारो और भुर्जो को ले आईं, जो उन पर छा गये।

जंगलो की यह लडाई हजारो साल चली। और पराजित सेना के अतिम दस्ते, ऊष्माप्रेमी पेड, लगातार दक्षिण की तरफ हटते चले गये।

लेकिन जब जंगल आक्रमणकारियो के खिलाफ लडाई मे खेत रहे, तो उन जानवरो का क्या हुआ जो जगलो में रहते थे?

आधुनिक समय मे जब कोई जगल आग से नष्ट हो जाता है, या काट दिया जाता है, तो उसके कुछ निवासी उसी के साथ खत्म हो जाते है, जबकि अन्य बच निकलते हैं। जब कोई देवदार वन काटा जाता है, तो उसके स्वाभाविक निवासी–विषमचचु, स्वर्णचूड तथा अन्य पशु-गायब हो जाते है।

छायादार देवदार वन में उनके घरो की जगह एक नये एस्प वन ने ले ली है। नये घर मे अन्य पक्षियो और अन्य पशुओं ने बसेरा ले लिया है।

कई वर्षों के बाद, जब देवदार एस्पो को फिर परास्त कर देते हैं, तो नया देवदार वन खाली नही होता–वह फिर विषमचंचुओं, स्वर्णचूडो और उनके मित्रो से भर जाता है।

जगल का मरण और पुनर्जन्म पेडो और जतुओ के अनिश्चित सग्रह के रूप मे नही, वरन एक एकीकृत, सूत्रबद्ध विश्व की तरह होता है।

जंगलों की लड़ाई

हिमनदियों के आगमन को धरती पर भी अनुभव किया जाने...
और इसमें अचरज की बात क्या है, स्वयं आर्कटिक अन्टी...
था और अब धीरे-धीरे दक्षिण की ओर बढ़ता चला आ रहा
तुंद्रा और चीड़वनों को भी डावांडोल कर दिया और उन्हें
ढकेल दिया।

तुंद्रा ने तैगा पर खुले युद्ध की घोषणा कर दी। तैगा को
इसलिए वह पत्रधारी वनों पर छाने लगा।

जंगलों का महायुद्ध शुरू हो चुका था।

जंगल अब भी एक-दूसरे से जूझ रहे हैं। देवदार और एस्प
एस्प को छाया में चिढ़ है, जबकि देवदार को इसने कोई परहेज न

अगर देवदार वन में तुम्हारी निगाह एस्प वृक्षों पर पड़े,
वे नन्हे अंकुर जितने ही हैं—छायादार देवदार उन्हें बढ़ने ही नहीं
लकड़हारे देवदार को काट डालते हैं, तो तेज धूप में एस्प फिर
तेज़ी के साथ बढ़ने लगते हैं।

फिर सब कुछ बदलने लगता है—देवदार की जड़ों के पास
उग आती थी, वह मुरझाकर मर जाती है। जो देवदार इतने
नहीं जा सकते थे, उषाकालीन तुषार से वे पीले पड़ जाते हैं।
विशाल देवदार—जीवित थे, तो उनकी हरी बांहों के साये के
मजे में रहते थे। लेकिन अब वे खुले में अकेले रह गये, तो वे
उन्होंने बढ़ना बंद कर दिया।

अब एस्प विजयी हो गये। पहले, उन्हें धूप के वे टुकड़े ही नि
उनके शत्रु देवदार अपनी टहनियों से गुजरने देते थे। अब तो,
दिये गये, एस्प जंगल के राजा बन गये।

कुछ ही वर्षों में, जहां पहले देवदार का स्याह जंगल था,
चमकदार जंगल नजर आता है।

लेकिन समय गुजरता जाता है। और समय बड़ा कमी है।
तरह कि आरंभ में एकदम नजर में आता ही नहीं, वह इस बन्द
कर देता है। एस्प ऊंचे और ऊंचे होते चले जाते हैं और उन
लगातार पास आती चली जाती हैं। उनके तनों पर पड़नेवाली
मामूली-सी और चलती-फिरती थी, घनी और गहरी हो जाती
के साथ अपनी लड़ाई जीतते हैं, लेकिन उनकी विजय ही उनकी
बनती है।

अपनी छाया से कभी कोई आदमी नहीं मरता। फिर भी
ऐसा अक्सर होता है। शाखदार एस्पों के नीचे छोटे और अरक्ष
है। समयान्तर में वे नन्हे शत्रु फिर जी उठते हैं। एस्प की गिरी हुई
चादर नीचे जमीन को गरम रखती है और जल्दी ही वह नन्हे
से भी ढक जाती है। बीस वर्षों में देवदार की चोटियां एस्पों
जाती हैं। जंगल हवादार, प्रकाशपूर्ण और मिला-जुला हो जाता

हरा रंग देवदारो की काही नुकीली चोटियो से गुथता जाता है। देवदार ऊचे और ऊचे होते चले जाते हैं और कुछ समय के बाद उनकी मोटी हरी सूइया एस्पो पर छाया डालना शुरू कर देती है।

एस्पो का काल आ जाता है। देवदार की छाया मे वे मुरझाने लगते हैं। देवदार जगल के स्वामी बन जाते हैं। वे अपना पूर्व बल फिर प्राप्त कर लेते हैं।

आदमी और उसके कुल्हाडे जब उनके जीवन मे हस्तक्षेप करते हैं, तो जगल इस तरह आपस मे जूझते हैं।

लेकिन जब हिम-युग की सर्दी ने उनके जीवन मे हस्तक्षेप किया, तो जगलो की लडाई और भी प्रचड हो गई।

ठड ने ऊष्माप्रिय पेडो को मार दिया और उत्तर के जगलो के लिए रास्ता खोल दिया। चीड, देवदार और भुर्ज ने बाज और लिडन के खिलाफ जग का ऐलान कर दिया। बाज और लिडन को पीछे हटना पड़ा, और इसमे उन्होने सदाबहार पेडो मे से बच रहे अतिम पेड़ो – लॉरेल, मैग्नोलिया और अजीर – को धकेल बाहर किया।

लाड मे पले, ऊष्माप्रिय पेड़ सभी तरह की हवाओ और ठड के लिए खुली, आश्रयहीन जगहो मे जिंदा न रह सके और इसलिए विजेताओ के लिए जगह खाली करते हुए वे मर गये।

पहाडो मे ही उन्हे अकेला आश्रय मिला। वहा हर सुरक्षित घाटी मे ऊष्माप्रिय पेड़ छिपे रहे। लेकिन फिर पर्वतीय चोटियो से और हिमनदियो ने उतरना शुरू कर दिया और वे अपने साथ-साथ पहाड़ी देवदारो और भुर्जो को ले आईं, जो उन पर छा गये।

जगलो की यह लडाई हजारो साल चली। और पराजित सेना के अतिम दस्ते, ऊष्माप्रेमी पेड़, लगातार दक्षिण की तरफ हटते चले गये।

लेकिन जब जंगल आक्रमणकारियो के खिलाफ लडाई मे खेत रहे, तो उन जानवरो का क्या हुआ जो जगलो मे रहते थे?

आधुनिक समय मे जब कोई जगल आग से नष्ट हो जाता है, या काट दिया जाता है, तो उसके कुछ निवासी उसी के साथ खत्म हो जाते हैं, जबकि अन्य बच निकलते हैं। जब कोई देवदार वन काटा जाता है, तो उसके स्वाभाविक निवासी – विषमचचु, स्वर्णचूड़ तथा अन्य पशु-गायब हो जाते हैं।

छायादार देवदार वन मे उनके घरो की जगह एक नये एस्प वन ने ले ली है। नये घर मे अन्य पक्षियो और अन्य पशुओ ने बसेरा ले लिया है।

कई वर्षों के बाद, जब देवदार एस्पो को फिर परास्त कर देते है, तो नया देवदार वन खाली नही होता – वह फिर विषमचचुओ, स्वर्णचूडो और उनके मित्रो से भर जाता है।

जगल का मरण और पुनर्जन्म पेडो और जतुओ के अनिश्चित मरघट के रूप मे नही, वरन एक एकीकृत, सूत्रबद्ध विश्व की तरह होता है।

हिमयुग में जो हुआ, वह भी यही था। जब उष्णकटिबंधीय वन लुप्त हुए, तो जंतु-जगत भी अदृश्य हो गया। भीमकाय हाथी गायब हो गये, गैंडे और हिप्पोपोटैमस (दरियाई घोड़े) दक्षिण की ओर चले गये, और प्रागैतिहासिक मानव का सबसे बड़ा शत्रु – असिदंत व्याघ्र – अंतत समाप्त हो गया।

कितने ही छोटे जंतु और पक्षी भी मर गये या दक्षिण की ओर भाग गये।

और कुछ हो ही नहीं सकता था। हर जंतु अपनी नन्ही दुनिया से, अपने जंगल से बधा होता है। जब यह वन-विश्व नष्ट होने लगा, तो इसने अपने कितने ही निवासियों को नष्ट कर दिया।

जब पेड़, झाड़िया और ऊची घासें सूख गईं, तो जो जंतु उनके नीचे छिपे रहते थे और उनसे पोषण पाते थे, उन्होंने अपने आपको बिना भोजन और आश्रय के पाया। लेकिन जब ये शांत शाकभक्षी जानवर मर गये, तो अन्य जंतु भी – वे मांसभक्षी जानवर, जो उन्हें खाया करते थे – भूखों मर गये।

"पोषण-चक्रो" में एक साथ बधे पशु और पेड़-पौधे अपने जंगल के मरने पर सभी मर गये।

यह पुराने जमाने जैसी ही बात थी कि जब जहाज डूबते थे, तो चप्पू चलानेवाले गुलाम भी साथ ही डूब जाया करते थे, क्योंकि वे अपने चप्पुओं के साथ सांकलो से बधे होते थे।

किसी न किसी प्रकार बच पाने के लिए जानवर के लिए अपनी जंजीरों को तोड़ना आवश्यक था – जिस भोजन का वह आदी था, उसे उससे दूसरे प्रकार का भोजन जुटाना आरंभ करना था, उसे अपने पंजे और दांत बदलने थे और अपने को ठंड से बचाने के लिए लंबे बाल या समूर उगाना था। दूसरे शब्दों में, स्वयं शु को ही बदलना था।

हम जानते हैं कि पशु के लिए बदलना कितना कठिन है। घोड़े के इतिहास की और उसे हमारे परिचित सुम के रूप में पांव में एक ही उंगलीवाला जानवर बनने में कितने लाख वर्ष लगे, इसकी याद करो।

दक्षिणी जंतु के लिए उत्तरी वन में जीवित बच पाना बहुत कठिन था।

और मानो यही काफी न हो, उत्तरी जंगलों के झबरे निवासी भी उनके साथ-साथ दक्षिण की ओर आने लगे। ये रोएंदार गैंडे, मैमथ, गुफावासी शेर और गुफावासी रीछ थे, जो सब-के-सब उत्तरी जंगलों में मजे से रहते थे।

उनकी मोटी, बाल भरी चमड़ी ही उनकी सबसे बड़ी निधि थी। ठंड मैमथ और रोएंदार गैंडे का कुछ भी न बिगाड़ सकती थी, उनके गरम, झबरी खाल थी, लेकिन दक्षिणी हाथी, गैंडे और हिप्पोपोटैमस की बात बिलकुल उलटी थी।

कुछ उत्तरी पशुओं ने सरदी से बचने का एक अलग तरीका निकाल लिया – वे गुफाओं में छिप गये।

उत्तरी पशुओ को नये जगल मे भोजन ढूढने मे बहुत मेहनत न करनी पडती थी, क्योंकि यह उनका अपना वन था. यह उनकी अपनी दुनिया थी।

नष्ट हुए वनो के पशुओं को अब उत्तरी वनो के नये स्वामियों के साथ लडना पडा।

क्या अब भी यह समझाने की जरूरत है कि उनमे से इतने कम क्यों बच पाये?

लेकिन प्रागैतिहासिक मनुष्य? उसका क्या हुआ?

प्रागैतिहासिक मानव प्रकटतः बचनेवालो मे ही था, क्योंकि, अगर वह भी मेत रहता, तो तुम यह पुस्तक न पढते होते।

जो लोग गरम देशो मे रहते थे, उन्हें जीने के लिए ठड के खिलाफ लडना नही पडा, यद्यपि वहा भी जलवायु ठडा हो गया था।

लेकिन उन मनुष्यो की हालत ज्यादा खराब थी, जिन्होंने बढती हिमनदियो के पूरे प्रकोप को झेला।

हर साल वे एक नई ही सर्दी का सामना करते। यह सर्दी भयानक थी। वे कापते और ठड मे जमे जाते और अपने को और अपने बच्चो को गरम रखने के लिए वे एक साथ सटते जाते।

भूख, भयानक पाला और जगली जानवर मानो उन्हे पूरी तरह भस्म करने पर ही तुले हुए थे।

अगर इन प्रारंभिक मनुष्यो को इस बात का ज्ञान होता कि उनके आसपास सभी जगह क्या हो रहा है, तो वे शायद यह मान लेते कि ससार का अंत आ गया है।

दुनिया का अंत

ससार के खात्मे की कितनी ही बार भविष्यवाणी की जा चुकी है।

मध्ययुग मे आकाश मे अपनी लाल-लाल दुम छोडता कोई पुच्छल तारा गुजर जाता तो लोग अपने पर सलीब का निशान बनाते और कहते

"दुनिया का अत निकट आ गया है।"

ताऊन की महामारी, जिसे "काली मौत" कहते थे, जब पूरे-के-पूरे शहरों और गावो को भस्म कर देती और कब्रिस्तानो को भर देती, तो लोग कहते

"दुनिया का अत निकट आ गया है।"

लडाई और भुखमरी के मुसीबत भरे समयो पर अंधविश्वासी लोग घबराकर फुसफुसाते:

"दुनिया का अत निकट आ गया है।"

लेकिन दुनिया फिर भी खत्म हुई नही।

अब हम जानते है कि आकाश मे पुच्छल तारे के नजर आने का लोगो के भविष्य मे कोई सरोकार नही है। पुच्छल तारा सूर्य के चारो ओर अपने पथ पर

नगा जा रहा है और उसे इस बात की जरा भी परवाह नहीं है कि पृथ्वी पर अंधविश्वासी लोग उसे क्या समझते हैं।

हम यह भी जानते हैं कि भूख और महामारियों और लड़ाइयों तक का यह मतलब नहीं कि दुनिया का अंत निकट आ गया है। मुख्य बात विपदा का कारण जानना है। अगर कारण पता हो, तो आपदा पर पार पाना आसान हो जाता है।

लेकिन दुनिया के अंत की भविष्यवाणी केवल अज्ञानी और मूर्ख लोग ही नहीं करते। ऐसे वैज्ञानिक भी हैं, जो संसार और मानव-जाति के अंत की भविष्यवाणी करते हैं। उदाहरण के लिए, उनमें से कुछ कहते हैं कि मानव-जाति अंततः ईंधन की कमी से खत्म हो जायेगी। वे इसे यह कहकर सिद्ध करने की कोशिश करते हैं कि कोयले के भंडार लगातार क्षीण होते जा रहे हैं, जंगल उजड़ रहे हैं और पेट्रोलियम इतना कम है कि अगली कुछ सदियों से ज्यादा वह नहीं चल सकेगा। जब धरती पर ईंधन नहीं रहेगा, कारखानों में मशीनें रुक जायेंगी, रेलगाड़ियां चलना बंद कर देंगी, सड़कों और घरों में बत्तियां बुझ जायेंगी। उनका कहना है कि अधिकांश लोग सर्दी और भूख से मर जायेंगे, और जो बच रहेंगे, वे फिर जंगली बर्बर मनुष्य बन जायेंगे।

ऐसा भविष्य तो सचमुच भयानक है!

लेकिन क्या यही सच है?

पृथ्वी के गर्भ में ईंधन के विराट भंडार हैं। कितने ही नये पेट्रोलियम और कोयला-क्षेत्र मिल रहे हैं और भी मिलेंगे।

जंगल केवल काटे ही नहीं जाते, हर साल नये लगाये भी जाते हैं।

लेकिन ईंधन के भंडार अगर किसी दिन खत्म भी हो जायें, तो क्या इससे हमारी जानी-पहचानी दुनिया सचमुच खत्म हो जायेगी?

नहीं, वह खत्म नहीं होगी।

क्योंकि ईंधन ही धरती पर प्रकाश और ऊर्जा का अकेला स्रोत नहीं है। ऊर्जा का मुख्य स्रोत सूर्य है। हमें कभी क्षण भर के लिए भी इस बात पर संदेह नहीं करना चाहिए कि हमारे ईंधन के भंडारों का अंत होते-होते मनुष्य सूर्य की ऊर्जा से रात के समय सड़कों पर और घरों में प्रकाश करना, रेलगाड़ियों और मशीनों को चलाना – यहां तक कि खाना पकाना भी सीख लेंगे। पहले प्रायोगिक सौर बिजलीघर और पहले सौर पाकगृह अस्तित्व में आ भी चुके हैं।

"ठहरो जरा," दुनिया को दफ़नाने की जिन्हें जल्दी है, वे कहते हैं, "आखिर सूरज भी कभी ठंडा हो ही जायेगा। यह इतना गरम और तेजस्वी नहीं है, जितने कि कुछ नये सितारे हैं। लाखों-करोड़ों वर्ष बीत जायेंगे, सूर्य का ताप गिर जायेगा और धरती ठंडी हो जायेगी।

"बड़ी-बड़ी हिमनदियां मनुष्य की बनाई कमजोर इमारतों को दुनिया के चेहरे पर से मिटा देंगी। उष्णकटिबंधीय देशों में बर्फ़ानी रीछ घूमा करेंगे। तब लोग किसी हरगिज नहीं बच पायेंगे।"

इसमे कोई शक नही, अगर कोई नया हिमयुग आ गया, तो जिंदगी बडी मुश्किल हो जायेगी। लेकिन प्रागैतिहासिक मानव तक इतनी बर्फ मे ज़िंदा बच गया था! तो फिर भविष्य के लोग (जिनकी सेवा मे आज की अपेक्षा कही उन्नत विज्ञान होगा) बर्फ में क्यो मर जायेगे?

हम तो आज यह भविष्यवाणी तक कर सकते हैं कि वे सर्दी पर पार पाने के लिए क्या-क्या करेगे। वे सूर्य की ऊर्जा की अनुपूर्ति के लिए परमाण्विक ऊर्जा का उपयोग करेंगे।

और पदार्थ के नाभिकों में जितनी परमाण्विक ऊर्जा है, उसकी कभी इति नहीं होगी। अकेली समस्या उसे निरापद ढग से मुक्त करने की है।

लेकिन बस, अब हमे अति सुदूर भविष्य को छोड देना चाहिए और सुदूर अतीत की तरफ, प्रागैतिहासिक मानव के पास लौट आना चाहिए।

दुनिया का आरंभ

अगर मनुष्य ने अपने को प्रकृत वन से बाधनेवाली जजीरों को तोडा होता, तो जगल की दुनिया के नाश के साथ उसका भी खात्मा आता।

लेकिन दुनिया खत्म नही हो रही थी, वह बस, बदल भर रही थी। पुरा दुनिया का अत हो रहा था और एक नई दुनिया का आरभ हो रहा था।

इस नई, बदली हुई दुनिया मे ज़िंदा बच पाने के लिए आदमी को खुद बदल पडा। वह जिस भोजन को खाने का अभ्यस्त था, वह गायब हो गया, उसे और अलग तरह के खाने को प्राप्त करना सीखना पडा। चीड और देवदार के उसके दातो के लिए बहुत कडे थे और दक्षिणी वनो के नरम और रसभरे फलो एकदम भिन्न थे।

गरम दिन ठडे हो गये। सूरज जैसे धरती को भूल ही गया और लोगो को उस गरम और तेज प्रकाश के बिना रहना सीखना पडा।

उन्हे भरसक जल्दी बदलना था।

सभी जीवित प्राणियो मे अकेला प्रागैतिहासिक मानव ही जल्दी बदलने यो था।

अब तक उसने अपने आपको इस तरह बदलना सीख लिया था कि जिस तर कोई और जतु नही बदल सकता था।

मनुष्य का सबसे बडा शत्रु असिदत व्याघ्र अचानक एक सबी, खालदार गा नही चढा सकता था, लेकिन मनुष्य ऐसा कर सकता था—इसके लिए उसे बस एक भालू को मारना और उसकी खाल उतारना भर था।

असिदत व्याघ्र आग नही जला सकता था, मगर आदमी जला सकता था क्योंकि वह आग के उपयोग से परिचित हो चुका था।

प्रागैतिहासिक मानव इतनी प्रगति कर चुका था कि अपने को बदल सक था और प्रकृति को सुधार सकता था।

और तब से अब तक कई हजार वर्ष बीत चुके हैं, हम आज भी देख सकते हैं कि प्रागैतिहासिक मानव ने प्रकृति में क्या परिवर्तन किया और वह स्वयं किस तरह बदला।

पत्थर के पृष्ठोंवाली पोथी

हमारे पैरों के नीचे की पृथ्वी एक विशाल ग्रंथ की तरह है।

पृथ्वी की पपड़ी की हर परत, निक्षेपों की हर परत इस ग्रंथ का एक-एक पृष्ठ है।

हम इन पृष्ठों के सबसे ऊपरी और अंतिम पृष्ठ पर रहते हैं। सबसे पहले पृष्ठ महासागरों की तली को छूते हैं, वे समुद्र की तली और महाद्वीपों के आधार के नीचे बहुत गहराई पर हैं।

आधुनिक मनुष्य इन पृष्ठों तक, इस पोथी के प्रारंभिक अध्यायों तक अभी नहीं पहुंच पाया है। हम केवल अनुमान ही कर सकते हैं कि वहां क्या लिखा हुआ है।

लेकिन पृष्ठ ऊपरी सिरे के जितने पास हैं, हमारे लिए इस पुस्तक को पढ़ना उतना ही सरल है।

लावा की उष्ण धाराओं से झुलसे और विकृत हुए कुछ पृष्ठ हमें बताते हैं कि पर्वतमालाएं कैसे पृथ्वी की सतह पर उभरीं। अन्य पृष्ठ हमें यह बताते हैं कि धरती की पपड़ी महासागरों को उनके तटों से धकेलती और फिर वापस लाती हुई किस प्रकार उठी और गिरी।

कुछ पृष्ठों की परतें ऐसी सफेद हैं जैसे समुद्री सीप – जिनसे वे सचमुच बनी हैं। कुछ पृष्ठ कोयले जैसे काले हैं।

और ये सचमुच कोयले के ही बने हैं। इनकी काली राशि हमें उन विशाल वनों की कहानी बताती है, जो कभी धरती पर छाये हुए थे।

किसी पुस्तक में चित्रों की ही भांति, जहां-तहां हमें किसी पत्ती का छापा या किसी पशु का कंकाल मिल जाता है, जो उस झुरमुट में रहा करता था, जो बाद में कोयला बन गया।

और इस तरह एक पृष्ठ से दूसरे पृष्ठ पर जाते हुए हम पृथ्वी के पूरे इतिहास को पढ़ सकते हैं। और किताब के बिलकुल ऊपरी छोर पर एकदम अंतिम पृष्ठों में ही हम अंत में एक नये नायक – मनुष्य – तक आते हैं। शुरू में तो ऐसा लग सकता है कि वह इस विशाल ग्रंथ का मुख्य पात्र है ही नहीं, क्योंकि भीमकाय प्रागैतिहासिक हाथी या गैंडे के सामने वह अत्यंत क्षुद्र लगता है। लेकिन जैसे-जैसे हम आगे पढ़ते जाते हैं, हम देखते हैं कि हमारा नया नायक साहस प्राप्त करता जाता है और पहले स्थान पर आ जाता है।

फिर ऐसा समय आता है, जब मनुष्य पुस्तक का केवल मुख्य पात्र ही नहीं, उसका एक लेखक भी बन जाता है।

देखो, यहां, एक नदीतटीन कगार में, हिमयुग के निक्षेपों में, हम एक सुस्पष्ट बनी काली रेखा पाते हैं।

यह काली लकीर काठकोयले ने बनाई थी। काठकोयले की एक परत भला रेत और मिट्टी के बीच अचानक कहां से आ गई? शायद यह जंगल की आग से आई हो?

लेकिन जंगल की आग जली लकड़ी भरा एक बड़ा क्षेत्र छोड़ती है, जबकि काठकोयले की यह रेखा बहुत ही छोटी है। काठकोयले की इतनी छोटी परत चूल्हे में जले अलाव से ही बन सकती थी।

और केवल आदमी ही अलाव जला सकता था।

इसके अलावा, आग के पास ही हम कार्यरत मनुष्य के हाथों के अन्य चिह्न भी पाते हैं—चकमक पत्थर के औज़ार और शिकार में मारे गये जानवरों की टूटी हुई हड्डियां।

आग और शिकार ही दो चीज़ें थीं, जिनसे प्रागैतिहासिक मानव ने हिम के आक्रमण का उत्तर दिया।

मनुष्य जंगल को छोड़ता है

उत्तर के निष्ठुर वनों में प्रागैतिहासिक मनुष्य को मुश्किल से ही कोई भोजन मिलता था। और इसलिए उसने जंगलों में ऐसे शिकार की खोज में भटकना शुरू किया, जो किसी एक जगह इस तरह नहीं पड़ा रहता था कि कोई आये और उसे उठा ले, वरन जो भाग जाता था, छिप जाता था और सामना करता था।

गरम देशों तक में मनुष्य अपने भोजन में मांस को अधिकाधिक शामिल करता गया।

मांस अधिक पुष्टिकर था, मांस मानव को अधिक शक्ति देता था और काम के लिए अधिक समय रहने देता था। और मनुष्य का वर्धनशील मस्तिष्क अधिक पोषक आहार का तकाज़ा करता था।

मनुष्य के औज़ार जितने सुधरते गये, शिकार उसके लिए उतना ही अधिक महत्वपूर्ण होता गया।

अगर दक्षिण में शिकार के बिना काम चल सकता था, तो उत्तर में उसके बिना बच पाना असंभव था।

मनुष्य अब छोटे-छोटे जंतुओं से अपनी भूख नहीं बुझा सकता था। उसे बड़े शिकार की ज़रूरत थी। गहरी हिमवर्षा, कड़ाके की सर्दियां और [illegible] में शिकार को कठिन बना देती थीं। और इसका मतलब था कि मनुष्य को [illegible] का भंडार रखना पड़ता था।

प्रागैतिहासिक मानव किस प्रकार के पशुओं का शिकार करता था?

जंगल में तब अनेक बड़े-बड़े पशु रहा करते थे। [illegible] जंगली सूअर जंगल में [illegible] करते थे। लेकिन मैदानों में कहीं अधिक बड़े पशु थे। [illegible]

बडे बालोवाले भीमकाय मैमथ चलते-फिरते पहाड़ों की तरह धीरे-धीरे चले जाते थे।

जहा तक प्रागैतिहासिक मानव का सवाल था, उसके लिए यह सब जाता हुआ, बचकर भागता हुआ मास था, उसे पीछा करने के लिए उकसानेवाला लालच था।

और इसलिए अपने शिकार की खोज में प्रागैतिहासिक मानव ने अपने पैतृक वनो को छोड़ दिया।

मनुष्य के छोटे-छोटे गिरोह मैदानों मे अधिकाधिक दूर जाने का साहस करने लगे। हमे उनके अलावो और शिकार के पड़ावो के चिह्न जंगलो से बहुत दूर-दूर ऐसी जगहो मे मिलते हैं, जहां बिनाई करनेवाला मनुष्य न पहले कभी रहा था, और न ही रह सकता था।

शब्द को सही तरीक़े से पढ़ो

शिकार मे मारे गये जानवरो की हड्डियां प्रागैतिहासिक मानव के पड़ावो पर अब तक मिल सकती हैं। इनमें घोड़ो की पीली पड़ी पसलियां, बैलो की सींगदार खोपडिया और जगली सूअरों के वक्र दांत भी हैं। कभी-कभी हड्डियो के बड़े-बड़े अबार मिलते हैं, जिसका मतलब सिर्फ यह हो सकता है कि मनुष्य लंबे अरसे तक एक ही जगह पर रुका रहा था।

सबसे दिलचस्प बात यह है कि बाइसनों, जगली सूअरो और घोडो की हड्डियो मे वैज्ञानिको को कभी-कभी मैमथों की विशाल हड्डियां भी मिल जाती हैं – बड़ी-बड़ी खोपडिया, लबे, वक्र बाहरी दात, कद्दूकश जैसे भीतरी दात और बड़ी-बड़ी टांगें, जिन्हे देहो से काट लिया गया था।

ऐसे भीमकाय जानवर को मारने के लिए सचमुच बडी ताकत और हिम्मत चाहिए थी। लेकिन इसकी देह को टुकडों में काटने और फिर उन्हे पड़ाव तक घसीट ले जाने के लिए और भी ज्यादा ताकत चाहिए थी।

हर टाग लगभग एक-एक टन की थी और खोपडी तो इतनी बडी थी कि आदमी उसमें आसानी से समा सकता था।

विशेष हाथीमार बदूकों से लैस आज के शिकारी भी मैमथ को मारना आसान नही पायेंगे। लेकिन प्रागैतिहासिक मानव के पास कोई बदूक न थी। उसके पास तो बस चकमक का चाकू और चकमक का दोहरे फलवाला भाला ही था।

जो हजारों साल बिनाई करनेवाले मनुष्य को शिकारी से अलग करते हैं, उनके दौरान चकमक के औज़ार बदलकर ज्यादा अच्छे और अलग-अलग तरह के हो गये।

प्रागैतिहासिक मनुष्य चकमक का चाकू या फल इस तरह बनाता था। पहले वह पत्थर की ऊपरी परत तोड़ लेता था। इसके बाद वह उभारो को बराबर करता था और परत को चिप्पियों में तोड़ लेता था। अत में वह इन चिप्पियों से अलग-अलग के काटनेवाले औज़ार बना लेता था।

चकमक जैसी अनुपयुक्त और दुसाध्य चीज से चाकू बना पाने के लिए बहुत ममय और बडी निपुणता दरकार थी। यही कारण है कि प्रागैतिहासिक मानव अपने बनाये चकमक के औजार का उपयोग करने के बाद उसे फेंक नही देता था, वरन उसे बहुत सभालकर रखता था और जब भी वह भोथरा हो जाता था, उसे तेज करता था। मनुष्य अपने औजारो को इसलिए मूल्यवान समझता था कि वह खुद अपने श्रम और समय की कदर करता था।

लेकिन वह कुछ भी क्यो न करता, उसका पत्थर पत्थर ही रहता। मैमथ जैसे पशु से सामना होने पर चकमक के दोहरे फलवाला भाला एक बेकार हथियार ो जाता। मैमथ की मोटी चमडी उसे इस्पात की चादर की तरह बचाकर रखती थी।

फिर भी प्रागैतिहासिक मनुष्य मैमथो को मारता ही था। इसका प्रमाण हमे विभिन्न पडावो पर मिली मैमथ की खोपडियो और बाहरी दातो से मिलता है।

आदिम-मानव किस प्रकार मैमथ पर हमला करता था? इसे वही समझ सकता , जो "आदमी" शब्द का मतलब समझता है, "आदमी" से मतलब "आदमी" ही, बल्कि "लोग"। औजार बनाना, शिकार करना, आग जलाना, आश्रयस्थल ाना और जमीन को जोतना सीखने के लिए एक अकेले आदमी ने नही, बल्कि ो ने अपने हाथ और दिमाग एक साथ लगाये। अकेले आदमी ने नही, बल्कि मानव समाज ने करोड़ो लोगो के श्रम से संस्कृति और विज्ञान का निर्माण ।

एक आदमी अकेला सदा जगली जानवर ही बना रहता। मानव समाज के भीतर श्रम ने जानवर को मनुष्य मे परिणत कर दिया।

ऐसी किताबे है, जिनमे प्रागैतिहासिक शिकारी को एक प्रारभिक रॉबिसन के प मे चित्रित किया गया है, जिसने बडी मेहनत करते-करते अत मे स्वय बडी ति कर ली।

लेकिन अगर प्रागैतिहासिक मनुष्य ऐसा ही साधु होता और अगर सबसे प्रारभिक ष्य बड़े-बड़े गिरोहो मे नही, परिवारो मे रहते, तो वे कभी लोग नही बन सकते ौर मानव संस्कृति का कभी निर्माण नही कर सकते थे।

और रॉबिसन क्रूसो का हाल भी वैसा नही था, जैसा डेनियल डेफो ने उसे ा है। डेफो ने अपनी पुस्तक एक जहाजी की सच्ची जीवन-गाथा के आधार खी थी, जिसने एक जहाज पर बगावत भडकाई थी। उसे महासागर के बीच टे-से निर्जन टापू पर मरने के लिए छोड दिया गया था। कई वर्षो के बाद छ समुद्री यात्री उस टापू पर आये और उन्हे यह आदमी बिलकुल जगली जैसा मिला। बूढा मल्लाह बोलना तक लगभग भूल चुका था और मनुष्य की अपेक्षा गली जानवर जैसा ही अधिक लगता था। अगर आधुनिक मनुष्य भी अकेलेपन मे दमी बने रह पाना आसान नही पाता, तो प्रागैतिहासिक मनुष्य का तो कहना क्या!

जिस अकेली चीज ने उन्हे लोग बनाया, वह यह थी कि वे साथ-

दावत, जिसका वे इतने लबे समय से इतजार कर रहे थी। वे जानते थे कि मैमथ का मतलब है कई—बहुत सारे—दिनो के लिए भोजन का भडार।

प्रतियोगिता का अंत

अन्य पशुओ के साथ मनुष्य की प्रतियोगिता सात्मे पर आ गई थी। सभी पशुओ मे से सबसे बडे को जीतकर वह विजय रेखा पर पहुचनेवाला सबसे पहला था।

धरती पर लोगो की सख्या तेजी से बढने लगी। हर सहस्राब्दी और हर शताब्दी के साथ धरती पर अधिकाधिक मनुष्य होते गये यहा तक कि अत मे दुनिया के हर भाग मे ही मनुष्य रहने लगे।

मानव जाति के साथ जो हुआ वह अन्य पशुओ मे से किसी के भी साथ कभी नही हो सकता था।

मिसाल के लिए, क्या खरगोश आदमियो जितने बहुसख्यक हो सकते है?

निस्सदेह नही। क्योकि जैसे ही खरगोशो की सख्या मे बडी वृद्धि होती, भेडियो की सख्या मे भी बहुत बढती हो जाती और भेडिये इस बात को सुनिश्चित कर लेते कि आसपास बहुत खरगोश न बच रहे।

इसलिए जगली जानवरो की सख्या बेहिसाब बढती नही जा सकती। एक सीमा ऐसी है, जिसे पार करना उनके लिए बहुत कठिन है।

मनुष्य कभी का उन सीमातो और परिसीमनो से निकल चुका है, जो प्रकृति ने उस जैसे जतुओ के लिए स्थापित की थी। जब वह औजार बनाना सीख चुका, तो वह ऐसे खाद्य खाने लगा, जो उसने पहले कभी नही खाये थे, और इस प्रकार उसने प्रकृति को अपने प्रति अधिक उदार होने के लिए विवश किया। उन जगहो मे, जहा पहले एक ही मानव यूथ भोजन पाने की जुगत करता था, जल्दी ही दो या तीन मानव यूथो का रह पाना सभव हो गया।

और फिर, जब उसने बडे पशुओ का शिकार करना शुरू किया, तो उसने सीमातो को और भी दूर धकेल दिया।

अब मनुष्य के लिए दिन भर खाने के पौधो की तलाश करते रहने की आवश्यकता नही रही। बाइसन, घोडे और मैमथ उसके लिए उसकी चराई का काम कर दिया करते थे। इन चौपायो के झुड स्तेपियो मे ढेरो घास खाते विचरण करते थे। दिन-प्रतिदिन, वर्ष-प्रतिवर्ष वे टनो घास को सेरो मास मे परिणत करते हुए वजन मे बढते चले जाते थे। और जब आदमी किसी बाइसन या मैमथ को मारता, तो वह शक्ति तथा ऊर्जा के एक ऐसे भडार का स्वामी बन जाता, जो कई वर्षो के दौरान बना था।

शक्ति के इन भडारो की उसे बडी जरूरत थी, क्योकि आधी या बर्फीले तूफान या कडी ठड मे वह शिकार पर नही जा सकता था। वह समय बीत चुका था जब सर्दी-गरमी दोनो मे मौसम खुशगवार रहता था।

फिर भी एक परिवर्तन दूसरा परिवर्तन लाया।

अगर आदमी भोजन का भंडार रखने लगा, तो इसका यह मतलब था कि उसे एक ही जगह पर ज्यादा समय तक रहना पड़ता था। आखिर, वह कोई मैमथ की लाश लादे-लादे तो घूम नहीं सकता था।

जमकर रहने के उसके पास और भी कारण थे। पुराने ज़माने में हर पेड़ रात भर के लिए उसका बसेरा बनकर उसे जंगली जानवरों से बचाता रहता था। अब वह इन जानवरों से इतना नहीं डरता था। लेकिन उसका एक नया शत्रु आ गया था – जाड़ा।

मनुष्य को अपने को ठंड और बर्फीली आंधियों से बचाने के लिए एक विश्वसनीय आश्रय की आवश्यकता थी।

मनुष्य अपनी दुनिया ख़ुद बनाता है

आखिर वह समय आ गया जब मनुष्य ने अपने चारों तरफ़ की बड़ी ठंडी दुनिया के बीचोबीच खुद अपनी नन्ही और गरम दुनिया बनाना शुरू कर दिया। कहीं किसी गुफा के मुंह पर या किसी खड़ी चट्टान के बाहर निकले छोर के नीचे उसने वर्षा, बर्फ़ और हवा को बाहर रखने के लिए टहनियों का और पशुओं की खाल का आकाश बनाया। अपनी नन्ही-सी दुनिया के बीच में उसने एक सूरज जलाया, जो रात में चमकता था और सर्दियों में उसे गरमाता था।

कुछ प्रागैतिहासिक शिकारियों के पड़ावों की स्थलियों पर अभी तक डेरों की बल्लियों के गड्ढों के चिह्न हैं। बल्लियों के घेरे के केंद्र में झुलसे हुए पत्थर हैं, जो कभी प्रागैतिहासिक मानव के कृत्रिम सूर्य, चूल्हे को घेरे हुए थे।

डेरे की दीवारें कभी की धूल बन चुकी हैं, लेकिन हम बिलकुल ठीक तरह से जानते हैं कि वे कहां खड़ी थीं। नन्ही दुनिया के भीतर की ज़मीन की पूरी ही सतह हमें उन मनुष्यों की कहानी बताती है, जिन्होंने उसका निर्माण किया था।

चकमक के चाकू और खुरचनियां, चकमक के टुकड़े और छिपटियां, जानवरों की टूटी हुई हड्डियां, कोयला और चूल्हे की राख – ये सब रेत और मिट्टी के साथ मिलकर एक ऐसे मिश्रण में मिली हुई हैं, जो तुम्हें प्रकृति में कभी नहीं मिलेगा।

जैसे ही हम कबके विलुप्त डेरों की अदृश्य दीवारों के बाहर कुछ कदम रखते हैं, हमें मानव उद्यम की याद दिलानेवाली हर चीज़ गायब हो जाती है। अब ज़मीन में दबे औज़ार नहीं हैं, चूल्हे से निकले कोयले और राख नहीं है, जानवरों की टूटी हुई हड्डियां नहीं हैं।

इस तरह मनुष्य द्वारा निर्मित एक दूसरे ही प्रकार की प्रकृति एक अदृश्य रेखा द्वारा अपने आसपास की हर चीज़ से अलग है।

कार्यरत मानव के हाथो के चिह्नो की खोज मे जमीन को खोदते हुए, चकमक के चाकुओ और खुरचनियो की जाच करते हुए और हजारो साल से ठडे पडे किसी चूल्हे के कोयलो को अलग करते हुए हम इस बात को एकदम स्पष्टतापूर्वक देख लेते है कि पुरानी दुनिया का अत मानव-जाति का अत नही था, क्योकि मनुष्य ने अपने लिए एक विशेष छोटी-सी दुनिया का निर्माण कर लिया था।
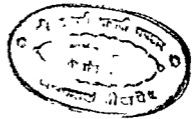
अतीत की पहली यात्रा

बाइसन और मैमथ के शिकारियो के पडावो मे पाये जानेवाले औज़ा
चकमक के दो औज़ार सबसे ज्यादा मिलते है—एक बडा और आकार मे नि
है, उसे दो तरफ से तेज किया गया है दूसरा—तेज़ किनारेवाला और
गोलाकार।

इन औज़ारो मे से प्रत्येक प्रकटत विशिष्ट कामो के लिए बनाया गया थ
अन्यथा उनकी सूरत-शक्ल मे इतना अतर न होता।

हम यह कैसे जान सकते है कि इनमे से प्रत्येक किस-किस काम के लिए था
औज़ारो को देखने के बाद, औज़ारो की जाच करने के बाद हम इसका कुछ
अनुमान कर सकते है।

फिर भी, सबसे अच्छा यही रहता कि हम पापाण युग मे वापस चले जाते
ौर देखते कि प्रागैतिहासिक मानव अपने पत्थर के औज़ारो से किस तरह काम
या करते थे।

उपन्यासो मे हमे अक्सर इस तरह का वाक्य मिल जाया करता है— चलिये,
वर्ष पीछे आ जाये।" ऐसी पुस्तक के लेखक के लिए यह बाये हाथ का मेल
है, क्योकि वह जब और जहा चाहे, लौट सकता है। अपने पात्रो के बारे
वह हर तरह की कहानी गढ सकता है।
लेकिन अपनी अत्यत यथार्थतापूर्ण कहानी मे हम क्या करे? हमे यहा कुछ भी
गढने का अधिकार नही है। फिर, जब पीछे की तरफ जाते है, तो हमे एक-दो
नही, दमियो हज़ार साल पीछे जाना पडता है।

फिर भी, हम पापाण युग मे जा सकते है।

अगर तुम ऐसा करना चाहो, तो तुम्हे ऐसी लबी यात्रा के लिए जरूरी सारा
साज़-सामान जुटाना होगा। सबसे पहले तो तुम्हारे पास किरमिच का तबू होना
चाहिए, जो तह करने पर पीठ पर लादने के थैले मे आ सके। इसके अलावा तबू
की बल्लिया, रस्सियो को बाधने के खूटे और खूटो को गाडने के लिए एक छोटा
ोडा भी होना चाहिए। तुम्हे ढेरो और चीज़ो की भी जरूरत होगी—धूप मे
अपने सिर को बचाने के लिए एक टोप, एक पतीला, एक स्टोव, एक मग, एक
छुरी, एक चम्मच और एक काटा, एक कुतुबनुमा और एक नक्शा। जब तुम अपना
सारा सामान बाध चुको और अपनी बदूक ले लो (क्योकि पापाण युग मे भोजन
के लिए शिकार किये बिना नही जिया जा सकता), तो जाओ, और समुद्री जहाज
का एक टिकट खरीद लो।

मगर टिकट बेचनेवाले से यह न कहना कि तुम पापाण युग जा रहे हो। अगर
तुमने ऐसा किया, तो हो सकता है कि वह समझ ले कि तुम पगला गये हो और
डाक्टर को बुला भेजे, और तुम जहाज पर नही, बल्कि पागलखाने मे
पहुच जाओ।

तुम्हारे टिकट पर यह नही लिखा होगा—"पापाण युग की वापसी यात्रा"।

तुम्हारा टिकट एकदम सामान्य होगा, जिस पर तुम्हारे गंतव्य स्थान की जगह "मेलबोर्न" लिखा होगा।

टिकट जेब में आते ही तुम आस्ट्रेलिया जानेवाले जहाज़ पर सवार हो सकते हो। कुछ ही सप्ताह मे तुम मेलबोर्न पहुच जाओगे।

बात यह है कि धरती पर अभी तक ऐसी जगहे हैं, जहां लोग पत्थर के औज़ारो से काम करते हैं। इसका मतलब है कि दूरत्व की यात्रा काल की यात्रा का स्थान ले सकती है। वैज्ञानिक जब यह जानना चाहते है कि सुदूर अतीत मे लोग किस तरह रहा करते थे, तो वे यही करते हैं।

आस्ट्रेलिया में ऐसे आदिवासी हैं, जो अभी तक पत्थर के औज़ारो का इस्तेमाल करते हैं। हम यह जानने के लिए कि वे इन औज़ारों का किस प्रकार उपयोग करते है, इन्ही लोगो के पास जा रहे हैं।

जगह-जगह काटेदार झाडियो से भरे सूखे और निर्जन स्तेपी को पार करके हम आस्ट्रेलियाई शिकारियों के पडावो पर पहुचेंगे। नदी के किनारे पेड़ो के झुरमुट के नीचे हम उनके छाल और डालियो के बने डेरों के पास पहुच जाएगे।

डेरो के पास बच्चे धमा-चौकडी मचा रहे हैं, जबकि पास ही ज़मीन पर पालथी मारे बैठे पुरुष-औरते काम कर रहे हैं। झबरे केशों और लंबी दाढीवाला एक बूढा शिकार मे मारे कंगारू की खाल उतार रहा है। बूढा चकमक के एक तिकोने छुरे का इस्तेमाल कर रहा है। अरे, यह तो चकमक का बिलकुल वैसा ही बड़ा औज़ार है, जिसके बारे मे जानने के लिए हम इस लबी यात्रा पर निकले है!

पास ही एक औरत चकमक के लबे और पतले टुकडे से कपड़ो के लिए खाल काट रही है। और फिर हम एक जानी-पहचानी चीज़ को देखते हैं: ठीक ऐसी ही लबी और पतली छुरिया यूरोप मे प्राचीन शिकारियों के पडावो में भी मिली हैं।

ठीक है, आस्ट्रेलिया के आदिवासी प्रागैतिहासिक लोग नही हैं। हज़ारो ही पीढिया उन्हे उनके प्रागैतिहासिक पूर्वजो से अलग करती हैं। उनके पत्थर के औज़ार अतीत के एक सामान्य अवशेष है। लेकिन अतीत के ये अवशेष हमारी कितनी ही पहेलियो को हल कर सकते हैं। आस्ट्रेलियाई आदिवासियो को काम करते देखते हुए हमारे ध्यान मे यह बात आती है कि चकमक का बड़ा तिकोना टुकड़ा आदमी का औज़ार है, शिकारी का औज़ार है, जिससे वह फदे मे पड़े हुए या घायल जानवर को मारता है, उसे चीरता है और उसकी खाल उतारता है।

औज़ारो मे श्रम के विभाजन का मतलब है कि पाषाण युग के शिकारियो के समय से लेकर लोगों मे भी श्रम का विभाजन था।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, अलग-अलग प्रकार के कामों की जटिलता बढती चली गई। उन सबको करने के लिए कुछ लोगों को एक प्रकार का काम करना पड़ता, तो औरों को और प्रकार का। जब पुरुष शिकार पर गये हुए होते, तो औरतें चूल्हो के पास खाली न बैठा करतीं। वे नये डेरे बनातीं, जानवरों की खालों से पोशाकें काटतीं, खाने योग्य मूल इकट्ठा करतीं और खाने के भडार बनातीं।

लेकिन श्रम का एक और भी विभाजन था—वृद्ध और तरुण लोगों के श्रम का।

हज़ार-वर्षीय स्कूल

हर काम को करने का कौशल होना चाहिए, और यह आसमान से नही
जानकारी, ज्ञान ऐसी चीजे है, जिन्हे औरो से प्राप्त किया जाता है।
अगर हर बढई को कुल्हाडे, आरे और रदे की ईजाद करने और फिर
उपयोग कैसे हो, इसका पता लगाने के साथ शुरुआत करनी पडती, तो दुनि
एक भी बढई न होता।

अगर, भूगोल पढने के लिए हममे से प्रत्येक को पहले दुनिया का चक्कर ल
ड़े, अमरीका को फिर खोजना पडे, अफ्रीका का अनुसधान करना पडे, एवरेस्ट
र चढना पडे, हर अतरीप और स्थलडमरूमध्य को जाकर गिनना पडे
हम चाहे हज़ार साल जी ले, तो भी सबके लिए काफी समय हमारे
पास नही होगा।

हम जितना आगे बढते जाते है हमे उतना ही अधिक सीखना पडता है। हर
नई पीढी को अपने से पहली पीढी से लगातार अधिक मात्रा मे ज्ञान सूचना और
आविष्कार प्राप्त होते हैं।

दस साल हम प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय मे लगा देते है। भविष्य मे
लोगो को इससे भी ज्यादा पढना पडेगा क्योकि हर वर्ष विज्ञान के हर क्षेत्र मे नई
खोजे लेकर आता है। और विज्ञानो की सख्या भी बढती ही जाती है। पहले एक
भौतिकी ही थी। अब भू-भौतिकी और ज्योति-भौतिकी भी हैं। पहले केवल रसायन
था। अब भू-रसायन, जीव-रसायन और कृषि-रसायन भी है। नवीन ज्ञान के दबाव
विज्ञान इस तरह बढते, खडित होते और गुणित होते है मानो वे सजीव कोशि-
काए हो।

कुदरती तौर पर पाषाण युग मे कोई भी विज्ञान न था। मानव-जाति का अनुभव
सग्रहीत होना शुरू ही हो रहा था। मनुष्य के उद्यम आज की तरह जटिल न थे।
यही कारण था कि किसी व्यक्ति को अपनी शिक्षा पूरी करने मे अधिक समय न
लगता था। फिर भी, ऐसी भी चीजे थी, जो उसे भी सीखनी पडती थी।

उसे जानवर का पता लगाने और उसकी खाल उतारने डेरा बनाने चकमक
का चाकू बनाने के लिए ज्ञान और निपुणता की आवश्यकता थी।

और ज्ञान आता कहा से है?

मनुष्य किसी भी निपुणता को लेकर नही पैदा होता। वह उसे प्राप्त करता है।
इससे यह पता चलता है कि मनुष्य जतु-जगत को कितना पीछे छोड आया है।
जानवर अपने सभी जिदा औज़ारो और उनके उपयोग के ज्ञान को अपने माता-
पिता से वशानुक्रम से प्राप्त करता है, बिलकुल वैसे ही, जैसे वह अपनी चमडी
का रग या बदन की आकृति को प्राप्त करता है। सूअर को यह नही सीखना पडता
कि जमीन को कैसे उखाडे, क्योकि वह विशेषकर इसी काम के लिए एक मज़बूत
थूथनी को लिये पैदा होता है। मूषक को यह नही सीखना पडता कि लकडी को
कैसे काटे, क्योकि उसके पैने कुतरनेवाले दात अपने-आप उग आते है। यही कारण
है कि पशुओ की न वर्कशॉप होती है, न मदरसे।

अडे मे अभी-अभी निकला बतख का नन्हा-सा चूज़ा तुरत ही मक्खियो और
पानी के कीडो को पकडने लगता है, यद्यपि उसे कभी किसी ने यह सिखाया नही

तुम्हारा टिकट एकदम सामान्य होगा, जिस पर तुम्हारे गतव्य स्थान की जगह "मेलबोर्न" लिखा होगा।

टिकट जेब मे आते ही तुम आस्ट्रेलिया जानेवाले जहाज़ पर सवार हो सकते हो।

कुछ ही सप्ताह मे तुम मेलबोर्न पहुच जाओगे।

बात यह है कि धरती पर अभी तक ऐसी जगहे हैं, जहा लोग पत्थर के औज़ारो से काम करते हैं। इसका मतलब है कि दूरत्व की यात्रा काल की यात्रा का स्थान ले सकती है। वैज्ञानिक जब यह जानना चाहते हैं कि सुदूर अतीत मे लोग किस तरह रहा करते थे, तो वे यही करते हैं।

आस्ट्रेलिया में ऐसे आदिवासी हैं, जो अभी तक पत्थर के औज़ारो का इस्तेमाल करते है। हम यह जानने के लिए कि वे इन औज़ारो का किस प्रकार उपयोग करते हैं, इन्ही लोगो के पास जा रहे हैं।

जगह-जगह कांटेदार झाड़ियो से भरे सूखे और निर्जन स्तेपी को पार करके हम आस्ट्रेलियाई शिकारियों के पडावों पर पहुचेगे। नदी के किनारे पेडो के झुरमुट के नीचे हम उनके छाल और डालियो के बने डेरों के पास पहुंच जाएगे।

डेरो के पास बच्चे धमा-चौकड़ी मचा रहे हैं, जबकि पास ही ज़मीन पर पालथी मारे बैठे पुरुष-औरते काम कर रहे हैं। झबरे केशों और लबी दाढीवाला एक बूढा शिकार मे मारे कगारू की खाल उतार रहा है। बूढा चकमक के एक तिकोने छुरे का इस्तेमाल कर रहा है। अरे, यह तो चकमक का बिलकुल वैसा ही बडा औज़ार है, जिसके बारे मे जानने के लिए हम इस लबी यात्रा पर निकले हैं!

पास ही एक औरत चकमक के लबे और पतले टुकड़े से कपड़ों के लिए खाल काट रही है। और फिर हम एक जानी-पहचानी चीज को देखते हैं: ठीक ऐसी ही लबी और पतली छुरिया यूरोप मे प्राचीन शिकारियों के पडावो मे भी मिली हैं।

ठीक है, आस्ट्रेलिया के आदिवासी प्रागैतिहासिक लोग नही हैं। हज़ारो ही पीढिया उन्हे उनके प्रागैतिहासिक पूर्वजों से अलग करती हैं। उनके पत्थर के औज़ार अतीत के एक सामान्य अवशेष है। लेकिन अतीत के ये अवशेष हमारी कितनी ही पहेलियो को हल कर सकते हैं। आस्ट्रेलियाई आदिवासियो को काम करते देखते हुए हमारे ध्यान में यह बात आती है कि चकमक का बडा तिकोना टुकडा आदमी का औज़ार है, शिकारी का औज़ार है, जिससे वह फदे मे पडे हुए या घायल जानवर को मारता है, उसे चीरता है और उसकी खाल उतारता है।

औज़ारो मे श्रम के विभाजन का मतलब है कि पाषाण युग के शिकारियो के समय से लेकर लोगों मे भी श्रम का विभाजन था।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, अलग-अलग प्रकार के कामों की जटिलता बढती चली गई। उन सबको करने के लिए कुछ लोगों को एक प्रकार का काम करना पडता, तो औरो को और प्रकार का। जब पुरुष शिकार पर गये हुए होते, तो औरतें चूल्हों के पास खाली न बैठा करतीं। वे नये डेरे बनातीं, जानवरों की खालो से पोशाकें काटतीं, खाने योग्य मूल इकट्ठा करतीं और खाने के भडार बनातीं।

लेकिन श्रम का एक और भी विभाजन था — बूढ़े और तरुण लोगों के श्रम का।

हज़ार-वर्षीय स्कूल

हर काम को करने का कौशल होना चाहिए, और यह आसमान से नही टपकता। जानकारी, ज्ञान ऐसी चीजे है, जिन्हे औरो से प्राप्त किया जाता है।

अगर हर बढई को कुल्हाडे, आरे और रदे की ईजाद करने और फिर उनका उपयोग कैसे हो, इसका पता लगाने के साथ शुरूआत करनी पडती, तो दुनिया मे एक भी बढई न होता।

अगर, भूगोल पढने के लिए हममे से प्रत्येक को पहले दुनिया का चक्कर लगाना पडे, अमरीका को फिर खोजना पडे, अफ्रीका का अनुसधान करना पडे, एवरेस्ट पर चढना पडे, हर अतरीप और स्थलडमरूमध्य को जाकर गिनना पडे, तो हम चाहे हजार साल जी ले, तो भी सबके लिए काफी समय हमारे पास नही होगा।

हम जितना आगे बढते जाते है, हमे उतना ही अधिक सीखना पडता है। हर नई पीढी को अपने से पहली पीढी से लगातार अधिक मात्रा मे ज्ञान, सूचना और आविष्कार प्राप्त होते है।

दस साल हम प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय मे लगा देते है। भविष्य मे, लोगो को इससे भी ज्यादा पढना पडेगा, क्योकि हर वर्ष विज्ञान के हर क्षेत्र मे नई खोजे लेकर आता है। और विज्ञानो की सख्या भी बढती ही जाती है। पहले एक भौतिकी ही थी। अब भू-भौतिकी और ज्योति-भौतिकी भी है। पहले केवल रसायन था। अब भू-रसायन, जीव-रसायन और कृषि-रसायन भी है। नवीन ज्ञान के दबाव मे विज्ञान इस तरह बढते, खडित होते और गुणित होते है, मानो वे सजीव कोशिकाए हो।

कुदरती तौर पर पाषाण युग मे कोई भी विज्ञान न था। मानव-जाति का अनुभव सग्रहीत होना शुरू ही हो रहा था। मनुष्य के उद्यम आज की तरह जटिल न थे। यही कारण था कि किसी व्यक्ति को अपनी शिक्षा पूरी करने मे अधिक समय न लगता था। फिर भी, ऐसी भी चीजे थी, जो उसे भी सीखनी पडती थी। उसे जानवर का पता लगाने और उसकी खाल उतारने, डेरा बनाने चकमक का चाकू बनाने के लिए ज्ञान और निपुणता की आवश्यकता थी।

और ज्ञान आता कहा से है?

मनुष्य किसी भी निपुणता को लेकर नही पैदा होता। वह उसे प्राप्त करता है। इससे यह पता चलता है कि मनुष्य जतु-जगत को कितना पीछे छोड आया है।

जानवर अपने सभी जिंदा औजारो और उनके उपयोग के ज्ञान को अपने माता-पिता से वशानुक्रम मे प्राप्त करता है, बिलकुल वैसे ही, जैसे वह अपनी चमडी के रग या बदन की आकृति को प्राप्त करता है। सूअर को यह नही सीखना पडता कि जमीन को कैसे उखाडे, क्योकि वह विशेषकर इसी काम के लिए एक मजबूत थूथनी को लिये पैदा होता है। मूषक को यह नही सीखना पडता कि लकडी को कैसे काटे, क्योकि उसके पैने कुतरनेवाले दात अपने-आप उग आते है। यही कारण है कि पशुओ की न वर्कशापे होती है, न मदरसे।

अडे मे से अभी-अभी निकला बत्तख का नन्हा-सा चूजा तुरत ही मक्खियो और पानी के कीडो को पकडने लगता है, यद्यपि उसे कभी किसी ने यह सिखाया नही

है। कोयल के बच्चे अजनबी घोंसलों में अपने असली मां-बाप की निगरानी के बिना बड़े होते हैं। लेकिन शरद के आते ही वे अपने-आप चल पड़ते हैं और अपना अफ्रीका का रास्ता ढूंढ़ लेते हैं, यद्यपि किसी ने उन्हें पहले कभी यह रास्ता नहीं दिखाया है।

जानवर अपने माता-पिता से बेशक बहुत-कुछ सीखते हैं। लेकिन मदरसे से मिलती-जुलती भी किसी चीज का कोई सवाल नहीं उठ सकता।

लेकिन मनुष्य के प्रसंग में बात ही दूसरी है।

मनुष्य अपने औज़ार आप बनाता है, क्योंकि वह उन्हें लिये-लिये पैदा नहीं होता।

इसका मतलब है कि वह इन औज़ारों के उपयोग या अपनी निपुणताओं को अपने माता-पिता से वंशानुक्रम से नहीं प्राप्त करता, वरन अपने बड़ों या शिक्षकों से उन्हें सीखता है।

लोग अगर व्याकरण या गणित का ज्ञान लिये-लिये पैदा होते, तो हर आलसी छात्र को इससे बड़ी खुशी होती। फिर स्कूलों की कोई जरूरत न रहती। लेकिन इससे उसे सचमुच अधिक लाभ न होता। अगर स्कूल न होते, तो लोग सब कुछ भी न सीख पायेंगे। मनुष्य की सभी क्षमताएं और ज्ञान एक ही स्तर पर रहेंगे, जैसे, मिसाल के लिए, किसी गिलहरी की क्षमताएं।

मानव-जाति के सौभाग्य से, लोग जन्मजात क्षमताएं लिये-लिये पैदा नहीं होते। वे पढ़ते और सीखते हैं, और हर पीढ़ी मानव-अनुभव के सामान्य भंडार में कुछ अपना योगदान करती है। यह अनुभव लगातार बढ़ता रहता है। मानव-जाति अज्ञान की सीमाओं को अधिकाधिक दूर हटाती चली जाती है।

हज़ार-साला स्कूल ने, मानव-उद्यम के शिक्षालय ने मनुष्य को वह बनाया है, जो वह आज है। इसने उसे उसके विज्ञान, इंजीनियरी और कला का ज्ञान दिया है, इसने उसे उसकी सांस्कृतिक थाती प्रदान की है।

मनुष्य ने हज़ार-साला स्कूल में पहले-पहल पाषाण युग में प्रवेश किया। बूढ़े, अनुभवी शिकारी तरुणों को शिकार की कठिन कला सिखाया करते थे – जानवर को उसके पदचिह्नों से कैसे पहचाना जाये, जानवर को डराकर भगाये बिना उसके पास कैसे पहुंचा जाये।

आजकल का शिकार भी बड़ी निपुणता की अपेक्षा करता है। फिर भी, अब शिकारी बनना उस समय की अपेक्षा बहुत आसान है, खासे इसलिए ही कि शिकारी को अब अपने हथियार नहीं बनाने पड़ते। पाषाण युग में शिकारी अपनी [illegible] और चाकू और अपने दांतेदार फलोंवाले भालों के लिए फल अपने आप बनाता [illegible] दे। इसमें पुराना शिकारी अपने कबीले के कमउम्र छोकरों को काफी कुछ सिखा सकता था।

औरतों के कामों के लिए दूसरी ही तरह की निपुणताओं की आवश्यकता [illegible] [illegible] औरतें [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] – सभी [illegible] [illegible] थीं।

हर कबीले में बूढ़े, अनुभवी कार्य-कुशल [illegible] करते थे, जो [illegible]

मे अर्जित ज्ञान और अनुभव को अपने कबीले के बडी उम्र के लडके-लडकियो को प्रदान कर दिया करते थे।

लेकिन निपुणता और अनुभव दूसरे को कैसे सौंपा जाता है?

जो तुम जानते हो, उसे दूसरो को दिखा और समझाकर।

मनुष्य को इसके लिए भाषा की जरूरत हुई।

जानवर को अपने बच्चो को यह नही सिखाना पडता कि वे अपने जिंदा औजारो– अपने पजो और दांतो – का उपयोग कैसे करे। यही कारण है कि पशुओ के लिए बोलना जानना जरूरी नही है।

लेकिन प्रागैतिहासिक मानव के लिए बोलना जरूरी था।

उसे उन कामो के लिए भाषा की आवश्यकता थी, जो औरो के साथ मिलकर किये जाते थे। लोगो को पुरानी पीढी का अनुभव और निपुणताए नई पीढी को देने के लिए शब्दो की जरूरत थी।

पाषाण युग के प्रागैतिहासिक लोग एक-दूसरे से कैसे बात किया करते थे?

अतीत की दूसरी यात्रा

चलो, एक बार फिर अतीत मे चले. लेकिन इस बार हम यह पहले से ज्यादा आसानी से करने की कोशिश करेंगे।

दूर देशो को जाने के लिए कभी-कभी तुम्हारे लिए जहाज मे बैठकर यात्रा करना जरूरी नही होता. तुम घर से बाहर निकले बिना भी ऐसा कर सकते हो।

रेडियो की घुडी को घुमाकर तुम अपने कमरे से पैर भी निकाले बिना देश के किसी भी भाग को पहुच सकते हो। अगर तुम्हारे पास टेलीविजन हो, तो तुम मीलो दूर के लोगो को केवल सुन ही नही, देख भी सकते हो। रेडियो और टेली-विजन ने बडी दूरियो पर पार पाने मे हमारी सहायता की है।

लेकिन उन लोगो को हम कैसे देख और सुन सकते है, जो हमसे बहुत-बहुत वर्षों की दूरी पर है?

क्या कोई ऐसा भी साधन है, जो हमे काल की यात्रा पर ले जा सके, जैसे रेडियो या टेलीविजन हमे दिशा की यात्रा पर ले जाते है?

हा, है – सिनेमा।

परदे पर हम सारी दुनिया को देख सकते है. और सिर्फ आज की ही दुनिया नही, बल्कि कुछ पहले की दुनिया भी।

अभी हम [illegible] मे आर्कटिक अभियान के सूरमाओ की वापसी के स्वागत का नज़ारा देख रहे है। फिर हम एक विशाल सफेद गुब्बारे को ऊपर उठता देखते है, जो धरती से एक नये उपग्रह जैसा दिखाई देता है। यह समतापमडल का अनु-सधान करनेवाला गुब्बारा है।

फिर भी, सिने कैमरा एक ऐसे जहाज की तरह है, जो हमे अतीत मे अपने आविष्कार के काल से ज्यादा पीछे नही ले जा सकता। और सिने कैमरा काफी हाल की ईजाद है।

पहली "बोलती" फिल्म १९२७ मे ही बनी थी।

अगर हम काल में पीछे की तरफ़ की अपनी यात्रा जारी रखें, तो हमें एक जहाज से दूसरे जहाज़ पर सवार होना पडेगा और जहाज़ उत्तरोत्तर ख़राब ही होते जायेंगे – भाप के जहाज से पालवाला जहाज और पालवाले जहाज़ से मामूली डोंगी।

अब हम मूक फिल्म का परदा ले लेते हैं। हम अतीत को देख सकते हैं, मगर अब उसे सुन नही सकते।

फिर फोनोग्राफ आता है। हम एक आवाज़ सुन सकते हैं, मगर यह नही देख सकते कि कौन बोल रहा है, यद्यपि उसकी आवाज़ में ज़िंदा बोली की सभी धुनें हैं।

और फिर हमारे जहाज हमें उन तटो के आगे नही ले जा सकते, जिनते वे खुद पानी मे उतारे गये थे।

कोई फिल्म हमें वह नही दिखा सकती, जो १८६५ के पहले हुआ था।

और कोई फोनोग्राफ १८७७ के पहले बोले गये शब्द फिर नही सुना सकता, जिस साल वह पहले-पहल ईजाद किया गया था।

आवाज़े क्षीण हो जाती हैं और पुस्तको की नीरस, बराबर-बराबर छपी लाइनों मे केवल अक्षरो के रूप मे रह जाती हैं।

पुराने फैशन के छविचित्रो और डेग्यूरिओटाइपो (प्रारंभिक फोटो चित्रों) में बस निश्चल मुस्कानें और निगाहें ही देखने को मिलती है।

किसी पुराने पारिवारिक एलबम को उठाकर देखो। हरे मखमली आवरण और कासे के कब्जों के नीचे तुम कितनी ही पीढ़ियों की ज़िंदगी देख लोगे।

एक मोटे कागज पर हम उन्नीसवी सदी के आठवें दशक में छोटी-छोटी लड़कियां जैसी पोशाक पहनती थी, वैसी ही पोशाक पहने एक बालिका का धूमिल चित्र देखते है। वह एक अलकृत उद्यान की बाड पर – जैसी तुम फोटोग्राफरों के स्टूडियो में ही देख सकते हो – टिकी खडी है।

उसके बाद, उसी पन्ने पर सफेद गाउन पहने दुलहन मोटे, सजे दूल्हे के साथ खडी है। उगली मे बड़ी अगूठीवाला उसका हाथ सगमर्मर के अधकटे खभे पर टिका है। दूल्हा अपनी दुलहन से कम-से-कम तीस साल बड़ा लगता है, जिसकी आंखें बिलकुल पहले चित्र की बालिका जैसी ही भोली और भयग्रस्त हैं।

और यह रहा उसका चालीस या पचास साल बाद का चित्र। तुम उसे मुश्किल मे ही पहचान पाओगे। सिर पर बधे काले लैस के रूमाल के नीचे उसका माथा झुर्रियो से भरा हुआ है, उसकी आखे आज्ञाकारी और थकी हुई हैं, उसके गाल पिचके हुए हैं। तसवीर के पीछे स्टूडियो का निशान है – कैमरा पकड़े एक देवदूत। और देवदूत के ऊपर बुढापे से कापते हाथ मे लिखी एक पक्ति है – "अपनी प्यारी पोती को उसकी स्नेहालु दादी की ओर से।"

एलबम के एक ही पृष्ठ पर, एक व्यक्ति की पूरी जीवनी है।

चित्र जितने पुराने हैं, पात्रों की मुद्राओं या अभिव्यजनाओं को वे उतना ही कम पकड़ पाते है। आज हम दौड़ते घोड़े की सवारी या पानी में गोता मारते तैराक का चित्र आसानी से ले सकते हैं। लेकिन प्रारंभिक फोटोग्राफर के पास चित्रकार एक विशेष कुरसी होती थी, जिसमें वह चित्र खिचवानेवाले के सिर और धड़ को जकड दिया करता था, ताकि वह ज़रा भी न हिल-डुल सके। फिर कैमरा के

क्या बात है कि चित्रो मे ये लोग अकडे हुए और अजीब-अजीब नजर आते है और जरा भी स्वाभाविक नही लगते।

लेकिन १८३८ के पहले कोई फोटो नही लिया गया था। जैसे-जैसे हम अपना सफर जारी रखते है, हमे अधिकाधिक अतीत के दूसरे साक्षियो पर ही पूरी तरह आश्रित होना पडता है, यद्यपि वे कैमरा जैसे यथार्थ या वस्तुनिष्ठ नही है।

अतीत का कल्पना-चित्र बनाने के लिए हमे साक्षियो की उस गवाही की तुलना करनी होगी, जिसे कला-प्रदर्शनगृहो, अभिलेखागारो और पुस्तकालयो मे सरक्षित रखा गया है।

तब सैकडो साल यो ही गुज़र जायेगे, जैसे राजमार्ग पर मील के पत्थरो पर लिखी सख्याए निकल जाती है।

१४४० के साल पर आकर हमे फिर बदली करनी पडेगी। इसके पहले छपी हुई किताबे नही थी। छापे के साफ काले अक्षरो की जगह प्राचीन लिपिकार की आडी-तिरछी लिपि ले लेती है।

उसकी पर की कलम चर्मपत्र पर धीरे-धीरे चलती है और हम उसके पीछे-पीछे कदम-ब-कदम, अक्षर-अक्षर करके अतीत की तरफ चलते चले जाते हैं।

चर्मपत्र की पुस्तकों से श्रीपत्र पेपाइरस पर लिखे लेखो और उनसे मदिरो की पत्थरो की दीवारो पर खुदे शिलालेखो पर जाते-जाते हमारी यात्रा हमे अधिकाधिक पीछे की तरफ लेती जाती है।

अतीत के लोगो से हमे मिलनेवाली लिखाई अधिकाधिक विचित्र और रहस्यमय होती जाती है।

आखिर, लिखाई भी गायब हो जाती है और अतीत की आवाजे खामोश हो जाती है।

अब क्या हो?

तब हम मिट्टी मे मनुष्य के चिह्नो की तलाश करते है हम बिसरे हुए समाधि-स्थलो को खोदते है, प्राचीन औज़ारो, पुराने आश्रयस्थलो के पत्थरो, कभी के ठडे पडे चूल्हो के कोयलो की जाच करते हैं।

अतीत के ये सभी अवशेष हमे बताते है कि आदमी कैसे रहता और काम करता था।

लेकिन क्या वे हमे यह भी बता सकते है कि मनुष्य कैसे बोलता और सोचता था?

बिन-बोली बोली

गुफाओ के भीतर या प्रागैतिहासिक शिकारियो के शिविरस्थलो पर वैज्ञानिको को अक्सर स्वय प्रागैतिहासिक लोग, या यह कहो कि उनके अवशेष, मिले है।

१९२८ में सोवियत पुरातत्त्वविदो को सिफेरोपोल के निकट किइक-कोबा गुफा मे एक आदिम-मानव के अवशेष मिले। कंकाल गुफा मे खुदे एक चौकोर गड्ढे मे दफन था। पास ही, निकटवर्ती चट्टानो मे सुरक्षित, उन्हे एक बालशिशु के अवशेष और चकमक के कुछ औज़ार भी मिले।

पाषाण युग का ऐसा ही एक और शिविरस्थल उज़्बेकिस्तान में तेशिक ताश गुफा में मिला था।

प्रागैतिहासिक शिकारी एक पहाड़ी दर्रे के ढाल पर रहते थे और संभवतः उनके पैर बहुत सधे हुए थे, क्योंकि उनका मुख्य शिकार पहाड़ी बकरी थी, जो एक ऐसा जानवर है जिसे पकड़ना और मारना बहुत मुश्किल है।

कोई आठ साल के एक बच्चे की खोपड़ी और हड्डियां उसी गुफा में पाषाण के औज़ारों और जानवरों की हड्डियों के साथ मिली थीं।

प्राचीन पाषाण युग के मनुष्यों के अवशेष रूस में ही नहीं, बल्कि कई अन्य देशों में भी मिले हैं। वस्तुतः, अमरीका को छोड़कर वे हर महाद्वीप पर मिले हैं।

चूंकि ऐसी पहली खोज जर्मनी के राइन प्रांत की निआंडर घाटी में हुई थी, पुरातत्त्वविदों ने इनको निआंडरथाल-मानव का नाम दिया है।

अपने नायक को हम अब निआंडरथाल-मानव कहेंगे। हमने उसे एक नया नाम दे दिया है, क्योंकि उसे उसके पूर्वज सिनैंथ्रोपस से जो लाखों वर्ष अलग करते हैं उनमें वह एकदम बदल गया है।

उसकी कमर ज़्यादा सीधी है, उसके हाथ अधिक दक्ष हैं, उसका चेहरा मनुष्य से ज़्यादा मिलता है।

लेखक प्रायः आम तौर पर अपने नायक के मस्तक को बड़ी श्रद्धा और बड़े विस्तार के साथ बताते हैं। मिसाल के लिए, वे ऐसी-ऐसी अभिव्यक्तियों का उपयोग करते हैं – "उसकी चमकती आंखें", "उसकी [illegible] सीधी नाक", "[illegible]"। लेकिन उसके मस्तिष्क के आकार की बात कोई भी नहीं करता।

हमारी बात दूसरी है। हमारे नायक के मस्तिष्क का आकार हमारे लिए वास्तविक महत्त्व का है और इसमें हमारी दिलचस्पी उसकी आंखों के रंग या बालों के रंग से कहीं ज़्यादा है।

निआंडरथाल-मानव की खोपड़ी की [illegible] करने के बाद हम यह कहने [illegible] होते हैं कि उसका मस्तिष्क सिनैंथ्रोपस के मस्तिष्क से बड़ा है।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

उसका नीचा माथा उसकी आंखों के ऊपर आगे को निकला हुआ है। उसके दांत तिरछे हैं और उसके मुंह से बाहर निकले हुए हैं।

निआंडरथाल-मानव का माथा और ठोडी दो लक्षण हैं, जो उसे हमसे इतना भिन्न बनाते हैं। उसका माथा पीछे की तरफ जाता है और ठोडी लगभग है ही नहीं।

एक ऐसी खोपड़ी में, जिसमें मुश्किल से ही कोई माथा है, जो मस्तिष्क है, उसमें आधुनिक मनुष्य के मस्तिष्क के कुछ भाग हैं ही नहीं। कटी हुई ठोडीवाला निचला जबड़ा अभी मनुष्यों की बोली के लिए अनुकूलित नहीं हुआ है।

ऐसे माथे और ऐसी ठोडीवाला आदमी न हमारी तरह सोच सकता था और न बोल सकता था।

फिर भी, प्रागैतिहासिक मानव को बोलना पड़ता ही था। मिल-जुलकर किया गया काम बोली की अपेक्षा करता था, क्योंकि जब कई लोग किसी काम को एक साथ करते होते हैं, तो उन्हें उसके बारे में आपस में सहमत होना पड़ता है। आदमी तब तक इंतज़ार नहीं कर सकता था जब तक उसका माथा विकसित और उसका जबड़ा ज़्यादा बड़ा न हो जाये, क्योंकि तब उसे हज़ारों वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ती।

लेकिन वह औरों के साथ बात कैसे करता था?

वह जो कुछ कहना चाहता था, उसे कहने के लिए अपने सारे शरीर का उपयोग करके वह बात करने की भरसक कोशिश करता था। अभी तक उसके बोलने का कोई विशेष अंग न था, और इसलिए वह अपने चेहरे की पेशियों, अपने कंधों और पैरों और सबसे अधिक अपने हाथों का उपयोग करता था।

तुमने कभी कुत्ते से बात करने की कोशिश की है? कुत्ता जब अपने मालिक को कुछ समझाना चाहता है, तो वह उसकी आंखों में देखता है, अपनी थूथनी चुभाता है, अपने पंजे उसकी गोद में रखता है, अपनी दुम हिलाता है, उत्कंठा के मारे पसरता और जंभाइयां लेता है। वह शब्दों का उपयोग नहीं कर सकता और इसलिए उसे अपना अभिप्राय व्यक्त करने के लिए अपनी सारी देह का — नाक के सिरे से लेकर दुम के छोर तक — उपयोग करना पड़ता है।

प्रागैतिहासिक मानव भी नहीं जानता था कि शब्दों को कैसे कहे। लेकिन उसके हाथ थे, और वे उसकी अपनी बात समझाने में सहायता करते थे। वह काम के लिए अपने हाथों का उपयोग करता था, मगर उसे अपने काम के लिए भाषा की भी आवश्यकता थी।

यह कहने के बजाय कि "इसे काटो", प्रागैतिहासिक मानव हवा को अपने हाथों से काटा करता था; यह कहने के बजाय कि "इसे मुझे दो", वह अपना हाथ आगे फैला दिया करता था; यह कहने के बजाय कि "यहां आओ", वह अपना हाथ अपनी तरफ हिलाया करता था। अपने हाथों की सहायता के लिए वह अपनी आवाज़ का उपयोग करता था — दूसरे आदमी का ध्यान आकर्षित करने और उसे अपने हाथों के इशारे देखने के लिए मजबूर करने के लिए वह गरजता था या गुर्राता था या चिल्लाता था।

लेकिन हमे यह कैसे मालूम ?

ज़मीन मे हमे जो हर टूटा हुआ चकमक का औज़ार मिलता है, वह भाषा का एक-एक टुकड़ा है। लेकिन इशारो के टूटे टुकड़े हम कहा पा सकते है? हम उन हाथो के इशारो को कैसे पुनर्निर्मित कर सकते है, जो कभी के धूल बन चुके है?

बोलते हाथ

ज्यादा दिन नही हुए, एक अमरीकी आदिवासी लेनिनग्राद आया था। वह निमेपू (जिसका मतलब है "छिदी हुई नाकवाले") कबीले का था। जेम्स फेनीमोर कूपर ने टोमहाक से लैस जिन अमरीकी आदिवासियो की इतनी चर्चा की है, उनसे वह ज़रा भी नही मिलता था।

अमरीकी आगंतुक मकासिन (हिरन की खाल के जूते) नही पहने था और न उसके सिर पर परो का शिरोभूषण ही था। वह सूट पहने था और अंग्रेज़ी और अपने कबीले की भाषा – दोनो ही फर्राटे से बोलता था।

लेकिन इन दोनो भाषाओ के साथ-साथ वह एक तीसरी भाषा भी जानता था – एक ऐसी भाषा, जो अमरीकी आदिवासियो मे हजारो वर्षों से बची रही है।

यह दुनिया की सबसे सरल भाषा है। अगर तुमने इसका अध्ययन करने का निश्चय किया, तो तुम्हे व्याकरण और शब्दरूप नही सीखने पड़ेगे, उसमे विशेषण, कृदन्त या क्रियाविशेषण कुछ भी नही हैं, जो हममे से कितनो ही के लिए सिरदर्द है। सही उच्चारण बायें हाथ का खेल होगा, क्योकि तुम्हे किसी भी चीज़ का उच्चारण करना ही नही पड़ेगा!

आगंतुक जो तीसरी भाषा बोलता था, वह शब्दो की भाषा थी ही नही, वह इशारो की भाषा थी।

इस भाषा का शब्दकोश शायद कुछ ऐसा होगा।

इशारों की बोली के शब्दकोश का एक पृष्ठ

कमान – एक हाथ एक काल्पनिक धनुष पकड़े है, जबकि दूसरा काल्पनिक प्रत्यंचा को खींच रहा है।

विगवैम (मढ़) – आपस मे जुड़ी उंगलियां एक मढ़ बनाती है।

गोरा आदमी – टोप का किनारा दर्शाने के लिए माथे के ऊपर चलता हाथ।

भेड़िया – दो उंगलियां निकला हाथ, जिनसे दो कान बन जाते है।

खरगोश – ऊपर की ही तरह दो उंगलियां निकला हाथ और [illegible] दर्शाने के लिए [illegible] इशारा।

मछली – एक साथ जुड़ी हुई उंगलियां और तैरती हुई मछली का [illegible] के लिए [illegible] निकला हाथ – मछली की पूंछ [illegible] रही है।

मेंढक – [illegible] उंगलियां [illegible] और [illegible] है।

बादल–बादल दर्शाने के लिए सिर के ऊपर दो मुट्ठिया।

बर्फ–सिर के ऊपर वही दो मुट्ठिया, लेकिन उगलिया धीरे-धीरे खुलकर हिम-कणो की तरह तैरती नीचे आती हैं।

वर्षा–ऊपर की ही तरह सिर के ऊपर दो मुट्ठिया, लेकिन उगलिया तेजी से खुलती है और नीचे लाई जाती हैं।

तारा–दो उगलिया, जो सिर से काफी ऊपर तारे का टिमटिमाना दिखलाने के लिए एक साथ आती है और फिर अलग हो जाती है।

इस भाषा मे हर शब्द हवा मे हाथो से बनाया गया एक-एक चित्र है।

जैसे सबसे पुरानी लिखाई मे शब्द अक्षरो से नही, बल्कि चित्रो से बनते थे सभवत इसी प्रकार सबसे पुराने इशारे भी चित्र-शब्द ही होते थे।

ठीक है, अमरीकी आदिवासी कबीलो की इशारो की भाषा प्रागैतिहासिक मानव की भाषा नही थी। आधुनिक अमरीकी कबीलो की इशारो की भाषा मे कितने ही ऐसे शब्द है, जो किसी भी प्रागैतिहासिक भाषा मे कभी नही मिल सकते थे। कुछ हाल के "चित्रशब्द" ये है

मोटरकार–दो पहियो को दर्शाने के लिए हाथो से दो घेरे दिखाना और फिर काल्पनिक स्टीयरिंग ह्वील को एक बार घुमाना।

रेलगाड़ी–पहिये दिखलाने के लिए हाथो से दो घेरे, और फिर हाथ और बाह से इजन से निकलती भाप दिखलाने के लिए लहरदार इशारा।

ये सबसे नये इशारे हैं। लेकिन हमे इशारो की भाषा के शब्दकोश मे ऐसे इशारे भी मिलते हैं, जो बहुत करके हम तक प्रागैतिहासिक काल से ही आये है।

आग–अलाव से उठता धुआ दिखलाने के लिए हाथ और बाह की ऊपर की तरफ लहरदार हरकत।

काम–हवा को काटता हाथ।

कौन जानता है, सभवत प्रागैतिहासिक लोग जब "काम करो!" कहना चाहते थे, तो हवा को अपने हाथ से काटते ही थे।

हमारी अपनी इशारों की भाषा

हमने अपनी एक निजी इशारो की भाषा को सुरक्षित रखा है।

जब हम "हा" कहना चाहते है, तो हम हमेशा इस शब्द को नही कहते। अक्सर, हम बस सिर हिला देते है।

जब हम कहना चाहते है "वहा", तो हम कभी-कभी अपनी तर्जनी उस ओर उठा देते है।

जब हम किसी का अभिवादन करते है, तो हम झुक जाते हैं। हम अपना सिर हिलाते है, अपने कधे मचकाते है, अपने कधे उठाते और हाथो को फैलाते है, हम त्यौरी चढ़ाते है, होंठ काटते है, किसी की तरफ उगली उठाते है, मेज को थपथपाते है, अपने पैर पटकते है, अपने हाथ हिलाते और मसोसते है, सिर को हाथो मे थामते है, दिल को अपने हाथ लगाते है, अपने हाथ

पसारते हैं, मिलाने के लिए अपना हाथ पेश करते हैं और विदा होते समय चुंबन के इशारे करते हैं।

यह एक पूरी बातचीत है, जिसमें एक भी शब्द नही बोला गया है।

और यह "बिना बोली की भाषा", यह इशारों की बोली खत्म नहीं होना चाहती। ठीक है कि इसमें कुछ अच्छाइयां भी हैं। कभी-कभी एक इशारा एक लंबी वक्तृता से ज्यादा कह सकता है। एक अच्छा अभिनेता खामोश रह सकता है, मगर आध घंटे के भीतर उसकी भौंहे, आंखें और होंठ हमसे सौ से ज्यादा शब्द कह चुके होंगे।

फिर भी, अपनी बोलचाल में इशारों की भाषा के उपयोग को शिष्टतापूर्ण नही समझा जाता।

अगर किसी बात को तुम शब्दों में आसानी से कह सकते हो, तो उसे अपने हाथों या पैरों के उपयोग से कहने की क्या तुक है! आखिर, हम कोई प्रागैतिहासिक लोग तो है नहीं। पैर पटकना, आदमी की तरफ इशारा करना या जीभ निकालना ऐसी आदतें हैं, जिन्हें भूल जाना ही अच्छा।

फिर भी, ऐसे मौके आते ही हैं, जब हमे मूक भाषा की जरूरत पड़ती है।

क्या तुमने कभी दो जहाजों को आपस में झंडों के इशारों से "बात करते" देखा है? हवा, लहरों और कभी-कभी गोलाबारी तक की आवाज के ऊपर अपनी बात पहुंचाने के लिए आदमी को कितनी जोरदार आवाज की जरूरत होगी! ऐसे अवसरों पर हमारे कान काम देना बंद कर देते हैं और हमें अपनी आंखों का सहारा लेना पड़ता है।

तुम संभवतः इशारों की भाषा का अक्सर इस्तेमाल करते हो। कक्षा में जब तुम अध्यापक का ध्यान खींचना चाहते हो, तो तुम अपना हाथ उठा देते हो। और यह ठीक भी है। तीस या चालीस बच्चों के एक साथ बोलने की बात भी सोच सकते हो क्या?

इस तरह हम देखते हैं कि इशारों की भाषा में अच्छाइयां भी हैं, क्योंकि यह इतने हजारों साल बची रही है और अभी तक लोगों के लिए आवश्यक है।

बोली इशारों की भाषा पर विजयी हो गई है, लेकिन पूरी तरह से नहीं। अब विजित विजेता की चेरी हो गई है। यही कारण है कि इशारों की भाषा अब भी कुछ जातियों में नौकरों, अधीनस्थ लोगों और नीचे समझे जानेवालों की भाषा के रूप में ही कायम है।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति के पहले कार्केशिया के आर्मीनियाई मर्दों की औरतें अपने पति के अलावा और किसी पुरुष से बात नहीं कर सकती थीं। अगर स्त्री किसी और आदमी से कुछ कहना चाहती, तो उसे इशारों की भाषा का इस्तेमाल करना पड़ता।

शाम, ईरान तथा दुनिया के कितने ही अन्य प्रदेशों में इशारों की बोलियां मौजूद थीं।

मिसाल के तौर पर, ईरान के शाह के महल में नौकरों चाकरों के लिए सब इशारों की भाषा का ही उपयोग करने की पाबंदी थी। वे शब्दों का प्रयोग ना [illegible]

र सकते थे कि जब वे अपने बराबरवालों में बात कर रहे हों। ये अभागे लोग
ही माने में "वाक् स्वतंत्रता" से वंचित थे।

इसी तरह वर्तमान समय में भी हमें कब के तिरोहित हुए अतीत के अवशेष मिल जाते हैं।

मनुष्य अपने मस्तिष्क का अर्जन करता है

जंगल में हर जानवर उन हजारों ही संकेतों को सुनता और देखता रहता है, जो सभी ओर से उसे तक पहुंचते रहते हैं। कोई डाल तड़कती है – यह कोई दुश्मन हो सकता है – और जानवर भागने या अपनी रक्षा करने के लिए तैयार हो जाता है।

बिजली गिरती है, हवा पत्तियों को डालियों से उड़ाती जंगल को चीरती चली जाती है – जानवर आनेवाले तूफान से बचने के लिए अपने घोंसलों या बिलों में छिप जाते हैं।

जब सड़ती हुई पत्तियों और खुमियों की गंध के साथ मिलती हुई शिकार की गंध नम जमीन पर होकर बहती आती है, तो जानवर गंध पर चलता है और अपने शिकार को पकड़ लेता है।

हर सरसराहट, हर गंध, घास में हर पदचिह्न, हर चीख या सिसकार कुछ-न-कुछ मतलब रखती है और तुरंत ध्यान देने का तकाजा करती है।

प्रागैतिहासिक मनुष्य भी बाहरी दुनिया के संकेतों को सुना करता था। फिर भी, उसने जल्दी ही एक भिन्न प्रकार के संकेतों को समझना भी सीख लिया। ये वे संकेत थे, जो उसके यूथ के लोग उसे भेजते थे।

मिसाल के तौर पर, अगर प्रागैतिहासिक शिकारी को जंगल में बारहसिंघे के पदचिह्न मिलते, तो वह अपने पीछे के और शिकारियों को संकेत करने के लिए *अपना हाथ हिलाता। उन्होंने जानवर को नहीं देखा था, मगर उसके संकेत* उन्हें चौकन्ना कर देते। वे अपने हथियारों को और मजबूती से पकड़ लेते थे मानो उन्होंने बारहसिंघे के बड़े-बड़े सींगों और हिलते हुए कानों को सचमुच देख लिया हो।

जानवर के पदचिह्न एक संकेत थे।

पदचिह्नों के बारे में औरों को बताने के लिए शिकारी के हाथ का सहसा उठना संकेत के बारे में संकेत था।

हर बार जब कोई शिकारी जमीन पर पदचिह्न देखता या झाड़ियों में से जानवर के खिसकने की सरसराहट सुनता, वह इस संकेत के बारे में दूसरे शिकारियों को संकेत भेजता।

इस तरीके से प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिये गये संकेतों के अलावा बोली भी एक और संकेत बन गई, एक ऐसा संकेत, जिसमें कुल के सदस्य एक-दूसरे को संकेत कर सकते थे।

अपनी एक कृति में इवान पावलोव ने मनुष्य की बोली को "संकेत के बारे में संकेत" कहा है।

आरम्भ में ये संकेत मात्र सीधे सादे इशारे थे। ये व्यक्ति के नेत्रों तथा कानों द्वारा ग्रहण किये जाते थे और एक केंद्रीय टेलीफोन स्टेशन की ही तरह उसके मस्तिष्क को भेज दिये जाते थे। जब मस्तिष्क "किसी संकेत के बारे में संकेत" ग्रहण करता - "एक जानवर आ रहा है" - वह तुरंत आदेश दे देता - हाथों, अपना दोहरे फलों वाला भाला कसकर पकड़ लो, आंखो, झाड़ियों पर सावधानी से आंख जमाये रखो, कानों, हर सरसराहट और हर आवाज को सुनो! जानवर अभी आंख और कान की पहुंच के बाहर ही था, लेकिन शिकारी उसके लिए ही तैयार था।

इशारे और सीत्कार जितने अधिक होते, जितने अधिक "संकेतों के बारे में संकेत" मस्तिष्क में पहुंचते, "केंद्रीय स्टेशन" के लिए, जो मनुष्य की खोपड़ी के पालि-क्षेत्र में स्थित है, उतना ही अधिक काम होता। इसका मतलब है कि "केंद्रीय स्टेशन" को बढ़ते रहना पड़ा। मस्तिष्क में लगातार नई-नई कोशिकाएं बनती गई और उनके संयोजन अधिकाधिक जटिल होते गये। स्वयं मस्तिष्क भी बड़ा होता गया।

निआंडरथाल-मानव का मस्तिष्क पियेकेंथ्रोपस के मस्तिष्क से ४०० से ५०० घन सेंटीमीटर ज्यादा बड़ा था। जैसे-जैसे उसका मस्तिष्क विकसित होता गया, प्रागैतिहासिक मानव विचार करना सीखता गया।

जब वह कोई ऐसा संकेत देखता या सुनता, जिसका मतलब "सूरज" था, तो वह सूरज की ही बात सोचता, चाहे उस समय आधी रात ही क्यों न हो।

जब उसे जाकर भाला लाने का संकेत दिया जाता, तो वह भाले की ही सोचता, यद्यपि उस समय वह कहीं नजर नहीं आता था।

मिल-जुलकर किये जानेवाले काम ने मनुष्य को बोलना सिखाया, और जब उसने बोलना सीख लिया, तो उसने विचार करना, सोचना भी सीख लिया।

आदमी को अपना मस्तिष्क प्रकृति से भेंट में नहीं मिला। उसने इसे अपने हाथों के श्रम की बदौलत अर्जित किया।

जीभ और हाथों ने जगह कैसे बदली

अभी जबकि औजार बहुत कम थे, जबकि प्रागैतिहासिक मानव का अनुभव अभी तक बहुत ही सीमित था, दूसरों को अपने हुनर सिखाने के लिए सरलतम इशारे काफी थे।

लेकिन मानव-उद्यम जितना जटिल होता गया, इशारे भी उतने ही जटिल होते गये। हर वस्तु के लिए एक विशेष संकेत होना चाहिए था और संकेत को वस्तु का सही-सही वर्णन देना था। तभी चित्र-संकेत अस्तित्व में आये। प्रागैतिहासिक मानव हवा में पशुओं, औजारों, पेड़ों तथा अन्य वस्तुओं के चित्र बनाता था।

उदाहरण के लिए, अगर वह साही का वर्णन करना चाहता, तो केवल हवा में साही का चित्र ही नहीं बनाता था, वह निमिष मात्र के लिए स्वयं साही बन जाता था। वह औरों को दिखाता कि साही कैसे मिट्टी को खोदती और उसे अपने पंजों से अलग फेंकती है, कैसे उसके कांटे खड़े हो जाते हैं।

इस कहानी को मूक अभिनय द्वारा बताने के लिए प्रागैतिहासिक मनुष्य के लिए अत्यंत सूक्ष्मदर्शी होना आवश्यक था, जो हमारे जमाने में कोई सच्चा कलाकार ही हो सकता है।

जब तुम कहते हो, "मैंने पानी पिया," तो जिस व्यक्ति से तुम कह रहे हो वह तुम्हारे शब्दों से यह नहीं बता सकता कि तुमने पानी गिलास से पिया या बोतल से या चुल्लू से।

जो आदमी अपनी बात को इशारों की भाषा से समझाना अभी नहीं भूला है, वह इसी बात को और तरीके से कहेगा।

वह अपने हाथ को चुल्लू जैसा बनाकर अपने मुंह तक लायेगा और काल्पनिक पानी को आतुरतापूर्वक सुड़प लेगा। उसे देखनेवाले अनुभव कर लेंगे कि पानी कितना सुस्वादु ठंडा और स्फूर्तिदायक है।

हम "पकड़ो" या "शिकार करो" कहते हैं। मगर प्रागैतिहासिक मनुष्य शिकार के पूरे दृश्य का ही अभिनय करता था।

इशारों की भाषा कभी बड़ी अर्थपूर्ण होती है, लेकिन कभी यह बड़ी अपर्याप्त रह जाती है।

वह अर्थपूर्ण थी, क्योंकि वह किसी घटना या वस्तु को बड़ी विशदतापूर्वक चित्रित करती थी। लेकिन वह अत्यंत सीमित भी थी।

इशारों की भाषा में तुम अपनी बाईं आंख या दाईं आंख इंगित कर सकते थे मगर केवल "आंख" कहना बहुत मुश्किल था।

तुम किसी वस्तु का सही-सही वर्णन करने के लिए इशारों का उपयोग कर सकते थे, लेकिन किसी अमूर्त विचार को कोई इशारे व्यक्त नहीं कर सकते थे।

इशारों की भाषा में और भी खामियां थीं। तुम इशारों की भाषा में रात में कुछ भी नहीं कह सकते, क्योंकि अंधेरे में तुम अपने हाथों को चाहे कैसे ही क्यों न हिलाओ, कोई भी नहीं देखेगा कि तुम क्या कर रहे हो। और दिन के उजाले में भी लोग इशारों की भाषा में सदा ही एक-दूसरे को नहीं समझ पाते थे।

स्तेपी के लोग एक-दूसरे से आसानी से इशारों की भाषा में बात कर सकते थे, लेकिन जंगल में, जब शिकारी एक-दूसरे से घनी झाड़ियों से अलग होते थे ऐसा करना असंभव था।

तब जाकर लोगों को अपनी बात समझाने के लिए ध्वनियों की आवश्यकता पड़ी थी।

आरंभ में, प्रागैतिहासिक मनुष्य की जीभ और गला बड़े बेकाबू थे। एक ध्वनि दूसरी से बहुत भिन्न नहीं होती थी। अलग-अलग ध्वनियां गुर्राहट, घोंघों का बिलबिलाहट जैसी लगती थीं। आदमी को अनेक अपनी जीभ से साफ-साफ ध्वनियां निकाल पाने में बहुत लंबा समय लग गया।

पहले जीभ सिर्फ हाथों की सहायता करती थी। लेकिन जैसे-जैसे मनुष्य बोलना सीखता गया, वैसे-वैसे जीभ को ही प्राथमिकता मिलती गई।

ध्वनियो की भाषा, जो पहले हाथों की भाषा की सहायिका थी, वह अब मुख्य और इशारों की भाषा गौण हो गई।

जीभ की गतियां सभी इशारो मे सबसे अधिक अगोचर थीं, लेकिन उनकी सबसे बड़ी अच्छाई यह थी कि उन्हे सुना जा सकता था।

शुरू मे ध्वनियो की भाषा इशारों की भाषा से बहुत मिलती-जुलती थी। वह हर वस्तु और हर हरकत का जैसे एक चित्र थी।

ईव कबीले के लोग सिर्फ "चलना" ही नही कहते। वे कहते हैं–'ज़ो दृज़े-दृज़े'–बधे कदमो से चलना, 'ज़ो बोहो-बोहो'–भारी चाल से चलना, जैसे मोटे आदमी चलते हैं; 'ज़ो बुला-बुला'–तेज़ी से झपटना; 'ज़ो पिआ-पिआ'–छोटे कदमो से चलना, 'ज़ो गोवु-गोवु'–कुछ लंगड़ाते हुए और सिर आगे झुकाकर चलना।

इनमे से प्रत्येक शब्दावली एक-एक ध्वनि-चित्र है, जो व्यक्ति की चाल के हर विवरण का वर्णन करती है। इनमे बंधा कदम, दुबले आदमी का बंधा कदम, अपने घुटने मोड़े बिना अकड़कर चलनेवाले आदमी का बंधा कदम, सब आ जाते हैं। जितनी ही तरह की चालें हैं, उतनी ही शब्दावलियां हैं।

इस प्रकार संकेत-चित्र की जगह अंततः ध्वनि-चित्र ने ले ली।

इस तरह प्रागैतिहासिक मानव ने पहले इशारो और फिर शब्दो के ज़रिये बोलना सीखा।

नदी और उसके स्रोत

अतीत की अपनी यात्राओं के दौरान हमने क्या खोजा है?

जैसे नदी में ऊपर की तरफ जाता अन्वेषक उसका स्रोत खोज निकालता है; उसी प्रकार हम भी उस नन्ही-सी धारा पर आ गये हैं, जिसने मानविक अनुभव की विशाल सरिता को जन्म दिया है।

यहां, नदी के स्रोत पर, हमने मानव समाज, भाषा और चिंतन के प्रारंभ की भी खोज की।

जैसे हर नई सहायक नदी के मिलने के साथ नदी गहरी होती जाती है, उसी प्रकार मानविक अनुभव की नदी भी लगातार गहरी और चौड़ी होती जाती है। क्योंकि हर नई पीढ़ी अपना पूरा संचित अनुभव इसमें जोड़ती चली जाती है।

पीढ़ियों के बाद पीढ़ियां अतीत में लीन होती चली गईं। मनुष्य और क़बीले बिना निशान छोड़े अदृश्य हो गये, शहर और गांव सदा-सदा के लिए लुप्त हो जाते हुए चूर-चूर होकर धूल मे मिल गये। लगता था कि ससार में ऐसा कुछ नहीं है जो काल के विनाशी बल को सह सके। लेकिन मानवजाति का संचित अनुभव बच रहा। इसने काल को जीत लिया है और वह हमारी भाषा, हुनरों और विज्ञानों में जीता चला आ रहा है। भाषा में हर शब्द, काम में प्रत्येक गति, विज्ञान में प्रत्येक धारणा–ये सभी पुरानी पीढ़ियों का संचित अनुभव हैं।

जिस प्रकार नदी की कोई सहायक नदी कभी लुप्त नहीं होती, उसी प्रकार
' पीढ़ियों का श्रम भी बेकार नहीं गया। उन सभी लोगों का श्रम जो हम से
ले जीवित रह चुके हैं और जो अब जीवित हैं मानविक अनुभव की सरिता में
ला हुआ है।

और इस तरह अब हम नदी के स्रोत पर अपने सभी दायित्वों के आरम्भ-
दु पर आ पहुंचे हैं। इस प्रकार मनुष्य का अस्तित्व हुआ जो एक काम करनेवाला
लनेवाला और सोचनेवाला प्राणी है।

जब हम उन लाखों वर्षों पर दृष्टि डालते हैं जो हमें वानरों से अलग करते
, तो हम फ्रेडरिक एंगेल्स के विद्वत्तापूर्ण शब्दों को याद किये बिना नहीं रह सकते
न्होंने कहा था कि श्रम ने ही मनुष्य को बनाया है।

उजड़े घर में

जब लोग किसी मकान को हमेशा के लिए छोड देते हैं, तो उसमे उनकी छोडी हुई चीजे हमेशा बाकी रह जाती है। खाली कमरो मे कागज के ढेर, टूटे बर्तनो के टुकडे और खाली मर्तबान बिखरे पडे हैं। ठडा चूल्हा टूटे-फूटे बर्तनो से ठुमा हुआ है। खिडकी की सिल्ली पर भूले से रखा हुआ टूटे पेंदेवाला शीशे का एक लैप इस गडबड को उदासी के साथ देख रहा है।

उस कोने मे एक पुरानी आरामकुरसी, जो दर्जनो जगह से फटी हुई है, शाति-पूर्वक ऊघ रही है। यह घर के पुराने निवासियो के साथ नही गई, क्योकि इसका एक टाग अरसे से गायब है।

इन थोडे टूटे-फूटे अवशेषो से कल्पना करना कठिन होगा कि परिवार यहा किस तरह रहता था। लेकिन पुरातत्वविदो के सामने जो समस्या आती है, वह एकदम यही है। किसी घर मे सबसे बाद मे प्रवेश करनेवाले वही होते हैं। आम तौर पर, उनका आगमन आखिरी बाशिदे द्वारा घर के तजे जाने के हजारो साल बाद होता है। कभी-कभी उन्हे बस गिरी हुई दीवारे और नीव के कुछ हिस्से ही मिल पाते है। इसीलिए हर बर्तन, हर भाडा उनके लिए एक नई खोज, हर टुकडा एक वरदान होता है।

जो उनकी भाषा समझता हो, उसे पुराने मकान कितनी बाते बता सकते है!

जीर्ण पाषाण के फटे-पुराने वस्त्र पहने मीनारो और काई चढी दीवारो ने कितने लोगो और कितनी घटनाओ को देखा है!

लेकिन दूसरे, दुनिया मे सबसे पुराने मकानो ने, प्रागैतिहासिक मानव की गुफाओ ने इससे भी ज्यादा चीजो को देखा है।

ऐसी भी गुफाए हैं, जिनमे लोग पचास हजार साल पहले रहा करते थे। सौभाग्य से, पहाड टिकाऊ पदार्थ के बने होते है और गुफा की दीवारे आदमी के बनाये मकानो की तरह चूर-चूर नही हो जाती।

यह रही ऐसी ही एक गुफा। इसके बाशिदे बदलते रहे हैं। गुफा की पहली स्वामिनी एक भूमिगत धारा थी। मिट्टी और ककर उसी के लाये हुए हैं।

फिर पानी उतर गया। लोग गुफा मे आकर रहने लगे। मिट्टी मे मिले चकमक के भद्दे चाकू हमे उनके बारे मे कुछ बताते हैं। प्रागैतिहासिक लोग इन चाकुओ का उपयोग जानवरो की लाशो को चीरने, हड्डियो से मास उतारने और हड्डी का गूदा निकालने के लिए, हड्डियो को चिटकाने के लिए किया करते थे। इसका मतलब है कि ये लोग शिकारी थे।

कई साल बीत गये। शिकारियो ने गुफा को छोड दिया। फिर नये बाशिदे आ गये। गुफा की दीवारे सपाट और चिकनी है। यह काम गुफावासी रीछ ने अपनी भबरी खाल को अपने घर की खुरदुरी पत्थर की दीवारो पर रगडकर किया था। और यह रहा रीछ, या यह कहो कि यह रही चौडे माथे और सकरी थूथनीवाली उसकी खोपडी।

रखता है, जो टिकाऊ पदार्थ की बनी हो। इस मामले मे उसने केवल उन्ही वस्तुओ को बचाकर रखा, जो पत्थर या हड्डी की बनी थी। समय ने हर उस चीज को गुमा दिया, जो लकड़ी या जानवरो की खाल की बनी हुई थी। यही कारण है कि हमे सूआ तो मिल जाती है, मगर वे कपडे नही मिल पाते, जिनके बनाने मे इसने मदद की थी. यही कारण है कि हमे चकमक की अनी तो मिल जाती है, मगर उसका लकडी का दस्ता नही मिल पाता।

शेष वस्तुओ मे जो सुराग मिलते हैं, उनसे हमे विलुप्त वस्तुओ के बारे मे अनुमान लगाना पडता है। हमे जो धुधले चिह्न और टुकडे मिलते हैं, उनसे हमे उन वस्तुओं को पुनर्निर्मित करना पडता है, जो कई हजार साल पहले मिट्टी मे बदल चुकी हैं।

खैर, चलो अपनी खोज जारी रखे।

पुरातत्वविद जब खडहर मे खुदाई करता है, तो वह आम तौर पर ऊपर से शुरू करता है और नीचे की तरफ बढता जाता है—सबसे पहले सबसे ऊपरी परतो की जाच की जाती है, फिर वह अधिकाधिक नीचे की तरफ, धरती मे और-और गहरे, इतिहास की गहराई मे खोदता चला जाता है। पुरातत्वविद मानो किताब को उलटा पढ रहा है, बिलकुल अतिम अध्याय के अत मे शुरू करके पहले अध्याय पर समाप्त कर रहा है। हमने अपनी कहानी को दूसरे तरीके से शुरू किया है। हमने सबसे नीचे की परतो से, गुफा के इतिहास के सबसे पहले अध्यायो से, शुरुआत की है। और अब हम अधिकाधिक ऊपर की ओर जायेगे, आधुनिक काल के अधिकाधिक निकट आते जायेगे।

तो इसके बाद गुफा मे क्या हुआ?

निक्षेपो की परतो का अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि लोगो ने गुफा को कई बार छोडा और कई बार उसमे लौटकर वापस आये। जब गुफा मे आदमी नही रहते थे, तो उसमे लकडबग्घे और रीछ आकर रहने लगते थे, उसके भीतर मिट्टी और धूल की परते जमा होती जाती थी। छत की चट्टान के टुकडे गुफा के फर्श पर गिरते रहते थे, और कई वर्षों के बाद, जब कोई नया कबीला फिर उसे ढूढता था, तो वहा उसके पुराने निवासियो के कोई सुराग नही मिलते थे।

कितने ही वर्ष और शताब्दिया और सहस्राब्दिया बीत गईं। लोगो ने बाहर खुले मे मकान बनाना शुरू कर दिया, उन्होंने प्राकृतिक सरक्षण का उपयोग करना बद कर दिया। गुफा आखिर पूरी तरह से तज दी गई। बीच-बीच मे हरी-भरी पहाडी चरागाहो मे अपने रेवड चराते चरवाहे दिन दो दिन के लिए उसमे ठहर जाते, या बारिश मे फसे मुसाफिर गुफा मे बसेरा ले लिया करते।

और फिर गुफा के इतिहास के अतिम अध्याय का आरभ हुआ। लोग एक बार फिर गुफा मे आये। लेकिन इस बार वे आश्रय लेने के लिए नही आये, वे इस गुफा मे जो लोग कभी रहते थे, उनके बारे मे जितना हो सकता था, उतना जानने के लिए आये थे।

बाद में आनेवाले ये लोग प्राचीन काल के पत्थर के औजारों को खोदने के लिए इस्पात के आधुनिक औजारों से लैस होकर आये थे।

और परत के बाद परत को खोदकर इन अनुसधानकर्ताओ ने गुफा के इतिहास को आदि से अत तक पढ लिया।

उन्हे जो औजार मिले थे, उनकी तुलना करके वे देख सकते थे कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी किस प्रकार विभिन्न हुनरो और मानविक अनुभव मे वृद्धि होती गई थी। उन्होंने देखा कि भद्दे औजारों की जगह दूसरे औजारों ने ले ली थी, जो प्रागैतिहासिक काल के बीतते जाने के साथ अधिकाधिक अच्छे और बहुरूपी होते चले गये थे। जैसे भद्दे कुल्हाडे की जगह पहले तिकोने चाकुओ और अर्धगोलाकार खुरचनियो ने ले ली और बाद मे चकमक के सुघड टुकडो से बने तरह-तरह की अनियां, खुरचनियां, बरमे और सूए आ गये। इसके बाद नई चीजों – हड्डी और बारहसिंगे के सींगो – से बने औजार चकमक के औजारो के नियमित सकलन मे सम्मिलित हो गये। हड्डी, जानवरो की खालो और लकडी पर काम करने के लिए विशेष औजार थे। प्रागैतिहासिक मनुष्य हड्डियो को काटने का औजार, खालो की खुरचनी और लकडी मे छेद करने का बरमा बनाने के लिए उसी चकमक का उपयोग करता था। उसके कृत्रिम पजे और दात समय के साथ अधिक तेज और कई प्रकार के होते जा रहे थे और जिस हाथ का इस्तेमाल वह अपना शिकार पकडने के लिए करता था, वह लबा होता जा रहा था।

लंबा हाथ

जब प्रागैतिहासिक मानव ने डडे मे चकमक की अनी लगाकर भाला बनाया तो उसने अपने हाथ को लबा बना लिया।

इसने मनुष्य को अधिक शक्तिशाली और ज्यादा बहादुर बना दिया।

पहले, अगर उसका अचानक रीछ से सामना हो जाता था, तो [illegible] खूंखारों से लडने की हिम्मत न होने के कारण वह मारे डर के भाग खडा होता था। छोटे से जानवर को वह बिना किसी खास परेशानी के पकड और मार सकता था, लेकिन रीछ से भिडने की उसमे हिम्मत न थी। [illegible] बात को भली भांति जानता था कि रीछ के तेज पजो से वह कभी नहीं बच सकता।

लेकिन [illegible] है, जब मनुष्य के पास [illegible] भाला [illegible] था। भाले ने उसे अधिक साहसी बना दिया। रीछ को देखकर [illegible] [illegible] उस पर [illegible] हमला करता था। [illegible] हमला करने के लिए अपने पिछले पैरों पर खडा हो जाता था। [illegible] शिकारी का [illegible] भाला रीछ के [illegible] घुस जाता था। [illegible]

[illegible]

लेकिन शिकारी का भाला अगर टूट जाता, तो उसे बचने का कोई मौका न था।

तब रीछ उस पर टूट पडता और पजे मार-मारकर उसे मार डालता।

लेकिन रीछ मुश्किल से ही कभी विजेता होता था। तुम्हे याद रखना चाहिए कि प्रागैतिहासिक काल मे आदमी कभी अकेला शिकार करने नही जाता था। आगाही की पहली आवाज़ पर पूरा-का-पूरा गिरोह लपका चला आता था। लोग रीछ पर पिल पड़ते थे और उसे अपने पत्थर के छुरो से मार डालते थे।

दोहरे फलोवाले भाले ने प्रागैतिहासिक मानव को ऐसा शिकार दे दिया, जिसका वह पहले स्वप्न भी नही देख सकता था। पुरातत्वविदो को अभी तक गुफ़ाओ के भीतर पत्थर की सिल्लियो के बने गोदाम मिलते हैं। जब पत्थर की सिल्लिया अलग की जाती है, तो उनके नीचे रीछ की हड्डियो के बडे-बडे ढेर नज़र आते हैं। इसका मतलब सिर्फ़ यही हो सकता है कि शिकारी सफल हुए थे, क्योकि उनके पास प्रत्यक्षत इतना मास था कि उसे जमा करके रखा जा सकता था।

अगर आदमी रीछ जैसे भारी-भरकम और सुस्त जानवरो का ही शिकार करता होता, तो दोहरे फलोवाला भाला सभी सभव हथियारो मे सबसे अच्छा रहता। लेकिन उसे और जानवरो का भी शिकार करना पडता था, ऐसे जानवरो का, जो स्वय उसकी अपेक्षा कही तेज और फुर्तीले थे।

मैदानो मे घूमते समय शिकारियो का सामना जगली घोडो और बाइसनो के झुडो से होता। वे चरते जानवरो की तरफ़ सरककर जाते, लेकिन पहली आहट या शोर सुनते ही पूरा झुड धडधडाता हुआ दूर भाग खडा होता।

इन जानवरो का शिकार करने के लिए प्रागैतिहासिक मनुष्य के हाथ अभी तक छोटे थे। लेकिन फिर स्वय शिकार ने उसे एक नई और मज़बूत सामग्री प्रदान की – हड्डी।

उसने अपने चकमक के चाकू से हड्डी की एक हलकी और तेज़ अनी बनायी, जिसे उसने अब लकडी के छोटे से डडे से बाध दिया। अब उसके पास एक नया हथियार था – नेज़ा। शिकारी दौडते घोडे पर कभी अपना भारी दोहरे फलोवाला भाला नही फेक सकता था, लेकिन वह अपना हलका नेज़ा उस पर फेक सकता था और बहुत दूर तक फेक सकता था।

अब आदमी का हाथ और भी लबा हो गया। एक हवाई हथियार – नेज़े – के उपयोग द्वारा शिकारी भागते घोडे को उसे भाग जाने का मौका दिये बिना मार सकता था।

ठीक है कि चलते निशाने को मारना आसान नही था। इसके लिए आदमी को शक्तिशाली हाथ और पैनी निगाह दरकार थी।

शिकारी नेज़ा फेकना बचपन मे ही सीख लेता था। फिर भी यह कोई असाधारण बात नही थी कि फेके गये सौ नेज़ो मे से कम दर्जन भर ही अपने निशाने पर जाकर बैठे।

सदिया हज़ारो वर्षों मे परिणत हो गई। जगली घोडो और बाइसनो के झुड

के इस ढेर को छाटा, तो उन्होने पता लगाया कि इसमे कम-से-कम एक लाख घोडो के अवशेष थे।

ऐसा विशाल अश्व समाधिस्थल कहा से आया होगा?

सूक्ष्म निरीक्षण करने पर वैज्ञानिको को पता चला कि बहुत-सी हड्डिया चिटकी हुई, फटी हुई या जली हुई थी। अत यह साफ हो गया कि हड्डिया यहा प्रागैतिहासिक रसोइयों के हाथो मे रहने के बाद आई थी। यह असाधारण अश्व समाधिस्थल एक विशाल रसोई का खत्ता ही निकला।

हड्डियो का इतना विराट अबार कोई साल भर के भीतर तो बन नही सकता था। इसलिए, लोग यहा प्रत्यक्षत कई साल रहे थे।

लेकिन कूडे का खत्ता यहा, चट्टान के तले मे ही क्यो था? क्या यह कोई आकस्मिक बात ही थी, जिससे प्रागैतिहासिक शिकारियो ने अपना डेरा मैदान मे समतल जगह के बजाय इसी जगह पर डाला?

जो हुआ, वह शायद यह था।

जब शिकारी मैदान मे घोडो के किसी झुड को देखते, तो वे ऊची घास मे छिपे-छिपे सावधानी के साथ पास खिसक आते। हर शिकारी के पास कई-कई नेजे होते। आगेवाले शिकारी दूसरो को सकेत देकर बताते कि घोडे कहा और कितने हैं और किधर जा रहे हैं।

इसके बाद शिकारी इकहरी पात मे बिखर जाते और झुड के इर्द-गिर्द घेरे को छोटा करते जाते। घोड़े, जो पहले स्याह धब्बो जैसे नजर आते थे, अब साफ-साफ नज़र आने लगते थे। उनके सिर बडे थे, टागे पतली थी और उनकी खाल पर बडे-बड़े बाल थे।

झुड चौकन्ना हो जाता। उन्हे शत्रु के होने का अनुमान हो जाता और वे भागने को तैयार हो जाते। लेकिन समय निकल चुका होता था। लबी चोचोवाले बिना पर के पक्षियों के झुड की तरह नेजो का एक बादल उन पर टूट पडता।

नेजे जानवरो की जाघ, कमर और गरदन मे घुस जाते। अब वे किधर जायें? घोडे तीन तरफ से दुश्मन से घिर जाते। उनके तीनो तरफ जो जिंदा दीवार अचानक उठ खड़ी हुई थी, उसमें से बचने का रास्ता सिर्फ एक था। और झुड शिकारियो से जान बचाता बेतरह हिनहिनाता उसी रास्ते से होकर भाग निकलता। लेकिन शिकारी तो ठीक इसी बात के इतजार मे थे। वे घोडो को पहाडी पर चट्टान की तरफ लगातार ऊचे खदेडते जाते। दहशत से पागल हुए घोडे इस बात की परवाह किये बिना भागते ही रहते कि वे कहा जा रहे है। उनकी लहराती हुई दुमे और पसीने मे नहाई पीठे एक जिंदा धारा जैसी दिखाई देती। धारा पहाडी की चोटी तक पहुच जाती। और तभी अचानक उनके सामने खड्ड आ जाता। अगले ही क्षण सबसे आगेवाले घोडे उसके किनारे पर पहुच जाते। वे आगे के खतरे को देखते और बुरी तरह फुफकारते हुए पिछली टागो पर खडे हो जाते। लेकिन अब बहुत देर हो चुकी थी। वे रुक नही सकते थे, क्योकि पीछेवाले घोडे उन्हे आगे धकेलते हुए चट्टान के नीचे गिरा देते थे।

और जिंदा धारा चोटी पर से नीचे तली पर क्षत-विक्षत देहो का ढेर बनने के लिए एक जिंदा झरने की तरह गुजर जाती।

9333

दुर्लभ होते जा रहे थे और प्रागैतिहासिक मनुष्य ही उनके विनाश का सबसे बड़ा कारण था। अब अधिकाधिक अवसरों पर शिकारी खाली हाथ ही घर वापस आते। उन्हें एक नये हथियार की जरूरत थी, एक ऐसे हथियार की, जो और भी ज्यादा दूर से निशाने पर पहुंच सके। प्रागैतिहासिक मानव के लिए किसी और चीज का, किसी ऐसी चीज का आविष्कार करना आवश्यक था, जो उसके हाथ को और भी लंबा बना दे।

और उसने एक नये हथियार का आविष्कार कर लिया।

उसने एक पतले, मजबूत पौधे को काटा, उसे मोड़कर कमान का रूप दिया और सिरो को एक डोरी से बाध दिया।

अब शिकारी के पास धनुष था।

जब वह प्रत्यचा को धीरे-धीरे खीचता, तो वह उसकी तनी हुई पेशियों की समस्त शक्ति को एकत्र कर लेती।

और जब वह उसे छोड़ देता, तो वह तुरत अपनी शक्ति वाण को प्रदान कर देती। और वाण शिकार के लिए झपट्टा मारते बाज़ की तरह उड़ चलता।

नेज़े के मुकाबले वाण कही ज्यादा दूर तक जाता था। वाण और नेज़ा दो भाइयों की तरह एक से हैं, लेकिन वाण अपने भाई से हजारों साल छोटा है।

प्रागैतिहासिक मानव को वाण बनाने में हजारों साल लग गये।

आरभ मे वह धनुष से वाण नही, नेजा फेका करता था। और इसी कारण उसे बड़े-बड़े धनुष बनाने पड़ते थे। कुछ तो मनुष्य जितने ही लबे हुआ करते थे।

इस प्रकार मनुष्य ने अपने अशक्त, छोटे हाथ को लबा और शक्तिशाली बनाया। जब उसने बारहसिंघे के सीगों के सिरे या मैमथ के दात से तेज़ अनी बनाना सीख लिया, तो उसने जानवरों के ही हथियारों – उनके सीगों और दातों – को उन्हीं के खिलाफ मोड दिया। और इसने मनुष्य को सभी प्राणियो मे सबसे शक्तिशाली बना दिया।

जो हाथ नेज़े को फेकता और धनुष की प्रत्यंचा को खीचता था, वह अब कोई साधारण हाथ न रहा था, अब वह एक भीमकाय प्राणी का, दानव का हाथ था।

और जब यह तरुण दानव शिकार पर जाता था, तो वह कोई एक ही पशु को नही फांसता या मारता था। वह पूरे-के-पूरे झुडों का शिकार करता था।

ज़िंदा झरना

सोलूत्रे, फ्रांस में एक बड़ी चट्टान है।

चट्टान की तली पर पुरातत्वविदो को हड्डियो का एक विशाल अबार मिला। इन हड्डियों मे मैमथों की स्कधास्थिया, प्रागैतिहासिक साडो के सीग और गुफावासी रीछों की खोपड़िया भी थी।

लेकिन घोडो की हड्डिया किसी भी अन्य जानवर की अपेक्षा अधिक थी। कुछ जगहो पर तो आदमी से भी ऊचे हड्डियो के ढेर थे। जब वैज्ञानिको ने अलग हड्डियों

के इस ढेर को छाटा, तो उन्होंने पता लगाया कि इसमे कम-से-कम एक लाख घोडो के अवशेष थे।

ऐसा विशाल अश्व समाधिस्थल कहा से आया होगा?

सूक्ष्म निरीक्षण करने पर वैज्ञानिको को पता चला कि बहुत-सी हड्डिया चिटकी हुई, फटी हुई या जली हुई थी। अत यह साफ हो गया कि हड्डिया यहा प्रागैतिहासिक रसोइयो के हाथो मे रहने के बाद आई थी। यह असाधारण अश्व समाधिस्थल एक विशाल रसोई का घूरा ही निकला।

हड्डियो का इतना विराट अबार कोई साल भर के भीतर तो बन नही सकता था। इसलिए, लोग यहा प्रत्यक्षत कई साल रहे थे।

लेकिन कूडे का घूरा यहा, चट्टान के तले मे ही क्यो था? क्या यह कोई आकस्मिक बात ही थी, जिसमे प्रागैतिहासिक शिकारियो ने अपना डेरा मैदान मे समतल जगह के बजाय इसी जगह पर डाला?

जो हुआ, वह शायद यह था।

जब शिकारी मैदान मे घोडो के किसी भुड को देखते, तो वे ऊची घास मे छिपे-छिपे सावधानी के साथ पास खिसक आते। हर शिकारी के पास कई-कई नेज़े होते। आगेवाले शिकारी दूसरो को सकेत देकर बताते कि घोडे कहा और कितने है और किधर जा रहे हैं।

इसके बाद शिकारी इकहरी पात मे बिखर जाते और भुड के इर्द-गिर्द घेरे को छोटा करते जाते। घोडे, जो पहले स्याह धब्बो जैसे नज़र आते थे, अब साफ-साफ नज़र आने लगते थे। उनके सिर बडे थे, टागे पतली थी और उनकी खाल पर बडे-बडे बाल थे।

भुड चौकन्ना हो जाता। उन्हे शत्रु के होने का अनुमान हो जाता और वे भागने को तैयार हो जाते। लेकिन समय निकल चुका होता था। लबी चोचोवाले बिना पर के पक्षियो के भुड की तरह नेज़ो का एक बादल उन पर टूट पडता। नेज़े जानवरो की जाघ, कमर और गरदन मे घुस जाते। अब वे किधर जाये? घोडे तीन तरफ से दुश्मन से घिर जाते। उनके तीनो तरफ जो ज़िदा दीवार अचानक उठ खडी हुई थी, उसमे से बचने का रास्ता सिर्फ एक था। और भुड शिकारियो से जान बचाता बेतरह हिनहिनाता उसी रास्ते से होकर भाग निकलता। लेकिन शिकारी तो ठीक इसी बात के इतज़ार मे थे। वे घोडो को पहाडी पर चट्टान की तरफ लगातार ऊचे खदेडते जाते। दहशत से पागल हुए घोडे इस बात की परवाह किये बिना भागते ही रहते कि वे कहा जा रहे हैं। उनकी लहराती हुई दुमे और पसीने से नहाई पीठे एक ज़िदा धारा जैसी दिखाई देती। धारा पहाडी की चोटी तक पहुच जाती। और तभी अचानक उनके सामने खड्ड आ जाता। अगले ही क्षण सबसे आगेवाले घोडे उसके किनारे पर पहुच जाते। वे आगे के खतरे को देखते और बुरी तरह फुफकारते हुए पिछली टागो पर खडे हो जाते। लेकिन अब बहुत देर हो चुकी थी। वे रुक नही सकते थे, क्योकि पीछेवाले घोडे उन्हे आगे धकेलते हुए चट्टान के नीचे गिरा देते थे।

और ज़िदा धारा चोटी पर से नीचे तली पर क्षत-विक्षत देहो का ढेर बनने के लिए एक ज़िदा झरने की तरह गुज़र जाती।

नये लोग

शिकार खत्म हुआ।

चट्टान की नोक पर बड़े-बड़े अलाव जल रहे थे। बूढ़ों ने शिकार का बंटवारा किया, जो पूरे ही गुट का माल था। लेकिन सबसे अच्छे-अच्छे टुकड़े सबसे बहादुर और निपुण शिकारियों को ही मिले।

हम जब घड़ी की तरफ देखते हैं, तो वह निश्चल प्रतीत होती है। लेकिन घंटा-दो-घंटा गुजर जाने पर हम देखते हैं कि सुई आगे सरक आई है।

जिंदगी में भी यही बात है। अपने आस-पड़ोस में या स्वयं अपने तक में जो परिवर्तन हो रहे हैं, उन पर हमारा तुरंत ध्यान नहीं जाता। हम सोचते हैं कि इतिहास की घड़ी की सुई निश्चल है। और कई वर्ष बाद जाकर ही हमारा ध्यान अचानक इस ओर जाता है कि सुई आगे सरक आई है, कि हम खुद बदल गये हैं, कि हमारे इर्द-गिर्द की हर चीज बदल गई है।

हम पुराने की नये से तुलना अपनी डायरियों, तसवीरों, अखबारों और किताबों को देखकर कर सकते हैं। हमारे पास तुलना करने की चीजें हैं। लेकिन हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजों के पास पुराने की नये से तुलना करने के लिए कुछ भी न था। उनका खयाल था कि जीवन निश्चल, अपरिवर्तनशील है। पुराने की नये से तुलना किये बिना परिवर्तन को देख पाना उतना ही असंभव है, जितना घड़ी पर घंटों के अंकों के बिना उसकी सुई की गति को देखना।

पत्थर के औजार गढ़नेवाला हर कारीगर उस आदमी के हर तौर-तरीके की नकल करने की कोशिश करता, जिसने उसे अपना हुनर सिखाया था।

नया मकान बनाते समय औरतें चूल्हा बिलकुल उसी तरह बनातीं, जिस तरह उनके पहले उनकी नानियां-दादियां बनाया करती थीं।

शिकारी अपने शिकार को प्राचीन रिवाज के अनुसार ही मारा करते।

लेकिन फिर भी, बिना किसी का ध्यान गये, लोगों ने धीरे-धीरे अपने औज़ार, अपने रहने के स्थान और काम करने के अपने तरीके बदल दिये।

हर नया औज़ार आरंभ में बहुत-कुछ पुराने औज़ार जैसा ही होता था। पहला नेज़ा भाले से बहुत भिन्न नहीं था। लेकिन बाण और भाले में ज़मीन और आसमान का फ़र्क है। और तीर-कमान से शिकार और भाले से शिकार में ज़रा भी समानता नहीं है।

आदमी के केवल औज़ार और हथियार ही नहीं बदल गये थे—वह खुद भी बदल रहा था। यह बात उन ठठरियों से देखी जा सकती है, जो विभिन्न खुदाई-स्थलियों पर मिली हैं। अगर हम गुफा में पहले-पहल घुसनेवाले आदमी की तुलना उसे हिमयुग के अंत में छोड़नेवाले आदमी से करें, तो हमें लगेगा कि वे दो भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणी थे। निआंडरथाल-मानव गुफा में घुसनेवाला पहला मनुष्य था। उसकी कमर झुकी हुई थी, वह चलता क्या, लड़खड़ाता था, उसके चेहरे पर मुश्किल से ही कोई माथा था और ठोडी थी ही नहीं। लेकिन सुगठित शरीरवाला और लंबा क्रोमन्यन-मानव, जो गुफा से निकलनेवाला अंतिम मानव था, सूरत-शक्ल में हमसे मुश्किल से ही कुछ भिन्न था।

घर की कहानी का पहला अध्याय

जिस प्रकार मनुष्य का जीवन बदल गया, उसी प्रकार उसका आवास भी बदल गया। अगर हम उसके घर की कहानी लिखें, तो हमें गुफा से शुरुआत करनी पड़ेगी। प्रकृति द्वारा निर्मित इस आवास को प्रागैतिहासिक मानव ने बनाया नहीं, पाया था।

लेकिन प्रकृति कोई बहुत अच्छी भवन-निर्मात्री नहीं है। जब उसने पहाड़ों और पहाड़ी गुफाओं को बनाया, तो उसने इस बात का जरा भी ध्यान नहीं रखा कि कभी कोई इन गुफाओं में रहेगा भी। यही कारण है कि जब प्रागैतिहासिक लोग रहने के लिए कोई गुफा तलाश करते थे, तो उन्हें कदाचित ही कोई रहने लायक गुफा मिल पाती थी। या तो छत बहुत ही नीची होती, या उसका मुह इतना छोटा होता कि रेंगकर भीतर जाना भी मुश्किल होता।

सारा-का-सारा गिरोह आवास को रहने लायक बनाने के काम में जुट जाता। वे गुफा के फर्श और दीवारों को चकमक की खुरचनियों और लकड़ी की बल्लियों से खुरचते और समतल बनाते।

दरवाजे के पास वे चूल्हे के लिए एक गढ़ा खोदते और उसके चारों ओर पत्थरों की तह बिछा देते। माताएं ज़मीन में उथले गढ़े खोदकर और गढ़े की जगह उनमें चूल्हे की गरम राख बिछाकर अपने बच्चों के लिए "पालने" बनातीं।

गुफा के किसी दूरवर्ती कोने में वे रीछ के मांस और खाने-पीने के दूसरे सामान का गोदाम बना लेते।

प्रागैतिहासिक लोग इस प्रकार प्रकृति द्वारा निर्मित गुफा को – उसे अपने श्रम द्वारा मानव के आवास में परिणत करके – सुधारते थे।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, लोग अपने आवासों को सुसज्जित करने के अधिकाधिक प्रयास करने लगे।

अगर उन्हें ऊपर लटकी चट्टान की प्राकृतिक छत मिल जाती, तो वे उसके इर्द-गिर्द दीवारें बना देते। अगर उन्हें कोई ऐसी चीज़ मिल जाती जो चार दीवारों का काम दे सके, तो वे उस पर छत डाल देते।

दक्षिणी फ्रांस के पहाड़ों में अभी तक एक प्रागैतिहासिक आवास के अवशेष मिल सकते हैं। यहां के रहनेवालों ने इसे एक अजीब नाम दिया है। वे इसे "शैतान का चूल्हा" कहते हैं। उनका खयाल था कि बड़ी-बड़ी चट्टानों के बने इस आश्रय-स्थल में शैतान ही चूल्हा बनाकर ताप सकता था। अगर उन्हें खुद अपने प्रागैतिहासिक पूर्वजों की ज़रा ज्यादा जानकारी होती, तो वे समझ जाते कि शैतान का चूल्हा इन्सान के हाथों का बनाया हुआ है।

यहां पर प्रागैतिहासिक शिकारियों को ऊपर लटकी हुई एक चट्टान के नीचे दो दीवारें मिल गई थीं। ये दीवारें पहाड़ पर से खिसककर आये पत्थरों से बनी थीं। उन्होंने दो दीवारें और बना दीं और उन्हें उन दो दीवारों के साथ जोड़ दिया, जो उन्हें वहां मिली थीं। एक दीवार पत्थर की बड़ी-बड़ी सिल्लियों की बनी थी और दूसरी आपस में गूंथकर बुनी हुई डालियों में अपनी जगह पर जमाई गई बल्लियों की बनी थी और उस पर जानवरों की खालें मढ़ी हुई थीं। इसका हम अनुमान ही कर सकते हैं कि चौथी दीवार कैसी रही होगी, क्योंकि काल ने इसे कभी का धूल में बदल दिया है।

नये लोग

शिकार खत्म हुआ।

चट्टान की तली पर बड़े-बड़े अलाव जल रहे थे। बूढ़ों ने शिकार का बटवा
किया, जो पूरे ही यूथ का माल था! लेकिन सबसे अच्छे-अच्छे टुकड़े सबसे बहादुर
और निपुण शिकारियों को ही मिले।

हम जब घडी की तरफ देखते हैं, तो वह निश्चल प्रतीत होती है। लेकिन
घंटा-दो-घंटा गुज़र जाने पर हम देखते हैं कि सूई आगे सरक आई है।

ज़िंदगी में भी यही बात है। अपने पास-पडोस में या स्वयं अपने तक में जो
परिवर्तन हो रहे हैं, उन पर हमारा तुरत ध्यान नही जाता। हम सोचते हैं कि
इतिहास की घडी की सूई निश्चल है। और कई वर्ष बाद जाकर ही हमारा ध्यान
अचानक इस ओर जाता है कि सूई आगे सरक आई है, कि हम खुद बदल गये हैं,
कि हमारे इर्द-गिर्द की हर चीज़ बदल गई है।

हम पुराने की नये से तुलना अपनी डायरियों, तसवीरों, अखबारों और किताबों
को देखकर कर सकते हैं। हमारे पास तुलना करने की चीजें हैं। लेकिन हमारे
प्रागैतिहासिक पूर्वजों के पास पुराने की नये से तुलना करने के लिए कुछ भी न था।
उनका खयाल था कि जीवन निश्चल, अपरिवर्तनशील है। पुराने की नये से तुलना
किये बिना परिवर्तन को देख पाना उतना ही असंभव है, जितना घडी पर बने
अंकों के बिना उसकी सूई की गति को देखना।

पत्थर के औज़ार गढ़नेवाला हर कारीगर उस आदमी के हर तौर-तरीके की
नकल करने की कोशिश करता, जिसने उसे अपना हुनर सिखाया था।

नया मकान बनाते समय औरतें चूल्हा बिलकुल उसी तरह बनाती, जिस तरह
उनके पहले उनकी नानियां-दादियां बनाया करती थीं।

शिकारी अपने शिकार को प्राचीन रिवाज के अनुसार ही मारा करते।

लेकिन फिर भी, बिना किसी का ध्यान गये, लोगों ने धीरे-धीरे अपने औज़ार,
अपने रहने के स्थान और काम करने के अपने तरीके बदल दिये।

हर नया औज़ार आरंभ में बहुत-कुछ पुराने औज़ार जैसा ही होता था। ...
नेज़ा भाले से बहुत भिन्न नही था। लेकिन बाण और भाले में ज़मीन और आसमान
का फ़र्क है। और तीर-कमान से शिकार और भाले से शिकार में ज़रा भी समानता
नही है।

आदमी के केवल औज़ार और हथियार ही नही बदल गये थे – वह खुद भी
बदल रहा था। यह बात उन ठठरियों से देखी जा सकती है, जो विभिन्न गुफाओं
स्थलियों पर मिली हैं। अगर हम गुफा में पहले-पहल घुसनेवाले आदमी की तुलना
उसे हिमयुग के अंत में छोड़नेवाले आदमी से करें, तो हमें लगेगा कि वे दो भिन्न
भिन्न प्रकार के प्राणी थे। निआंडरथाल-मानव गुफा में घुसनेवाला पहला मानव
था। उसकी कमर झुकी हुई थी, वह चलता क्या, लड़खड़ाता था, उसके ...
पर मुश्किल से ही कोई माथा था और ठोडी थी ही नहीं। लेकिन ...
और लंबा क्रोमन्यन-मानव, जो गुफा से निकलनेवाला अंतिम मानव था, ...
में हमसे मुश्किल से ही कुछ भिन्न था।

घर की कहानी का पहला अध्याय

जिस प्रकार मनुष्य का जीवन बदल गया, उसी प्रकार उसका आवा
गया। अगर हम उसके घर की कहानी लिखे, तो हमे गुफा से शुरूआत कर
प्रकृति द्वारा निर्मित इस आवास को प्रागैतिहासिक मानव ने बनाया नही,

लेकिन प्रकृति कोई बहुत अच्छी भवन-निर्मात्री नही है। जब उसने पह
पहाडी गुफाओ को बनाया, तो उसने इस बात का ज़रा भी ध्यान नही
कभी कोई इन गुफाओ मे रहेगा भी। यही कारण है कि जब प्रागैतिहासि
रहने के लिए कोई गुफा तलाश करते थे तो उन्हे कदाचित ही कोई रहने लायक
मिल पाती थी। या तो छत बहुत ही नीची होती या उसका मुह इतना छोटा
कि रेगकर भीतर जाना भी मुश्किल होता।

सारा-का-सारा गिरोह आवास को रहने लायक बनाने के काम मे जुट जा
वे गुफा के फर्श और दीवारो को चकमक की खुरचनियो और लकडी की बल्लि
से खुरचते और समतल बनाते।

दरवाज़े के पास वे चूल्हे के लिए एक गढा खोदते और उसके चारो ओर पत्थर
की तह बिछा देते। माताए ज़मीन मे उथले गढे खोदकर और गद्दे की जगह उनमे
चूल्हे की गरम राख बिछाकर अपने बच्चो के लिए "पालने" बनाती।

गुफा के किसी दूरवर्ती कोने मे वे रीछ के मास और खाने-पीने के दूसरे सामान
का गोदाम बना लेते।

प्रागैतिहासिक लोग इस प्रकार प्रकृति द्वारा निर्मित गुफा को – उसे अपने श्रम
द्वारा मानव के आवास मे परिणत करके – सुधारते थे।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, लोग अपने आवासो को सुसज्जित करने के अधिका-
धिक प्रयास करने लगे।

अगर उन्हे ऊपर लटकी चट्टान की प्राकृतिक छत मिल जाती, तो वे उसके
इर्द-गिर्द दीवारे बना देते। अगर उन्हे कोई ऐसी चीज़ मिल जाती जो चार दीवारो
का काम दे सके, तो वे उस पर छत डाल देते।

दक्षिणी फ्रास के पहाडो मे अभी तक एक प्रागैतिहासिक आवास के अवशेष
मिल सकते है। यहा के रहनेवालो ने इसे एक अजीब नाम दिया है। वे इसे "शैतान
का चूल्हा" कहते है। उनका खयाल था कि बडी-बडी चट्टानो के बने इस आश्रय-
स्थल मे शैतान ही चूल्हा बनाकर ताप सकता था। अगर उन्हे खुद अपने प्रागैतिहासिक
पूर्वजो की ज़रा ज़्यादा जानकारी होती, तो वे समझ जाते कि शैतान का चूल्हा
इन्सान के हाथो का बनाया हुआ है।

यहा पर प्रागैतिहासिक शिकारियो को ऊपर लटकी हुई एक चट्टान के नी
दीवारे मिल गई थी। ये दीवारे पहाड पर से खिसककर आये पत्थरो से बनी
उन्होने दो दीवारे और बना दी और उन्हे उन दो दीवारो के साथ जोड दिया
उन्हे वहा मिली थी। एक दीवार पत्थर की बडी-बडी सिल्लियो की बनी थी
दूसरी आपस मे गूथकर बुनी हुई डालियो से अपनी जगह पर जमाई गई बल्लि
की बनी थी और उस पर जानवरो की खाले मढी हुई थी। इसका हम अनुमान
कर सकते है कि चौथी दीवार कैसी रही होगी, क्योकि काल ने इसे कभी का धू
मे बदल दिया है।

ज़मीन में खुदे एक बड़े गड्ढे के इर्द-गिर्द दीवारें थीं। इस गड्ढे के पेंदे में पुरातत्व-विदों को मैमथ की हड्डियां और हड्डी तथा सींग के बने औज़ार मिले।

दीवार का चूल्हा आधा घर और आधी गुफा है। यहां से असली घर बनाना ज़्यादा दूर नहीं रहा था, क्योंकि जहां प्रागैतिहासिक मानव ने एक बार दो दीवारें बनाना सीख लिया, तो जल्दी ही उसने चार दीवारें बनाना भी सीख लिया।

और इस प्रकार जल्दी ही पहले मकान बनने लगे – अब गुफाओं में नहीं, ऊपर लटकी चट्टान की छाया में नहीं, बल्कि खुले में।

प्रागैतिहासिक शिकारियों का घर

१९२५ के वसन्त में दोन नदी के तट पर गागारिनो गांव का अतोनोव नामक किसान अपने अहाते में मिट्टी खोद रहा था। उसे अपनी नई भट्ठी की लिपाई करने के लिए मिट्टी चाहिए थी।

लेकिन उसका फावड़ा बार-बार ज़मीन में गड़ी हड्डियों से ही जा टकराता था।

तभी गांव के स्कूल के अध्यापक व्लादीमिरोव उधर से गुज़रे। अतोनोव ने उन्हें बुलाया और बोला

"पता नहीं कहां से इतनी सारी हड्डियां यहीं आ दबी हैं! मैं तो खुदाई भी नहीं कर सकता – मेरा फावड़ा ही टूट जाता।"

अतोनोव अगर किसी और आदमी से बात करता, तो शायद वह मिनट भर को रुककर उसकी बात सुन लेता और फिर अपने रास्ते चला जाता।

लेकिन गाव के स्कूल के अध्यापक को विज्ञान से बड़ा लगाव था।

वह अहाते में आये और उन्होंने पीले दांत के एक बड़े टुकड़े को बारीकी से देखा, जो घिसकर चिकना किया हुआ नज़र आता था।

यह साफ था कि इतना बड़ा दांत विशाल मैमथ का ही हो सकता था।

मगर दोन के किनारे मैमथ! यह सचमुच अचंभे की बात थी।

अध्यापक महोदय ने इन हड्डियों के एक ढेर को गाड़ी में लादा और उन्हें निकट-तम नगर ले गये, जहां एक छोटा-सा स्थानीय संग्रहालय था।

अगर तुमने कोई ऐसा छोटा संग्रहालय देखा होगा, तो तुम्हें पता होगा कि उसके नुमायशी सदूकों में अजीब-से-अजीब चीजें एक-दूसरे के बराबर-बराबर ही पड़ी होती हैं। एक कमरे में तुम्हें संगमर्मर की बनी कामदेव की मूर्ति और सत्रहवीं सदी के किसी सामंत का तैलचित्र – दोनों मिल जायेंगे।

दूसरे कमरे में स्थानीय खनिजों और पौधों के संग्रह के ही बराबर अपने बाल भरे हाथ में गदा लिये एक पिथेकेंथ्रोपस की कागज़ की लुगदी की बनी मूर्ति भी रखी मिल जायेगी।

व्लादीमिरोव जिस संग्रहालय में गागारिनो गांव में मिली हड्डियां लेकर आये वह बिलकुल ऐसा ही था।

संग्रहालय के अध्यक्ष मैमथ के दांत और दूसरी हड्डियों को बस अपनी सूची में दर्ज करके खनिजों के नमूनों और पिथेकेंथ्रोपस के साथ प्रदर्शन के लिए रख सकते थे।

लेकिन उन्होंने इससे कहीं ज्यादा किया। उन्होंने तुरंत मानवविज्ञान और जाति-विज्ञान-संग्रहालय के नाम एक पत्र लेनिनग्राद भेजा, जहां नेवा नदी के तट पर एक पुरानी इमारत में रूसी वैज्ञानिकों और अन्वेषकों की दी हुई संसार के सभी भागों में जमा की गयी विचित्र वस्तुएं संग्रहीत हैं।

जल्दी ही लेनिनग्राद से अम्यातिन नामक एक पुरातत्वविद गांव के स्कूल के अध्यापक के साथ खुदाई-कार्य जारी रखने के लिए गागारिनो पहुंच गये।

हमारे देश में ऐसा अकसर होता रहता है – प्राचीन संस्कृति की किसी वस्तु के हाथ लगने पर अध्यापक या ग्राम पुस्तकालय का अध्यक्ष अपनी खोज के बारे में निकटतम संग्रहालय को लिखता है और शहर से खुदाई-कार्य का निर्देशन करने के लिए वैज्ञानिक पहुंच जाते हैं।

गागारिनो में उन्हें क्या मिला?

खुदाई के प्रारंभिक दिनों में ही उन्हें चकमक की खुरचनियां और चाकू, हड्डी एक सूआ, बर्फिस्तानी लोमड़ी का एक आरपार छिदा हुआ दांत, चूल्हे में निकले ...ले में मैमथ और दूसरे जानवरों की हड्डियां मिलीं।

अलोनोव की खती की दीवारों की लिपाई में जो मिट्टी लग चुकी थी उसमें भी इसी तरह के चकमक के औजार और दांतों के टुकड़े पाये गये। मिट्टी में इतने इतने टुकड़े मिले हुए थे कि किसान परिवार ने उन्हें निकालने के पीछे वक्त खराब करना ठीक न समझा था।

वे महीनों खुदाई करते रहे और नई-नई चीजें पाते रहे। उनकी खोजों में औजार गहने, छोटी-छोटी मूर्तियां और जानवरों की हड्डियां भी थीं। हर चीज को बड़ी सावधानी के साथ पैक करके लेनिनग्राद भेज दिया गया। वहां विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों ने आगे का काम संभाल लिया।

खनिजविदों ने यह निर्धारित किया कि औजारों के लिए कौनसा पत्थर काम ...लाया गया था। फॉसिलविदों ने यह पता लगाने के लिए हड्डियों का अध्ययन कि... ये प्रागैतिहासिक लोग किन जानवरों का शिकार करते थे। निपुण का... ...य के प्रभाव से हानिग्रस्त हड्डी की तराशी हुई मूर्तियों को उनका पूर्वरू... ...।

इसी बीच पुरातात्विक खुदाई के सभी नियमों का पालन करते हुए पुरातत्व... एक दल ने खुदाई का काम जारी रखा। और जल्दी ही उनके सामने इन प्रा... ...क शिकारियों के आवास का एक स्पष्ट चित्र उभरकर आने लगा।

आकार में यह एक गोल खाई जैसा था। दीवारें बाहर की ओर से पत्थर... ...यों और मैमथ के दांतों और जबड़ों की हड्डियों से सज्जित थीं। दीवारें ज्यादात... ...से की खालों से मढ़े लकड़ी के खंभों की बनी थी। इसके ऊपर आराम से टिककर ...न बनाते थे। पत्थर की भारी सिल्लियां और मैमथों की हड्डियां बाहरी दीवारों मजबूती देने के लिए ऐन वहां तक धकेलकर में गाड़ी गई थीं।

बाहर से आवास एक बड़े लट्टू जैसा दिखाई देता था। दीवारों के पास उन्हें ...की बनी दो स्त्रियों की नक्काशी की लघु मूर्तियां मिलीं। उनमें से एक बेहद ...ती और दूसरी पतली थी और मूर्तिकार ने समझकर उन्हें वर्जित स्त्रियों को

देखकर बनाया था। स्त्रियों के अलंकारपूर्ण केश-शृंगार की बड़ी बारीकी से नक्का
की गई थी।

फर्श के बीच में खुदा एक गोल गड्ढा चूल्हे का काम देता था। उसमें मि
चीजें बड़ी मूल्यवान रही होंगी – हड्डी की एक सूई, बर्फिस्तानी लोमड़ी के दांतों
बने मनके और मैमथ की पूंछ।

प्रागैतिहासिक निवासी सिलाई के लिए सूई का इस्तेमाल करते थे, मनके गह
थे, लेकिन मैमथ की पूंछ को सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने इतना जतन क्यों कि
था?

ऐसी और भी उत्कीर्ण लघु मूर्तियां मिली हैं, जो प्रागैतिहासिक शिकारियों क
अपने कंधों पर जानवरों की खालें डाले और पीछे दुम लटकाये दिखाती हैं, जिस
कि वे उन जानवरों जैसे लगें, जिनकी खालें वे पहने हुए हैं। उन्होंने ऐसा क्यों किया
इस सवाल पर हम बाद में विचार करेंगे। हम अभी प्रागैतिहासिक मानव के आवा
के बारे में जो कुछ जान सकते हैं, वही जानने की कोशिश कर रहे हैं।

गागारिनो गांव में जैसा शिविरस्थल मिला है, सोवियत संघ के विभिन्न भाग
में ऐसे कई और शिविरस्थल मिले हैं। वोरोनेज़ के पास एक छोटे से गांव में इत
हड्डियां मिली थीं कि थोड़े ही दिनों में वह कोस्तेकी (हड्डियों का गांव) के ना
से मशहूर हो गया।

ये हड्डियां मैमथ, गुफा सिंह, गुफा रीछों और घोड़ों की थीं, उन जानवरों
जिनका प्रागैतिहासिक लोग शिकार करते थे।

दो सोवियत पुरातत्त्वविदों प० येफीमेंको तथा स० जम्यातिन ने कोस्तेकी शिवि
स्थल का विशद अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि कोस्तेकी में शिकारी एक नहीं, बल्कि कई खाइयों में रह
थे और वे सब मिलकर शिकार किया करते थे। यहां चकमक और हड्डी के
सुनिर्मित औज़ार और हाथी दांत की कई उत्कीर्ण स्त्री मूर्तियां भी मिली थीं। उन
से एक गुदी हुई थी और चमड़े का एप्रन पहने थी। इसका मतलब है कि ये लो
चमड़े को कमाना जानते थे।

इन प्रागैतिहासिक शिकारियों के आवास हमारे अपने घरों जैसे ज़रा भी नह
थे। बाहर से उनका जो हिस्सा दिखाई देता था, वह बस छत थी, जो एक गो
टीले जैसी नज़र आती थी। प्रवेश "चिमनी" में होकर होता था, क्योंकि अके
रास्ता छत में वह छेद ही था, जिससे आग का धुआं बाहर जाता था।

मिट्टी की दीवारों के साथ-साथ बेंचों की जगह मैमथों के जबड़ों की हड्डि
थी। धरती उनकी शैया भी थी। वे लोग एक समतल बनाई हुई आयताकार ज
पर सोते थे और मिट्टी के ढेर तकियों का काम देते थे।

हड्डी की बेंचों और मिट्टी के पलंगोंवाले इस घर की मेज़ें पत्थर की बनी
थीं।

सबसे रोशनीदार जगह, चूल्हे के पास, काम करने का एक ठीहा क़ायम कि
गया था। यह पत्थर की चिकनी सिल्लियों का बना था और इस पर पुरातत्त्वविद
को बहुत से औज़ार, चकमक और हड्डी की छिपटियां और टुकड़े और अधूरी ची

मिली। मेज पर हड्डी के कुछ मनके बिखरे पडे थे। कुछ मनके चिकने किये और उनमे छेद किये हुए थे। बाकी अभी तक अधूरे ही थे। कारीगर ने हड्डी की एक छिपटी पर कई जगह खाचे डाल दिये थे, लेकिन उसे मनको मे काटने का समय नही मिला था। कुछ ऐसा हो गया था जिसके कारण लोगो को अपना रोककर घर को छोड़ देना पडा था। खतरा सचमुच भारी ही रहा होगा, क्यो अन्यथा वे ये सुंदर फल, हड्डी की छेददार सूइया या विभिन्न कामो के चकमक चाकुओ को छोडकर न जाते।

इन सब औजारो का बनाना आसान काम न था। इस आवास मे मिली ह चीज पर कितने ही घटे लगाये गये थे। मिसाल के तौर पर, यहा हड्डी की एक सूई है, जो मानव-जाति के इतिहास मे पहली सूई है। कितनी मामूली चीज है, लेकिन इसके बनाने के लिए बडी निपुणता आवश्यक थी।

एक अन्य शिविरस्थल पर हड्डी की सूइया बनाने की एक पूरी की पूरी शिल्पशाला सभी आवश्यक साज-सामान, हड्डी की छिपटियो और आधी-तैयार सूइयो के साथ मिली। हर चीज जिस हालत मे छोडी गई थी, बिलकुल उसी हालत मे मिली थी।

हमारी आज की दुनिया मे हड्डी की सूइयो का अगर कोई उपयोग हो सकता होता, तो वस्तुत: कल उत्पादन शुरू किया जा सकता था।

लेकिन इस काम को पूरा कर सकने लायक एक भी कारीगर को ढूढने मे हमे बेशक बडी परेशानी होती।

हड्डी की सूई इस तरह बनाई जाती थी। सबसे पहले, चकमक के चाकू से खरगोश की हड्डी से एक छिपटी अलग कर ली जाती थी। इसके बाद इसे सूई जैसा बना लिया जाता था। फिर एक नुकीले चकमक से उसमे छेद किया जाता। और अत मे, सूई को पत्थर की सिल्ली पर घिसकर चिकना कर लिया जाता था।

एक सूई के बनाने मे इतने औजारो और इतने समय की जरूरत पडती थी। हर कबीले मे ऐसे कुशल कारीगर नही थे जो हड्डी की सूइया बना सकते हो। हड्डी की सूई प्रागैतिहासिक काल मे सबसे मूल्यवान चीजो मे एक थी।

आओ, प्रागैतिहासिक शिकारियो के शिविरस्थल पर एक नजर डाले।

बर्फ से ढके स्तेपी के बीच मे हमे कई छोटे-छोटे टीले नजर आते है। उनमे से हर किसी से धुआ उठ रहा है। हम एक टीले के पास आते है और हमारी आखो को पानी से भर देनेवाले धुए के बादलो की परवाह किये बिना चिमनी से होकर भीतर उतरते है।

मान लिया कि हमने जादू की टोपी पहन ली है और अदृश्य हो गये है। कोई भी हमे देख नही सकता। आवास के भीतर धुआ भरा है, अधेरा है और शोर है। भीतर कम-से-कम दस बडे और इनसे अधिक बच्चे है।

जब हमारी आखे धुए की अभ्यस्त हो जाती है, तो हमे लोगो की सूरते और देह नजर आने लगती है। उनमे वानर जैसा कुछ भी नही है। वे लबे, सुगठित और शक्तिशाली है। उनकी कपोलास्थिया उभरी हुई और आखे सटी हुई है। उनके सावले बदन पर लाल रग से डिजाइन बने हुए है।

औरते फर्श पर एक घेरे मे बैठी हड्डी की अपनी सूइयो से जानवरो की खालो

से कपड़े सी रही है। बच्चों के पास खिलौने नहीं हैं और वे एक घोड़े की टांग और एक बारहसिंगे के सींग से खेल रहे हैं। चूल्हे के पास एक कारीगर पालथी मारे पत्थर के ठीहे के पास बैठा है। वह लकड़ी के एक डंडे में हड्डी का फल लगाकर सूआ तैयार कर रहा है। उसकी बगल में एक और कारीगर चकमक के एक चाकू से एक डिजाइन खोद रहा है।

चलो, ज़रा पास चलें और देखें कि यह डिजाइन क्या है। थोड़ी-सी दस रेखाओं द्वारा उसने हड्डी की पटरी पर चरते हुए घोड़े की आकृति बना दी है।

बड़े सब्र और कुशलता के साथ उसने घोड़े की सुंदर टांगें, सीधी गर्दन, छोटे-से अयाल और बड़ा सिर बना दिया है। घोड़ा एकदम जानदार बना है और लगता है कि अभी चल पड़ेगा, क्योंकि अपने मानस नेत्र से कलाकार उसकी आकृति के हर ब्योरे को देख रहा है।

अब चित्र पूरा हो गया है। लेकिन कलाकार यहीं बस नहीं कर देता–वह अपना काम जारी रखता है। वह घोड़े के आरपार एक, फिर दूसरी और फिर तीसरी तिरछी रेखा बना देता है। घोड़े के शरीर पर एक अजीब आकृति नज़र आने लगती है। प्रागैतिहासिक कलाकार कर क्या रहा है? वह एक ऐसे चित्र को क्यों बिगाड़े दे रहा है, जिस पर आज के किसी कलाकार को भी अभिमान हो सकता था?

चित्र अधिकाधिक जटिल होता जाता है। और फिर, हम हैरान होकर देखते हैं कि घोड़े के चित्र के ऊपर एक तंबू का चित्र बन गया है। इसी के बराबर कलाकार एक तंबू और बना देता है और फिर एक और। अरे, यह तो एक शिविरस्थल है!

इस अजीब चित्र का अर्थ क्या है? क्या इसे इस तरह बनाना बस कलाकार के मन की मौज ही थी?

नहीं, इन अजीब चित्रों के पूरे-के-पूरे संग्रह प्रागैतिहासिक शिकारियों की गुफाओं मे मिले हैं। एक मैमथ का चित्र था, जिसके ऊपर दो तंबू बने हुए हैं। बाइसन के एक चित्र पर तीन तंबू थे। और यह रहा एक पूरा चित्र। उस पर बीच मे बाइसन की आधी खाई हुई लाश है। केवल सिर, रीढ़ और टांगों को नहीं छुआ गया है। बड़ी टेढ़ी नाकवाला दढ़ियल सिर अगली टांगो के बीच मे पड़ा है। लाश के बराबर लोगो की दो कतारे खड़ी हैं।

हड्डी की पटरियो, पत्थर की सिल्लियो और चट्टानो पर पशुओ, लोगों और तंबुओ के ऐसे कितने ही अजीब चित्र हैं। लेकिन सबसे अधिक ये गुफाओ की दीवारो पर ही मिलते है।

जब हम अपनी गुफा में खुदाई कर रहे थे, तो हमे दीवारों पर कोई चित्र नहीं मिले थे।

लेकिन हम तो गुफा के मुंह पर ही थे, जहा लोग खाते, सोते और काम करते थे।

अब हमें ज्यादा भीतर चलना चाहिए और हजारों मीटर तक आनेवाली टेढ़ी-मेढ़ी सुरगों मे जाकर हर कोने की जाच करनी चाहिए।

भूमिगत चित्रशाला

अपनी टार्चें ले और गुफा के अदर चलकर खोज शुरू करे। हमे हर मोड और हर चौराहे को याद रखना होगा, क्योंकि यहा रास्ता भूल जाना मामूली बात है।

पत्थर का गलियारा लगातार सकरा होता जाता है। छत से पानी टपक रहा है। हम अपनी टार्चें उठाते है और दीवारो की जाच-पडताल करते है।

भूमिगत धाराओ ने गुफा को चमकते स्फटिको से सजा दिया है। लेकिन यहा कभी किसी आदमी के हाथो ने काम नही किया।

हम गुफा मे और आगे बढ जाते हैं। तभी अचानक कोई चिल्लाता है

"देखो!"

दीवार पर बाइसन का एक बडा चित्र है। यह लाल और काले रगो से रगा हुआ है। जानवर अपनी अगली टागो पर गिर पडा है। उसकी कूबडदार पीठ मे कितने ही सूए धसे हुए है।

हम चित्र के सामने खामोश होकर देर तक खडे रह जाते है। यह दसियो हजार साल पहले के किसी चित्रकार का बनाया हुआ चित्र है।

कुछ आगे चलकर हमे एक चित्र और मिलता है। एक विचित्र दैत्य नाचता सा लगता है। यह या तो कोई आदमी है, जो जानवर जैसा लगता है, या आदमी जैसा दीखनेवाला कोई जानवर है। दैत्य का सिर लबे, मुडे हुए सीगोवाला है, कूबड-दार पीठ है और बालदार दुम है। इसके हाथ और पैर आदमी के है। उसके हाथ मे एक धनुष है।

बारीकी से देखने पर दैत्य बाइसन की खाल पहने आदमी निकलता है।

आगे चलकर एक दूसरा चित्र है, फिर तीसरा और फिर चौथा।

यह कैसी विचित्र चित्रशाला है?

आजकल कलाकार खूब रोशनीदार कलाकक्षो मे काम करते है। चित्रो को चित्रशालाओ मे इस तरह लटकाया जाता है कि उन पर हमेशा खूब रोशनी पडे।

क्या बात रही होगी कि इन प्रागैतिहासिक लोगो ने एक अधेरी गुफा मे, आदमी की आखो से इतनी दूर एक चित्रशाला बनाई?

यह एकदम साफ है कि कलाकार ने ये चित्र औरो के लिए नही बनाये।

लेकिन बात अगर यही है, तो उसने इन्हे बनाया ही क्यो? जानवरो के मुखौटे लगाये इन विचित्र नाचती आकृतियो का मतलब क्या है?

पहेली और उसका हल

"कई शिकारी नाच मे भाग लेते हैं। हर किसी के सिर पर बाइसन की खाल है या उसका सीगदार मुखौटा है। हर शिकारी के पास एक धनुष या भाला है। नाच बाइसन के शिकार का प्रतीक है। जब कोई नाचनेवाला थक जाता है, तो वह गिरने का अभिनय करता है। तब कोई और शिकारी उस पर भोथरा बाण छोडता है। 'बाइसन' घायल हो जाता है। उसे उसकी टागो से पकडकर घेरे के बाहर घसीट लिया जाता है और दूसरे लोग उस पर अपने चाकू चलाने का नाटक करते है। फिर वे उसे छोड देते है और घेरे मे उसकी जगह कोई और नर्तक ले लेता

है जो खुद भी बाइसन का मुखौटा लगाये होता है। कभी-कभी तो नाच क्षण भर के लिए भी रुके बिना दो-दो या तीन-तीन सप्ताह तक चलता रहता है।"

एक दर्शक ने आदिम शिकारियों के नाच का इस प्रकार वर्णन किया है। लेकिन उसने इसे देखा कहां होगा?

उसने इसे उत्तरी अमरीका के मैदानों में देखा था, जहां कुछ आदिवासी कबीलों ने प्राचीन शिकारियों के रिवाजों को अभी तक बरकरार रखा है।

इस प्रकार, एक अन्वेषक की डायरी में हमें अचानक उसी शिकार-नृत्य का वर्णन मिल जाता है, जिसे प्रागैतिहासिक चित्रकार ने गुफा की दीवार पर चित्रित किया था।

अब हम इस रहस्यमय चित्र का मतलब जान गये हैं। लेकिन इस पहेली को हल करने में एक पहेली और आ खड़ी हुई। यह कैसा नाच है, जो हफ्तों चलता है?

नृत्य को हम एक ऐसी चीज़ समझते हैं, जिसे या तो आनंद के लिए या कला के एक रूप में किया जाता है? क्या अमरीकी आदिवासी तीन-तीन हफ्ते थककर गिर जाने तक केवल आनंद के लिए ही नाचते थे, या इसलिए कि वे बड़े कलाप्रेमी थे? फिर उनका नृत्य नाच जैसा कम और संस्कार जैसा ज्यादा लगता है।

जादूगर अपनी चिलम से धुए को किसी खास दिशा में छोड़ता है। नाचनेवाले किसी काल्पनिक पशु का पीछा करते हुए उसी दिशा में जाते हैं। जादूगर नृत्य का धुए से संचालन करता हुआ नर्तकों को उत्तर या दक्षिण, पूर्व या पश्चिम की ओर चलाता है।

लेकिन नृत्य का संचालक अगर जादूगर हो, तो इसका मतलब केवल यही हो सकता है कि यह नाच नहीं, बल्कि जादू-टोना है।

अमरीकी आदिवासी आशा करते थे कि अपनी इन विचित्र हरकतों से वे बाइसनों पर टोना करके उन्हें जादू की विचित्र शक्ति के प्रभाव से प्रेअरी (विशाल मैदान) प्रदेश से निकल आने के लिए प्रलोभित कर लेंगे।

तो यह मतलब है गुफा की दीवार पर बनी नाचती आकृति का! वह कोरा नर्तक ही नहीं, बल्कि एक टोना करनेवाला आदमी भी है। और जो चित्रकार मशाल की रोशनी में चित्र बनाने के लिए ज़मीन के इतना नीचे गया, वह केवल चित्रकार ही नहीं, ओझा भी था।

जानवरों के मुखौटे लगाये शिकारियों और घायल बाइसनों का चित्र बनाकर वह अपना जादू-टोना कर रहा था, शिकार को सफल बनाने के लिए वशीकरण कर रहा था।

और उसे पक्का विश्वास था कि नृत्य-संस्कार से शिकार में सहायता मिलेगी।

यह बात हमें जंगली और बेतुकी दोनों लगती है।

हम जब कोई नया मकान बनाना शुरू करते हैं, तो नींव के पास मेमारों और बढ़इयों की हरकतों की नकल करते हुए कुलांचे नहीं मारते फिरते। शिकार पर जाने के पहले हम बंदूक उठाकर नाचते नहीं। लेकिन जिन बातों को हम मूर्खतापूर्ण समझते हैं, हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वज उन्हें बड़ी गंभीर बात समझते थे।

अब हमने रहस्यमय चित्रों में से एक का भेद जान लिया है और हम यह समझ

है कि दीवार पर नाचते हुए मनुष्य का चित्र क्यों बनाया गया था।

लेकिन हमने दूसरे चित्र भी देखे, जो इतने ही विचित्र थे।

याद है, हमें गुफा में हड्डी की पटरी पर एक पूरी-की-पूरी कहानी खुदी मिली ? यह एक बाइसन के शव का चित्र था, जिसके दोनों तरफ शिकारियों की दो [illegible]रें थीं। इस बाइसन का सिर और अगली टांगें ही अछूती थीं।

इस चित्र का क्या आशय था ?

अगर हम इस बार उत्तर पाना चाहते हैं, तो हमें उत्तरी अमरीका के बजाय [illegible]री रूस जाना होगा।

साइबेरिया में ऐसी जगहें हैं, जहां केवल तीस-चालीस साल पहले तक जो [illegible] शिकारी रीछ को मारते थे, वे "रीछोत्सव" मनाया करते थे। रीछ की लाश को [illegible] में लाया जाता था और सम्मानित स्थान पर रख दिया जाता था। वे रीछ [illegible] सिर को उसके अगले पंजों के बीच में रख देते थे। रोटी या भूर्ज की छाल की [illegible] बारहसिंघे की कई आकृतियां सिर के पास रख दी जाती थीं। यह रीछ का दिया [illegible] नैवेद्य चढ़ावा होता था। रीछ के सिर को भूर्ज की छाल के गोल टुकड़ों से ढंका जाता था, जबकि उसकी आंखों पर चांदी के सिक्के रख दिये जाते थे। इसके बाद हर शिकारी बारी-बारी से रीछ के पास जाता और उसके चुम्बन का [illegible]मता था।

यह तो उत्सव का प्रारम्भ ही था, जो कई-कई दिन, बल्कि कई-कई रात चलता रहता था।

हर रात शिकारी लाश के इर्द-गिर्द इकट्ठा होते और नाचते-गाते। वे भूर्ज की छाल या लकड़ी के बने मुखौटे लगाते, रीछ के पास आते, उसके आगे शीश नवाते और उसकी बेढंगी चाल की नकल करके अपना नाच शुरू करते।

नाच-गाना खत्म हो जाने पर वे उसका सारा मांस खा बैठते, मगर सिर और अगली टांगों को कभी न छुआ जाता।

अब हम हड्डी की पटरी पर बने चित्र का मतलब समझ गये। इसमें बाइसनोत्सव दिखाया गया था। चित्र में दिखाये गये लोगों ने बाइसन को घेर रखा है और उसे अपना मांस देने के लिए धन्यवाद दे रहे हैं। वे उससे अगली बार भी ऐसी ही कृपा करने की प्रार्थना कर रहे हैं।

अगर हम अमरीकी आदिवासियों के पास जाएं, तो हम देखेंगे कि वे भी शिकारियों के ऐसे ही उत्सव मनाया करते थे।

विस्कुआन कबीले के शिकारी मारे हुए हिरन को उसकी [illegible] देते हैं। उसके सिर के पास वे [illegible] रख देते हैं। हर शिकारी बारी-बारी से हिरन के पास आता है, वह अपना दाहिना हाथ [illegible] सिर [illegible] है और [illegible] धन्यवाद देता है कि हिरन ने शिकारी का [illegible]।

'आराम करो, भाई!' [illegible]।

इसके बाद [illegible] हिरन को [illegible]

'तुमने हमें अपना [illegible] दिया, हम तुम्हें इसके लिए धन्यवाद देते हैं।'

वहां अजूबे – वन-राक्षस का फेरा है

सभी रूसी बच्चे राजकुमार इवान और सुंदरी वासिलीसा, लाल
कुबड़े घोड़े, आदमियो का रूप ले लेनेवाले जानवरो और जानवरो का रूप
वाले लोगो की कहानिया जानते है।

अगर परियो की कहानियो मे हमे विश्वास होता, तो दुनिया मे बस
और क्रूर, दृश्य और अदृश्य रहस्यमय प्राणी ही रहते होते। जादू की इस
मे हमे हर समय दुष्ट जादूगरो और भयानक डायनो के जादू-टोने से बचकर
पड़ता।

परियो की कहानियो मे गदी-से-गदी मेढकी भी अचानक एक सुदर राजकुमारी
दल सकती थी, जबकि एक सुदर नौजवान भयकर साप निकल सकता था।
हर चीज़ के अपने ही कायदे-कानून है – मरे हुए लोग ज़िदा हो जाते है, कटे
र बोल सकते है और डूबी हुई औरते मछुओ को पानी मे आने के लिए बहका
है।

वेख्यात रूसी कवि अलेक्साद्र पुश्किन की एक कविता मे हमे ये पक्तिया
है:

> वहा अजूबे – वन-राक्षस का फेरा है
> और जल-परी का डालो पर डेरा है।

और इस परीकथा को पढ़ते समय हम हर बात पर विश्वास करने को तैयार
ो जाते है। लेकिन जैसे ही हम किताब को बद करते है, हम अपनी सचमुच की
निया मे लौट आते है, जहा न जादूगर है, न डायने, जहा हर चीज़ की व्याख्या
जा सकती है। परीकथा चाहे कितनी ही दिलचस्प क्यो न हो, हम कभी जादू
दुनिया मे रहने को तैयार न होगे, जहा दिमाग बेकार रहता है और जहा आदमी
– अगर वह किसी भेड़ियारूपी मनुष्य या डायन से पहली ही टक्कर से जीता
निकलना चाहे, तो – राजकुमार इवान की तरह क़िस्मत का धनी बनकर ही
होना होगा।

किन हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजो के ख़याल से दुनिया ठीक ऐसी ही थी। उन्हे
ो दुनिया मे और आसलियत की जिस दुनिया मे वे रहते थे उसमे कोई फ़र्क
आता था। उनका ख़याल था कि दुनिया मे जो भी कुछ होता है, वह दुनिया
न करनेवाले भूत-प्रेतो या देवी-देवताओ की बदौलत होता है।
हमे पत्थर से ठोकर लग जाती है और हम गिर जाते है, तो हम खुद
ने को और अपने अनाड़ीपन के अलावा और किसी को दोष नही देते।
मगर प्रागैतिहासिक मनुष्य अपने को दोष नही देता था – वह उस भूत-प्रेत
ोष देता, जिसने पत्थर को उसके रास्ते मे रख दिया था।
अगर किसी आदमी को छुरा मार दिया जाता है और वह मर जाता है, तो
ते है कि उसे छुरे से मार डाला गया।

मगर प्रागैतिहासिक मनुष्य कहता कि वह इसलिए मरा कि जो छुरा उसे बेध गया, उस पर टोना किया हुआ था।

बेशक आज भी ऐसे लोग हैं, जो कहते हैं कि "नजर लग जाने" से हम बीमार पड़ सकते हैं, कि सोमवार को किसी भी चीज का प्रारम्भ करना अशुभ होता है, कि काली बिल्ली का रास्ता काट जाना बदशगुनी है।

हम इन लोगों को बेवकूफ समझते हैं। हमारे जमाने में अंधविश्वासी होने का कोई कारण नहीं है, क्योंकि भूत-प्रेतों और देवी-देवताओं में किसी भी प्रकार का विश्वास अज्ञान के ही कारण पैदा होता है। अंधविश्वास मकड़ी के जाले की तरह है, जो अंधेरे कोनों में ही पैदा होता है।

फिर भी हम अपने प्रागैतिहासिक पूर्वजों की हंसी नहीं उड़ायेंगे, जो टोने-टोटकों और भूत-प्रेतों में विश्वास करते थे। प्रकृति के नियमों की व्याख्या करने का यह उनका तरीका था, क्योंकि सही उत्तर जान पाने लायक ज्ञान उनको नहीं था।

कई आदिम आस्ट्रेलियाई कबीले अब भी इसी स्तर पर हैं।

इसलिए इसमें अचरज की कोई बात नहीं कि उनमें आज भी पाषाण युग के अंधविश्वास और पूर्वाग्रह बरकरार हैं।

बीसवीं सदी के आरंभ के एक अन्वेषक ने उनके बारे में यह कहा था:

"तट पर रहनेवाले देशी लोग नये तरह के मस्तूलों और पालोंवाले जहाज या अन्य जहाजों की अपेक्षा अधिक धूमनलियोंवाले भाप के जहाज देखकर बेतरह घबरा जाते हैं। बरसाती, नये तरह का टोप, मुलवा कुर्सी या किसी भी ऐसे यंत्र को देखकर वे बड़े आतंकित हो जाते हैं, जिसे उन्होंने पहले नहीं देखा है।"

वे समझते हैं कि ऐसी कोई भी चीज़, जिसे उन्होंने पहले कभी नहीं देखा है, जादू-टोने से संबंध रखती है।

अनुभव ने उन्हें दिखा दिया है कि सभी चीजें किसी-न-किसी प्रकार आपस में संबंधित हैं। लेकिन क्योंकि वे यह नहीं जानते कि यह संबंध किस प्रकार व्यक्त होता है, इसलिए कुछ चीजों के अन्य चीजों पर जादुई प्रभाव में वे अब भी विश्वास करते हैं।

उनको विश्वास है कि "नज़र" से बचने का अकेला तरीक़ा तावीज़ का उपयोग करना है। यह मगर के दांत का बना हार भी हो सकता है और हाथी की पूंछ के सिरे पर उगनेवाले बालों का बाजूबंद भी हो सकता है। तावीज एक चौकीदार है, जो उसे पहननेवाले को मुसीबत से बचाता है।

प्रागैतिहासिक लोगों को संसार और प्रकृति के बारे में आज के आदिम कबीलों से अधिक जानकारी नहीं थी।

और वे संभवत: जादू, टोने और इंद्रजाल में विश्वास करते होंगे। इसका प्रमाण हमें पुरातात्विक खुदाइयों के स्थलों पर मिले तावीजों में और गुफाओं के जादू-टोने के चित्रों में मिलता है।

हमारे पूर्वजों का दुनिया के बारे में क्या ख्याल है

आदमी के लिए दुनिया में तब रहना बहुत कठिन था, जब वह उस
को नहीं जानता था। उसका विश्वास था कि हर वस्तु तावीज हो सकती
आदमी जादूगर हो सकता है। उसका विश्वास था कि हर कहीं मरे हुओ
हिंसक और अशांत आत्माएं घूमती-फिरती हैं और जीवितों पर टूट पड़ने को
रहती है। शिकार में मारा गया हर जानवर वापस आ सकता है और अपने
से बदला ले सकता है। मुसीबत को टालने के लिए आदमी को हर समय मृता
की खुशामद करनी पड़ती थी और उन्हें चढ़ावे चढ़ाने और शांत करने की क
करनी पड़ती थी।

अज्ञान डर को पैदा करता है।

और क्योंकि मनुष्य के पास ज्ञान का अभाव था, इसलिए वह संसार के स्वा
की तरह नहीं बल्कि एक भयग्रस्त निरीह भिखारी की तरह ही आचरण कर सकत
था।

वह अभी तक इस लायक नहीं हुआ था कि अपने को प्रकृति का स्वामी समझ
सके। अब वह संसार के सभी पशुओं से अधिक शक्तिशाली था, उसने मैमथ को
भी जीत लिया था, लेकिन प्रकृति की महान शक्तियों की तुलना में, जिनसे निपटना
वह नहीं जानता था वह अब भी बहुत ही शक्तिहीन प्राणी था।

एक असफल शिकार का मतलब हफ्तों की भुखमरी था। एक अधड पूरे-के-पूरे
शिविर को बर्फ के नीचे दबा सकता था।

तो फिर मनुष्य को लड़ते रहने की और धीरे-धीरे कदम-ब-कदम प्रकृति की
शक्तियों पर हावी होने की तरफ बढ़ने की ताकत किसने दी?

उसने अपनी शक्ति इस बात से प्राप्त की कि वह अकेला नहीं था।

सारा ही समाज, सारा ही कबीला मिलकर प्रकृति की विरोधी शक्तियों से
लड़ता था। वे मिलकर काम करते थे और अपने सामान्य उद्योग के जरिये उन्होंने
ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया।

ठीक है कि वे इस बात को शायद ही अनुभव करते थे। बल्कि इसे वे अपने ही
ढंग से समझते थे।

वे नहीं जानते थे कि मानव समाज का क्या मतलब है। लेकिन वे यह अनुभव
करते थे कि वे एक साथ जुड़े हुए हैं, कि एक ही कबीले के लोग असल में एक
विराट सहस्रबाहु आदमी है।

और उन्हें क्या चीज एक साथ बांधती थी?

वे खून के बंधनों से बंधे हुए थे। लोग बड़े-बड़े परिवारों में रहते थे—बच्चे
अपनी माताओं के साथ रहते थे और जब वे बड़े हो जाते और उनके अपने बाल-
बच्चे हो जाते, तो भी वे अपने भाई-बहनों, चाचा-चाचियों, माओं-दादियों के
मिलकर ही रहते थे।

इस तरह परिवार की वृद्धि हुई। शिकारी जिस प्रागैतिहासिक समाज में
था, वह उसका अपना परिवार, अपना कुल था, जो एक ही सामान्य पूर्वज
हुआ था। लोगों का विश्वास था कि उनके पास जो भी चीज है, उसके लि
अपने पूर्वजों के ऋणी है। उनके पूर्वजों ने उन्हें शिकार करना और औ

बनाना सिखाया था, उन्होंने उन्हें उनके घर दिये थे और आग का उपयोग बताया था।

काम और शिकार करने का मतलब पूर्वजों की इच्छा को पूरा करना था। जो अपने पूर्वजों की इच्छा का पालन करता था, उसकी मुसीबतों और खतरों में रक्षा की जाती थी। उनके पूर्वज उनके दैनिक जीवन के एक अदृश्य अंग थे, उनकी आत्माएं हर शिकार पर उनके साथ जाती, वे आकाश में हर समय मौजूद रहती थीं। वे आत्माएं सर्वद्रष्टा और सर्वज्ञाता थीं। वे बुरा करनेवाले को दंड दे सकती थीं और भला करनेवाले को पुरस्कृत कर सकती थीं।

इस प्रकार प्रागैतिहासिक मानव के दिमाग में सामान्य हित के लिए सामान्य उद्यम सामान्य पूर्वज की इच्छा के पालन और पूर्ति के अलावा और कुछ नहीं रहा।

फिर भी, प्रागैतिहासिक मानव अपने श्रम के महत्त्व को उस तरह नहीं समझता था, जिस तरह हम आज समझते हैं।

हम मानते है कि प्रागैतिहासिक शिकारी उसी बाइसन के सहारे रहता और अपने परिवार का पेट भरता था, जिसे वह मारता था। लेकिन उसका विश्वास था कि बाइसन उसको भोजन देता था। आज भी प्राचीन काल के अवशेष-रूप में गाय और पृथ्वी को हम "गऊमाता" और "धरतीमाता" ही कहते हैं। हम गाय से उसकी मरजी के बिना उसका दूध ले लेते हैं, मगर कहते फिर भी यही है कि गाय हमें दूध देती है।

प्रागैतिहासिक शिकारी का "पोषक" कोई जानवर था – चाहे वह बाइसन हो, या मैमथ, या बारहसिंघा। शिकारी यह नहीं सोचता था कि उसने जानवर को मारा है, उसका विश्वास था कि उसने उसे अपना मांस और अपना चमड़ा अपनी मरजी से दिया है। अमरीकी आदिवासियों का विश्वास था कि किसी जानवर को उसकी इच्छा के बिना नहीं मारा जा सकता। अगर कोई बाइसन मारा गया, तो वह केवल इसलिए कि वह लोगों की खातिर अपना बलिदान करना चाहता था, क्योंकि वह मारा जाना चाहता था।

बाइसन कबीले का पोषक और रक्षक था। साथ ही, लोग अपने सामान्य पूर्वज को भी कबीले का रक्षक मानते थे।

और इसलिए प्रागैतिहासिक लोगों के दिमाग में (जिन्हें जिस दुनिया में वे रहते थे, उसके बारे में अभी बड़ी ही अस्पष्ट धारणा थी) रक्षक-पूर्वज और कबीले का पोषण करनेवाला रक्षक-पशु – दोनों एकाकार हो गये।

"हम बाइसन की संतान हैं," शिकारी कहते थे। और सच ही वे विश्वास करते थे कि बाइसन ही उनका पूर्वज है। जब प्रागैतिहासिक कलाकार ने बाइसन का चित्र बनाया और फिर उसकी देह पर तीन तंबू बनाये, तो इसका मतलब था – "बाइसन के बच्चों का शिविर।"

अपने दैनिक श्रम में मनुष्य पशुओं से निकट रूप से संबद्ध था। किंतु वह ऐसे किसी संबंध को नहीं समझ सकता था जो रुधिर-संबंध न हो। जब वह किसी जानवर को मारता, तो वह उसे अपना बड़ा भाई कहकर उससे माफ़ी मांगता था। इसके

नाचो और जादू-टोनो मे वह अपने पशु-भ्राता की नकल करने की कोशिश करता था – वह उसका चमडा ओढ लेता था और उसकी चाल-ढाल की नकल करता था।

आदमी ने अभी अपने को "मैं" कहना नही सीखा था। वह अभी तक अपने को कुल का एक अग और औज़ार ही समझता था। हर कुल का अपना नाम और अपना टोटेम (गणचिह्न) था। यह किसी पशु का, उनके सामान्य पूर्वज और रक्षक का नाम था। एक कुल का नाम "बाइसन" था, दूसरे का "रीछ", तो तीसरे का "हिरन"। कुल के सदस्य एक-दूसरे के लिए जान पर खेल जाने को तैयार रहते थे। वे कुल की रूढियो को अपने टोटेम की इच्छा मानते थे और उनके लिए टोटेम की इच्छा ही कानून थी।

पूर्वजों से बातचीत

चलो, प्रागैतिहासिक मानव की गुफा मे लौट चले और उसके साथ चूल्हे के पास बैठ जाये। हम उससे उसके विश्वासो और रिवाजो के बारे मे बातचीत करे।

उसे ही बताने दे कि क्या हमारे अनुमान सही है, क्या हमने उन गुफा-चित्रो और हड्डी के अलकृत तावीजो को ठीक तरह से समझा है, जिन्हे वह जैसे विशेषकर हमारे ही लिए छोड गया लगता है।

लेकिन गुफा के मालिक से हम बात करवाये, तो कैसे ?

हवा चूल्हे से राख को हजारो साल हुए उडाकर ले जा चुकी है। जो लोग कभी यहा आग के पास बैठा करते थे और चकमक और हड्डियो के अपने औज़ार बनाया करते थे और जानवरो की खालो से अपने कपडे सिया करते थे उनकी हड्डिया कभी की धूल मे मिल चुकी है। बहुत कम मौको पर ही कभी पुरातत्वविदो को जमीन मे आदिम-मानव की कोई सूखी और पीली पडी खोपडी मिल पाती है।

क्या हम खोपडी से बात करवा सकते है ?

हमने औज़ारो की छिपटियो और खपचियो की तलाश मे, इन औज़ारो से यह जानने के लिए कि प्रागैतिहासिक मानव कैसे काम करता था, गुफा को खोद डाला।

लेकिन प्रागैतिहासिक मानव की बोली की छिपटिया और खपचिया हम कहा पा सकते है ?

हमे उनकी तलाश खुद अपनी आधुनिक भाषाओ मे करनी होगी।

इस तरह की खुदाई के लिए हमे फावडे की जरूरत नही होगी, क्योकि हम खुदाई जमीन मे नही, किसी शब्दकोश मे करेगे। हर भाषा, हर शब्दावली ने अतीत के मूल्यवान टुकडे सहेज रखे है। और ऐसा होना भी चाहिए। आखिर, सैकडो-हजारो पीढियो का अनुभव हमारी भाषाओ मे ही होकर हम तक आया है।

तुम कह सकते हो – किसी भाषा के बारे मे कुछ चीज़ो के अध्ययन और खोज से भी आसान बात क्या हो सकती है! इसके लिए अलावा इसके और क्या करने की जरूरत है कि एक शब्दकोश लेकर बैठ गये और उसके पृष्ठ पलटने लगे।

लेकिन बात इतनी आसान नही है।

पुराने शब्दों की खोज में शोधकर्ता सारी दुनिया मे भटकते हैं, ऊंचे पहाड़ो पर चढते हैं और महासागरो को पार करते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि कुछ लोगो ने, जिन्होने ऊंचे पहाडो की दीवार के पार अपनी छोटी-सी बिरादरी बना ली है, उन्होने कुछ प्राचीन शब्दो को बरकरार रखा है, जो अन्य भाषाओ मे कभी के लुप्त हो गये है।

हर भाषा मानव-जाति के लंबे पथ पर एक-एक शिविरस्थल की तरह है। आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और अमरीका के शिकारी कबीलो की भाषाएं वे शिविर हैं जिन्हे हम कभी का पीछे छोड़ आये है। तब शोधकर्ता महासागर को पार करके उन प्राचीन शब्दो और अभिव्यंजनाओ की तलाश मे पोलीनेशिया जाते हैं, जिन्हे हम भूल चुके हैं।

शब्दो की अपनी अंतहीन खोज मे वे दक्षिण के मरुस्थलो और उत्तर के तुंद्रा मे दूर-दूर की यात्रा करते है।

सोवियत संघ के सुदूर उत्तर के लोग ऐसे शब्दो का उपयोग करते हैं, जो उनके पास उस जमाने से चले आये है, जब निजी संपत्ति नही थी, जब लोग "मेरा" का मतलब नही जानते थे, जैसे "मेरा घर", "मेरा कुत्ता", आदि।

अगर हम आदिकालीन बोली के अवशेष ढूढना चाहते हैं, तो हमे इन जैसी भाषाओ को उसी प्रकार खोदना चाहिए, जैसे कि पुरातत्त्वविद प्रागैतिहासिक शिविर स्थलो मे आवासो के अवशेषो और औजारो की खुदाई करते हैं।

हर कोई पुराशब्दविद नही हो सकता। इसके लिए विशेष प्रशिक्षण और धैर्य की आवश्यकता होती है, क्योंकि पुराने शब्द किसी भाषा मे सतह पर नही रखे होते। सदियो के दौरान शब्द कई-कई बार बदले हैं। वे एक भाषा से दूसरी भाषा मे गये, वे एक साथ मिले, उन्होंने अपने उपसर्ग और प्रत्यय बदले। कभी-कभी किसी पुराने जले पेड़ की जड़ की ही तरह पुराने शब्द के मूल के अलावा और कुछ बाकी नही बचता। और हम केवल मूल से ही यह बात जान पाते है कि शब्द मूलत कहा से आया।

हजारो वर्षों के दौरान न केवल शब्दो के रूप, बल्कि उनके अर्थ भी बदल गये। अक्सर शब्दों को नये-नये अर्थ दे दिये गये, जो पुराने अर्थों से एकदम भिन्न थे।

ऐसा अब भी होता है। जब कोई नई चीज आविष्कृत होती या पैदा की जाती है, तो हम सदा ही उसके लिए किसी नये शब्द को नही निकालते। हम अक्सर इधर-उधर निगाह डालकर कोई पुराना शब्द ढूढ लेते है और उसे नई चीज पर लेबल की तरह चिपका देते है, मानो वह कोई लेबल हो।

हम जितना-जितना नीचे जाते है, काम उतना ही मुश्किल होता जाता है। किसी शब्द के मूल, आदिकालीन अर्थ को जानने के लिए आदमी को असाधारण रूप से बड़ा विद्वान होना चाहिए।

पुरानी बोली की छिपटियां

अकादमीशियन डा० मेश्चानीनोव लिखते है कि यूकागीर जाति की भाप
एक शब्द है, जो "हिरनआदमीमारा" का समानार्थक है। यह एक लंबा और
बेढंगा शब्द है और इसका मतलब समझना और भी ज्यादा मुश्किल है।
किसने किसको मारा? क्या आदमी ने हिरन को मारा, क्या हिरन ने आद
को मारा, क्या उन दोनो ने मिलकर किसी और को मारा, या किसी और ने उ
दोनो को मारा?

लेकिन यूकागीर इस शब्द को भलीभांति समझता है। जब वह यह कहना
चाहता है कि "आदमी ने हिरन को मारा", तो वह इसी शब्द का उपयोग
करता है।

ऐसा विचित्र शब्द कैसे पैदा हो सकता था?

यह शब्द उस समय का है जब आदमी अभी अपने को "मैं" नही कहता
था, जब उसने अभी यह अनुभव करना शुरू नही किया था कि काम करनेवाला,
हिरन का शिकार पीछा और वध करनेवाला वह खुद था। उसका विश्वास था
कि हिरन को उसने नही, बल्कि उसके पूरे कुल ने, और उसके कुल ने भी नही
बल्कि उन रहस्यमय अज्ञात शक्तियो ने मारा था जिनमे हर चीज शामिल है।
इस घोर अतीत मे मनुष्य अभी तक संसार मे अपने को बड़ा अशक्त और असहाय
समझता था, क्योंकि प्रकृति उसकी आज्ञाकारिणी नही थी।

एक दिन, किसी अज्ञात शक्ति की इच्छानुसार 'हिरनआदमीमारा' सफल
रहा, अगले दिन शिकार असफल रहा और लोग शिविर को खाली हाथ लौट आये।
"हिरनआदमीमारा' मे कोई भी नही है। और प्रागैतिहासिक मानव बेचारा यह
समझ भी कैसे सकता था कि कर्ता कौन है–वह या हिरन? क्योंकि वह तो इसी
बात पर विश्वास करता था कि उसे हिरन उसके अज्ञात रक्षक द्वारा–हिरन के
और उसके सामान्य पूर्वज द्वारा–दिया गया है।

अगर अपनी खुदाइयो मे हम मनुष्य की बोली की सबसे पहली परतो मे बादवाली
परतो की तरफ आये, तो हमे अक्सर बोली के ऐसे अवशेष मिलेगे, जो हमे उस
जमाने की तरफ ले जाते है, जब आदमी अपने को रहस्यमय शक्तियो के हाथ का
क औजार समझता था।

चुकची जाति की भाषा मे एक अभिव्यक्ति है– आदमी से मास देना है अपने
ने को।"

जैसा कि तुम देखते हो, यह एकदम गड्डमड्ड है। हमने यह अभिव्यक्ति बोली
एक ऐसे स्तर मे खोद निकाली है, जो बहुत पहले निर्मित हुई थी जब लोग
ी तरह नही सोचते थे। यह कहने के बजाय कि 'आदमी अपने कुत्ते को मास
है", वे कहते है "आदमी से मास देना है अपने कुत्ते को।" तो फिर आदमी
स देना कौन है? कोई रहस्यमय शक्ति, जो आदमी का एक औजार की तरह
' करती है।

र कहने के बजाय कि "मैं बुनाई कर रहा हूं", संयुक्त राज्य अमरीका के
राज्य के आदिवासी कहते है 'मुझसे बुनाई", मानो आदमी खुद बुनाई
ई है, न कि बुनाई के लिए सलाई का इस्तेमाल करनेवाला।

प्राचीन भाषा-रूपों के अवशेष अभी तक सभी यूरोपीय भाषाओं में मिल सकते हैं।

जैसे फ्रेंच भाषा में "ठंड है", यह कहने के लिए कहते हैं "Il fait froid." लेकिन शब्दशः अनुवाद करने पर इसका मतलब निकलता है: "वह ठंड बनाता है।"

एक बार फिर हम उस रहस्यमय "वह" को पाते हैं, जो दुनिया को शासित करता है।

लेकिन उदाहरणों के लिए हमें विदेशी भाषाओं को ही देखने की जरूरत नहीं। रूसी में भी प्राचीन बोली के, और इसलिए, प्राचीन विचार-रूपों के काफी उदाहरण हैं।

मिसाल के तौर पर, हम कहते हैं: "उस पर कहर गिरा।" यह कौनसी ताकत है, जो आदमी पर कहर गिराती है?

हम किसी भी रहस्यमय शक्ति में विश्वास नहीं करते, लेकिन हमारी भाषा अभी तक हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजों की भाषाओं के अवशेषों को सुरक्षित रखे हुए है, जो इन शक्तियों में दृढ़तापूर्वक विश्वास करते थे।

इस प्रकार किसी भाषा की परतें खोदने पर हम न केवल प्रागैतिहासिक लोगों के शब्द ही, बल्कि विचार भी पा जाते हैं। प्रागैतिहासिक मानव एक विचित्र, रहस्यमय विश्व में रहता था, जहां वह काम तथा शिकार नहीं करता था, बल्कि जहां काम करने में कोई उसका इस्तेमाल करता था और हिरन मारने में उसका इस्तेमाल करता था, जहां जो कुछ भी होता था, वह अज्ञात "किसी" की इच्छा के अनुसार होता था।

लेकिन समय बीतता गया। मनुष्य जितना शक्तिशाली होता गया, अपने आस-पास की दुनिया को और दुनिया में खुद अपनी जगह को वह उतनी ही ज्यादा अच्छी तरह से समझता गया। उसकी भाषा में "मैं" शब्द आ गया और इसी के साथ साथ एक ऐसा आदमी भी आया, जो काम करता था, संघर्ष करता था और चीजों और प्रकृति को अपनी ही इच्छा पूरी करने के लिए विवश करता था।

हम अब नहीं कहते. "हिरनआदमीमारा।" हम कहते हैं: "आदमी ने हिरन को मारा।" तिस पर भी हर भाषा में जब-तब अतीत की छाया मिल ही जाती है। क्या अभी तक हम "अभागा", "होनहार", या "अशुभ" नहीं कहते?

अभागा, होनहार या अशुभ कौन बनाता है?

भाग्य! किस्मत!

लेकिन भाग्य तो वही अज्ञात "कुछ" है, जिससे प्रागैतिहासिक मानव इस कदर दहशत खाता था!

"भाग्य" शब्द अभी तक हमारी भाषाओं में मौजूद है। लेकिन हम निस्संकोच कह सकते हैं कि भविष्य में यह लुप्त हो जायेगा।

किसान धरती को अधिकाधिक विश्वास के साथ जोतता है। वह जानता है कि अच्छी या बुरी फसल उसी पर निर्भर करती है।

अनेक कृषि मशीनें और खादें उसकी सहायक हैं, जो बंजर जमीन को उपजाऊ

बना देती हैं और विज्ञान उसका सहायक है, जो पौधों के जीवन को निदेशित करने मे उसकी सहायता करता है।

नाविक अधिकाधिक विश्वास के साथ समुद्र यात्रा पर रवाना होता है। विशेष यत्र उसे छिछले पानी से आगाह करते है और उसे पहले से बता देते हैं कि समुद्र मे तूफान कब आनेवाला है।

"उसका भाग्य", "होनहार ही थी" – ये ऐसे मुहावरे हैं, जो अब कम-से-कम मौकों पर सुनने को मिलते हैं।

अज्ञान भय को उत्पन्न करता है। ज्ञान आत्मविश्वास लाता है, यह मनुष्य को अब प्रकृति का दास नही, उसका स्वामी बनाता है।

हिमनदियां पीछे हटीं

हर साल, जब बर्फ पिघलना शुरू करती है, तो सभी जगहो पर— जगलो और खेतो मे, गाव की सडको पर, सडको के किनारे की खाइयो मे—मतवाले, तेजी से दौडते, शोर मचाते नाले और झरने अचानक नजर आने लगते है।

शरारती बच्चो की तरह, जिन्हे घर मे नही रखा जा सकता, वे जमी हुई मैली बर्फ के नीचे से फूट पडते है। पानी के नाले पत्थरो के ऊपर से और सडको को पार करते लगातार आगे बढने और हवा को अपनी आह्लाद भरी कलकल से भरते हुए भाग निकलते है।

बर्फ धूप लगनेवाले ढलानो और खुले मैदानो से हटकर खड्डो, खाइयो और दीवारो की आड मे छायादार कोनो मे चली जाती है, जहा यह कभी-कभी मई तक सूर्य की गरम किरणो से छिपी पड़ी रहती है।

प्रकृति रात भर मे बदल गई लगती है। कुछ ही दिनो के भीतर सूरज नगी डालो को पत्तियो से भर देता है।

ऐसा हर वसत मे सर्दियो मे जमी बर्फीली चादर के पिघल जाने के साथ होता है।

लेकिन प्रागैतिहासिक काल मे क्या हुआ, जब बर्फ की वह विशाल चादर आखिर पिघलने लगी, जिसने दुनिया को एक सफेद टोपी की तरह ढाक रखा था?

तब नालो और छोटी नदियो के बजाय बर्फ के नीचे से बडी-बडी गहरी-गहरी नदिया फूट पड़ी। इनमे से कई आज भी रास्ते की हर छोटी नदी और नाले के पानी को समेटती सागर तक जा रही है।

यह प्रकृति का महान पुनर्जागरण था, वह महान वसत था, जिसने उत्तर के नगे मैदानो को विशाल वनो से आच्छादित कर दिया।

लेकिन वसत तुरत ही जोर नही पकड लेता। कभी-कभी ऐन मई के महीने मे भी, किसी गरम और धूपदार दिन के बाद अचानक ठडी हवा चल पडती है और अगले दिन जब तुम सोकर उठते हो, मकानो की छतो पर बर्फ जमी होती है। बाहर हर चीज सफेद होती है, मानो वसत अभी आया ही नही।

महान प्रागैतिहासिक वसत ने भी सर्दी को एकदम ही परास्त नही कर दिया। हिमनदिया धीरे-धीरे पीछे हटी, मानो उन्हे उनकी इच्छा के खिलाफ पीछे धकेला जा रहा था, वे कई-कई सदियो तक अटकी रही।

कभी-कभी कुछ पीछे हट जाने के बाद हिमनदिया रुक गई, मानो अपनी शक्ति इकट्ठा कर रही हो और इसके बाद वे फिर आगे आईं। तुद्रा उनके साथ दक्षिण की ओर आया और अपने चिरसगी रेडियर को अपने साथ ले आया।

मैदान पर काई और शैवाल फैल गये और उन्होंने घास को पीछे हटा दि
चाइगन और घोड़े दक्षिण की ओर घास भरे प्रदेशों की तरफ़ चले गये।

गरमी और सर्दी की लड़ाई बहुत ही लंबे समय तक चलती रही, लेकिन
में गरमी की ही जीत हुई।

पिघलती हिमनदियों के नीचे से बड़ी-बड़ी नदियां बह चलीं। धरती को जि
बर्फ़ानी टोपी ने ढांक रखा था, वह सिकुड़ने और सिमटने लगी। बर्फ़ की सीम
रेखा और उत्तर में चली गई और उसके साथ-साथ तुंद्रा भी चला गया। उन प्रदे
में, जहां कभी केवल शैवाल, काइयां और यत्र-तत्र बिखरे हुए टेढ़े-मेढ़े चीड़
पेड़ ही थे, वहां पास-पास फुट घेरेवाले विशाल चीड़वन खड़े हो गये।

और इस बीच गरमी लगातार तेज और तेज होती जा रही थी।

एस्प और भूर्ज वृक्षों की हरी फुनगियां अधिकाधिक चीड़ वृक्षों की गहरी ह
राशि को फोड़ ऊपर निकली आ रही थीं। उनके पीछे-पीछे चौड़े पत्तेवाले पेड़ों क
विशाल वाहिनी उत्तर की ओर जा रही थी।

"चीड़-युग" अब "बलूत-युग" में परिणत हो गया था। जंगल के एक घ
ने दूसरे को जगह दे दी थी।

लेकिन जंगल के हर घर के अपने ही बाशिंदे होते हैं।

जब पत्रधारी जंगल उत्तर की ओर आये, तो झाड़ियां, खुमियां और बेरि
भी उनके साथ-साथ आईं और उन्हीं के साथ-साथ जंगल के भोजन को खानेवा
पशु भी आ गये। इन पशुओं में जंगली सूअर, सांभर, बाइसन और विशाल सींगोंवा
लाल हिरन भी थे। मधुप्रेमी भूरा रीछ जंगली शहद की तलाश में नीचे के भा
झखाड़ को पार करके आ गया। खरगोशों को दबोचने के लिए भेड़िये गिरी हु
पत्तियों पर दबे पंजों से दौड़ने लगे। गोल-गोल मुंह और छोटे-छोटे पंजोंवाले ऊद
जंगली नालों पर अपने बांध बनाने लगे। भांति-भांति के पक्षियों ने वन को अप
चहचहाहट से भर दिया और जंगल की झीलों पर सारसों और हंसों की आवा
सुनाई देने लगीं।

बर्फ़ के क़ैदी

प्रकृति में जब ये बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे थे, मनुष्य एक तरफ़ दर्शक बना नहीं
खड़ा रह सकता था। नाटक के दृश्यों की तरह उसके इर्द-गिर्द हर चीज़ बदल रही
थी। लेकिन नाटक के विपरीत हर अंक कई-कई हज़ार साल लंबा था, जबकि रंगमं
लाखों वर्गमील में फैला हुआ था।

और इस विश्वव्यापी नाटक में मनुष्य दर्शकों में नहीं था, वह अभिनेताओं में
एक था।

हर बार दृश्य बदलने पर मनुष्य को ज़िंदा रहने के लिए ज़िंदगी के अपने ढं
को बदलना पड़ा।

जब तुंद्रा खिसककर दक्षिण की ओर आने लगा, तो वह अपने साथ रेंडियर को
लाया, मानो ये जानवर उसके क़ैदी थे और उससे जकड़े हुए थे। रेंडियर इस अदृश्
ज़ंजीर के एक सिरे पर थे और तुंद्रा की काई और शैवाल दूसरे पर।

रेंडियर काई और शैवाल चरता तुंद्रा में घूमता था और रेंडियर का पीछा ा आदमी उसका अनुगमन करता था।
स्तेपी में मनुष्य घोड़ों और बाइसनों का शिकार करता था। लेकिन तुंद्रा में रेंडियर का ही शिकार करना पड़ता था।
तुंद्रा में रेंडियर के अलावा वह शिकार कर भी किसका सकता था?
मैमथ सारे-के-सारे मर चुके थे। प्रागैतिहासिक मनुष्य ने हजारों की तादाद में ा संहार करके अपने आवासों के पास मैमथ की हड्डियों के पहाड़ लगा दिये उसने खाने के लिए घोड़ों के बड़े-बड़े झुंडों का सफाया कर दिया था और बाकी बचे थे वे, जब स्तेपी की रसीली घासों की जगह तुंद्रा के सूखे शैवाल ने ि, सुदूर दक्षिण को चले गये थे।
इसलिए तुंद्रा में रेंडियर ही प्रागैतिहासिक मनुष्य का अकेला पोषक बन गया। उसका मांस खाता, उसकी खाल के कपड़े पहनता और उसके सींगों से अपने ' और कांटेदार बर्छियां बनाता। यही कारण है कि उसे अपने जीवन का पूरा रेंडियर के ढर्रे के अनुकूल बनाना पड़ा।
जहां भी रेंडियरों के झुंड जाते, आदमी उनके पीछे-पीछे जाता। जब कबीला डालता तो औरतें सहज ही अपने तंबू खड़े कर लेती और उन्हें खालों से ढक । उन्हें मालूम था कि वे एक ही जगह ज्यादा दिन न रहेंगे। जब मच्छरों के न रेंडियरों को नयी चरागाहों की तलाश में आगे जाने को विवश कर देते, लोगों के पास इसके अलावा और कोई चारा न होता कि अपना डेरा उखाड़े और के पीछे चल दें। औरतें तंबुओं को उखाड़कर अपनी पीठ पर लटका लेतीं। वे न से चूर तुंद्रा में चलती चली जातीं, जबकि आदमी उनके साथ-साथ अपने ा या कांटेदार बर्छियों के अलावा और कुछ भी न लिये हुए उत्साह के साथ ते जाते। घर के धंधों की चिंता में पड़ना मर्द का काम नहीं था।
लेकिन फिर तुंद्रा उत्तर की तरफ हटने लगा और उसी के साथ-साथ रेंडियर जाने लगा। तुंद्रा की जगह विराट अगम्य वन खड़े हो गये।
प्रागैतिहासिक कबीलों का तब क्या हुआ?
कुछ शिकारी कबीले रेंडियरों के झुंडों के पीछे-पीछे उत्तर में आर्कटिक की क चले गये। यही सबसे आसान रास्ता था, क्योंकि तब तक वे उत्तरी ही जलवायु अभ्यस्त हो चुके थे। हिम-युग की बड़ी ठंड हजारों साल रही थी। इन हजारों ों में प्रागैतिहासिक मनुष्य ने सर्दी से लड़ना, अपने कपड़े जानवरों की गरम खाल बनाना सीख लिया था। बाहर जितनी ही ज्यादा ठंड होती, खुदे आवास के है में आग उतनी ही तेजी से जलती।
आर्कटिक जाना उसी जगह रहने की अपेक्षा सरल था। फिर भी सुगमतम मार्ग हमेशा सबसे अच्छा मार्ग नहीं रहता, और मानव-जाति का वह हिस्सा, जो ा के साथ उत्तर चला गया, अंत में घाटे में रहा, क्योंकि उसके लिए हिम-युग आयु हजारों वर्ष के लिए और बढ़ गई। ग्रीनलैंड के एस्किमो आज भी बर्फ में रहते हैं और प्रकृति के विरुद्ध – एक ऐसी प्रकृति, जो निष्ठुर और बलवान है – बेराम संघर्ष करते रहते हैं।

मैदान पर काई और शैवाल फैल गये और उन्होंने घास की जड़ें ह

बाइसन और घोड़े दक्षिण की ओर घास भरे प्रदेशों की तरफ़ चले गये।

गरमी और सर्दी की लड़ाई बहुत ही लंबे समय तक चलती रही, ले

में गरमी की ही जीत हुई।

पिघलती हिमनदियों के नीचे से बड़ी-बड़ी नदियां बह चलीं। इन्हें

बर्फ़ानी टोपी ने ढांक रखा था, वह सिकुड़ने और सिमटने लगी। बर्फ़ क

रेखा और उत्तर में चली गई और उसके साथ-साथ तुंद्रा भी चला गया। ज

में, जहां कभी केवल शैवाल, काइयां और यत्र-तत्र बिखरे हुए ठिगने

पेड़ ही थे, वहां पास-पास घुटे घेरेवाले विशाल चीड़वन खड़े हो गये।

और इस बीच गरमी लगातार तेज़ और तेज़ होती जा रही थी।

एस्प और भूर्ज वृक्षों की हरी फुनगियां अधिकाधिक चीड़ वृक्षों की

राशि को फोड़ ऊपर निकली आ रही थीं। उनके पीछे-पीछे चौड़े पत्तेवाले

विशाल वाहिनी उत्तर की ओर आ रही थी।

"चीड़-युग" अब "बलूत-युग" में परिणत हो गया था। जंगल के

ने दूसरे को जगह दे दी थी।

लेकिन जंगल के हर घर के अपने ही बाशिंदे होते हैं।

जब पत्रधारी जंगल उत्तर की ओर आये, तो भाड़ियां, कुनिया औ

भी उनके साथ-साथ आईं और उन्हीं के साथ-साथ जंगल के जीवन को

पशु भी आ गये। इन पशुओं में जंगली सूअर, साभर, बाइसन और शिकार

लाल हिरन भी थे। मधुप्रेमी भूरा रीछ जंगली शहद की तलाश में बड़े

भखाड़ को पार करके आ गया। खरगोशों को दबोचने के लिए भेड़िये

पत्तियों पर दबे पंजों से दौड़ने लगे। गोल-गोल मुंह और छोटे-छोटे पंजे

जंगली नालों पर अपने बांध बनाने लगे। भांति-भांति के पक्षियों ने वन

चहचहाहट से भर दिया और जंगल की झीलों पर सारसों और हंसों की

सुनाई देने लगीं।

बर्फ़ के
क़ैदी

प्रकृति में जब ये बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे थे, मनुष्य एक तरह दर्शक

खड़ा रह सकता था। नाटक के दृश्यों की तरह उसके इर्द-गिर्द हर चीज़

थी। लेकिन नाटक के विपरीत हर अंक कई-कई हज़ार साल लंबा था, और

लाखों वर्गमील में फैला हुआ था।

और इस विश्वव्यापी नाटक में मनुष्य दर्शकों में नहीं था, वह अभिनेत

एक था।

हर बार दृश्य बदलने पर मनुष्य को ज़िंदा रहने के लिए ज़िंदगी के ढ

को बदलना पड़ा।

जब तुंद्रा खिसककर दक्षिण की ओर आने लगा, तो वह अपने संग रें

लाया, मानो ये जानवर उसके क़ैदी थे और उससे जकड़े हुए थे। रेंडि

जंजीर के एक सिरे पर थे और तुंद्रा की काई और शैवाल दूसरे पर।

रेंडियर काई और शैवाल चरता टुंड्रा मे घूमता था और रेंडियर का पीछा करता आदमी उनका अनुगमन करता था।

स्तेपी मे मनुष्य घोड़ो और बाइसनो का शिकार करता था। लेकिन टुंड्रा मे उसे रेंडियर का ही शिकार करना पड़ता था।

टुंड्रा मे रेंडियर के अलावा वह शिकार कर भी किसका सकता था?

मैमथ सारे-के-सारे मर चुके थे। प्रागैतिहासिक मनुष्य ने हजारो की तादाद मे उनका सहार करके अपने आवासो के पास मैमथ की हड्डियो के पहाड लगा दिये थे। उसने खाने के लिए घोडो के बडे-बडे झुडो का सफाया कर दिया था और जो बाकी बचे थे वे, जब स्तेपी की रसीली घासो की जगह टुंड्रा के सूखे शैवाल ने ले ली, सुदूर दक्षिण को चले गये थे।

इसलिए टुंड्रा मे रेंडियर ही प्रागैतिहासिक मनुष्य का अकेला पोषक बन गया। वह उसका मास खाता, उसकी खाल के कपडे पहनता और उसके सीगो से अपने भाले और काटेदार बर्छियां बनाता। यही कारण है कि उसे अपने जीवन का पूरा ढर्रा रेंडियर के ढर्रे के अनुकूल बनाना पड़ा।

जहा भी रेंडियरो के झुड जाते, आदमी उनके पीछे-पीछे जाता। जब कबीला डेरा डालता तो औरते सहज ही अपने तबू खडे कर लेती और उन्हे खालो से ढक देती। उन्हे मालूम था कि वे एक ही जगह ज्यादा दिन न रहेगे। जब मच्छरो के बादल रेंडियरो को नयी चरागाहो की तलाश मे आगे जाने को विवश कर देते, तो लोगो के पास इसके अलावा और कोई चारा न होता कि अपना डेरा उखाडे और उनके पीछे चल दे। औरते तबुओ को उखाडकर अपनी पीठ पर लटका लेती। वे थकान से चूर टुंड्रा मे चलती चली जाती, जबकि आदमी उनके साथ-साथ अपने भाले या काटेदार बर्छियों के अलावा और कुछ भी न लिये हुए उत्साह के साथ चलते जाते। घर के धधो की चिता मे पडना मर्द का काम नही था।

लेकिन फिर टुंड्रा उत्तर की तरफ हटने लगा और उसी के साथ-साथ रेंडियर भी जाने लगा। टुंड्रा की जगह विराट अगम्य वन खडे हो गये।

प्रागैतिहासिक कबीलों का तब क्या हुआ?

कुछ शिकारी कबीले रेंडियरो के झुडो के पीछे-पीछे उत्तर मे आर्कटिक की तरफ चले गये। यही सबसे आसान रास्ता था, क्योकि तब तक वे उत्तरी ही जलवायु के अभ्यस्त हो चुके थे। हिम-युग की कडी ठड हजारो साल रही थी। इन हजारो वर्षों मे प्रागैतिहासिक मनुष्य ने सर्दी से लडना, अपने कपडे जानवरो की गरम खाल से बनाना सीख लिया था। बाहर जितनी ही ज्यादा ठड होती, खुदे आवास के चूल्हे मे आग उतनी ही तेजी से जलती।

आर्कटिक जाना उसी जगह रहने की अपेक्षा सरल था। फिर भी सुगमतम मार्ग ही हमेशा सबसे अच्छा मार्ग नही रहता, और मानव-जाति का वह हिस्सा, जो टुंड्रा के साथ उत्तर चला गया, अत मे घाटे मे रहा, क्योकि उसके लिए हिम-युग की आयु हजारो वर्ष के लिए और बढ गई। ग्रीनलैंड के एस्किमो आज भी बर्फ मे ही रहते हैं और प्रकृति के विरुद्ध – एक ऐसी प्रकृति, जो निष्ठुर और बलवान है – अविराम सघर्ष करते रहते है।

जो कबीले पीछे ही रह गये, उनकी नियति बिलकुल भिन्न थी। शुरू-शुरू में उगते जगलो में उनकी जिंदगी और भी ज्यादा मुश्किल हो गई। लेकिन अन्त उन्होंने अपने को उस बर्फानी कैदखाने से आज़ाद कर लिया, जिसमें उनके पुर्व हजारों साल कैद रहे थे।

मनुष्य जंगल से जूझता है

पुराने तुद्रा की जगह जो जगल उगे, वे हमारे आजकल के जंगलो जैसे बिलकु नही थे। यह बिलकुल नदियों और झीलों के तट तक और कहीं-कहीं तो ऐसे समु तक उगे हुए विशाल वृक्षों और झाड़-झंखाड की एक अलघ्य दीवार थी, जो हजार किलोमीटर तक चली गई थी।

इस विचित्र और नई दुनिया में प्रागैतिहासिक मानव का जीवन मेल नहीं खा जगल उसे अपने खुरदुरे पजों मे दबाकर घोटे डालता था, इसने उसके लि मास लेने और चलने-फिरने भर को भी जगह न छोड़ी थी। उसे पेड़ों को काट हुए, ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़ों को साफ करते हुए जगल से लगातार जूझ पड़ता था।

तुद्रा या स्तेपी मे प्रागैतिहासिक मनुष्य को शिविरस्थल के लिए अच्छा ठिका ढूढने मे कोई परेशानी न होती थी। हर कहीं काफी जगह थी। लेकिन जगल पहले उसे प्रकृति से खुली जमीन का यह टुकडा छीनना पडता था।

यहा ज़मीन का चप्पा-चप्पा पेडो और घने झाड़-झंखाड से भरा हुआ था उसे जगल पर दुश्मन के किले की तरह हमला करना पड़ता था।

लेकिन हथियारो के बिना कोई लड़ नही सकता।

पेड़ो को काटने के लिए उसे कुल्हाडी चाहिए थी।

और इसलिए उसने एक लबे हत्थे में एक भारी तिकोना चकमक लगाया।

और जगलों मे, जहा पहले कठफोड़वा ही पेडों पर हमला करता था, एक न आवाज़ गूजने लगी। यह नई आवाज पशुओं और पक्षियों को डराती थी। यह पह पेडों पर गिरनेवाली पहली कुल्हाडियो की आवाज़ थी।

तेज़ चकमक पेड की देह मे गहरा घुस जाता। घाव से गाढ़ा रस टपक लकडहारे के पैरो पर गिरते-गिरते पेड़ चरचराता और कराहता।

दिन-प्रति-दिन लोग कुल्हाड़े चलाते हुए जगल की दुनिया मे अपने लिए अ जगह बनाने मे बडे धीरज के साथ जुटे रहे।

जगह साफ कर लेने के बाद वे ठूठो और झाड़-झंखाड़ को जला डालते।

इस तरह से उन्होंने जगल से लड़ाई की और उसे जीता। पर उन्होंने अ पिटे हुए दुश्मन को ऐसे ही नही छोड दिया।

डालो को काट देने के बाद वे पेड के एक सिरे को नुकीला करते और पत्थ के हथौड़े की चोटों से उसे ज़मीन में ठोक देते। इस खभे के बराबर वे एक सर मे एक दूसरा और फिर तीसरा और फिर चौथा खंभा भी ठोक देते। जल्दी ही एक दीवार तैयार कर लेते, जिसे वे खभो के भीतर-बाहर डालियों की बुनाई और मजबूत कर लेते। कुछ समय बाद जगल के बीच में लकडी का एक भंग

उठ खड़ा होता, जो स्वयं एक छोटे जंगल जैसा दिखाई देता था। ये पेड़ों के तने थे, जिनकी डालें आपस में गुंथकर दीवारें बनाती थीं। लेकिन ये तने मनमाने ढंग से नहीं उगते थे। वे जमीन में मजबूती से उसी तरह जमे रहते थे, जैसे आदमी ने उन्हें जमा दिया था।

अगर प्रागैतिहासिक मनुष्य के लिए जंगल की दुनिया में अपने लिए जगह बनाना मुश्किल था, तो वहां भोजन पाना तो और भी कठिन था।

खुले मैदानों में वह झुंडों में रहनेवाले जानवरों का शिकार किया करता था। वहां झुंड को दूर से ही देख लेना आसान था, क्योंकि छोटे से टीले की चोटी से कई किलोमीटर दूर तक देखा जा सकता था।

लेकिन जंगल में बात एकदम दूसरी थी। यद्यपि जंगल के घर में निवासी भरे पड़े थे, उनमें से नजर कोई भी नहीं आते थे। वे वन की सभी मंजिलों को अपनी आवाजों, सरसराहट और चहचहाहट से भर देते थे, लेकिन उन्हें पकड़ पाना बहुत कठिन था।

कोई चीज पैरों के नीचे से सरसराती निकल जाती या निचली पत्तियों को आगे-पीछे झुलाती सर्र-सर्र ऊपर से उड़कर निकल जाती।

प्रागैतिहासिक मनुष्य इन सभी सरसराहटों और गंधों को कैसे अलग करता, पेड़ों के चटकीले तनों में जानवरों की चटकीली चित्तियां कैसे देखता?

जंगल के हर पक्षी और पशु का अपना रक्षात्मक रंग था। पक्षियों के पंख पेड़ों के चित्तीदार तनों जैसे दिखाई देते थे। जंगल के हलके अंधेरे में जानवरों की सुर्ख-कत्थई खाल मरी हुई पत्तियों के रंग की ही नजर आती।

जानवर का पीछा करके उसे पकड़ पाना कठिन था। लेकिन कहीं वह पास आ जाता, तो शिकारी को उस पर अपना हथियार फेंकने का बस एक ही अवसर मिलता। उसका निशाना अचूक होना चाहिए था, नहीं तो जानवर झाड़ियों में गायब हो जाता।

तभी प्रागैतिहासिक शिकारी को अपने नेज़े की जगह तीव्रगामी और अचूक तीर को देनी पड़ी। हाथ में अपना धनुष लिये और कंधे पर अपना तरकश लटकाये वह झुरमुटों में जंगली सूअरों को मारता और दलदलों में बत्तखों और हंसों का शिकार करता चला जाता था।

आदमी का चौपाया दोस्त

हर शिकारी का एक वफादार दोस्त था। उसके दोस्त के चार पंजे, बड़े-बड़े मुलायम-मुलायम कान और एक काली, जिज्ञासा भरी नाक थी।

शिकार के समय यह चार पैरोंवाला दोस्त जानवर को ढूंढने में उसकी सहायता करता। खाने के समय वह अपने मालिक के बराबर बैठता और उसकी आंखों में देखा करता, मानो पूछ रहा हो, "और मेरा हिस्सा?"

यही चौपाया दोस्त आदमी की हजारों वर्षों से निष्ठापूर्वक सेवा करता आ रहा है, क्योंकि यह उसी समय की बात है जब मनुष्य तीर-कमान से शिकार किया करता था कि उसने कुत्ते को पालतू बनाया।

येनीसेई नदी पर अफोनोवा पर्वत पर खुदाई करनेवाले सोवियत पुरातत्त्वविदों को एक प्रागैतिहासिक शिविरस्थल में एक कुत्ते की हड्डिया मिली। ये हड्डिया थूथन को छोड़कर, जो अपेक्षाकृत छोटी थी, भेड़िये की हड्डियों से मिलती-जुलती थी।

प्रागैतिहासिक मनुष्य का कुत्ता सभवतः उसके आवास की पहरेदारी करता था और शिकार मे उसे सहायता देता था। प्रारभिक वन्य बस्तियों मे रसोई का कूड़ा फेकने के गड्ढे हुआ करते थे, जिनमे वैज्ञानिकों को जानवरों की हड्डिया मिली है, जिन पर कुत्ते के दातो के निशान हैं। तो हम देखते हैं कि उस समय भी आदमी का कुत्ता भोजन के समय उसके पास बैठा हड्डी मागा करता था!

कोई आदमी कुत्ते को बेकार ही नही रखेगा और खिलायेगा।

प्रागैतिहासिक मनुष्य कुत्ते को तभी ले लेता, जब वह पिल्ला ही होता और उसे अपना सहायक बनने की, जगल में शिकार का पीछा करने की शिक्षा देता।

सहायक के चुनाव मे उसने गलती नही की। इससे पहले कि वह जगली सूअर के निशानो को देख पाता या बारहसिंघे के कदमों की आहट को सुन भी पाता, उसका कुत्ता तन जाता था और जानवर की गध पकड़ने के लिए अपनी नाक उठा देता था।

झाडियो मे किस चीज की गध थी? अभी-अभी यहा से कौन गुजरा था? निशान पकडने के लिए दो या तीन सुडकने काफी थी। अब कुत्ता न कुछ सुनता था, न देखता था, वह अपने मुख्य कार्य मे पूर्णतः लीन हो जाता था – जानवर को पकड़ने का काम – और जगल मे फुर्ती और तेजी के साथ भागता था। उसके मालिक को बस उसके पीछे जाना भर रहता था।

कुत्ते को पालतू बना लेने के बाद आदमी और भी शक्तिशाली हो गया। उसने कुत्ते की नाक से, जो उसकी अपनी नाक से कही तेज़ थी, अपना काम निकलवाया।

लेकिन आदमी ने कुत्ते की नाक को ही अपने काम मे नही लिया। उसने उसकी चारो टागो का भी उपयोग किया। घोडे को अपनी गाड़ी मे जोतना शुरू करने के बहुत पहले कुत्ते आदमी के सामान और उसके परिवार को खीचने के काम मे लाये जाते थे।

साइबेरिया मे एक प्रागैतिहासिक शिविरस्थल में एक कुत्ते के अवशेषो की बगल में एक साज के भी अवशेष मिले थे।

मतलब यह कि कुत्ते शिकार मे ही आदमी की सहायता नही करते थे, वे उसे ढोते भी थे।

इस तरह आदमी के सबसे अच्छे दोस्त – उसके कुत्ते – से हमारा परिचय हुआ।

इन बुद्धिमान पशुओ के बारे मे, जिन्होंने पहाड़ो मे यात्रियो को बचाया है, लडाई के मैदान से घायलो को निकाला है, घर और देश के सीमान्त की चौकसी की है, कितनी सच्ची कहानिया लिखी जा चुकी हैं! कुत्ते घर मे, शिकार पर, लडाई मे और अनुसंधानशाला मे भी वफादार सेवक हैं।

जब विज्ञान के हितो मे और मानव-जाति की भलाई के लिए वैज्ञानिक कुत्ते को आपरेशन की मेज पर रखता है, तब भी वह उसकी तरफ विश्वासपूर्वक,

अपने मालिक के लिए अपनी जान दे देने को तत्पर प्राणी की निगाहो से ही देखता है।

लेनिनग्राद के निकट पावलोवो नगर मे, जिस प्रयोगशाला मे वैज्ञानिक मस्तिष्क के कार्य का अध्ययन करते हैं, उसकी इमारत के सामने एक स्मारक है।

यह स्मारक हमारे वफादार चौपाये मित्र के सम्मान मे बनाया गया है।

आदमी नदी से लड़ता है

सभी प्रागैतिहासिक लोगो ने जगल मे ही अपने घर नही बनाये। ऐसे भी लोग थे, जिन्होंने घने जगलो को छोड दिया और नदियो और झीलो के तटो पर बस गये।

वहा, पानी और जगल के बीच की ज़मीन की पतली पट्टी पर उन्होंने अपने लकडी के झोपडे बनाये।

नदी के किनारे जगल के मुकाबले जगह ज़्यादा थी, मगर यहा रहना भी उतना ही मुश्किल था।

नदी एक अस्थिर पडोसिन थी। जब वसत मे उसमे बाढ आती और वह किनारे पर चढ आती, तो वह अकसर मनुष्य द्वारा निर्मित झोपडियो को हिमखडो और मनुष्य के गाडे हुए तनो सहित बहाकर ले जाती थी। बाढ से भागकर लोग सबसे पास के पेडो पर जा चढते और विक्षुब्ध नदी के उतर जाने की प्रतीक्षा करते। जब नदी अपने तल पर लौट आती, तो वे तट पर अपनी विनष्ट बस्ती को फिर बनाना शुरू करते।

आरभ मे हर बाढ उन्हे अचक्के मे पकड लेती थी, लेकिन नदी के तौर-तरीको का अध्ययन कर लेने के बाद वे उससे बाज़ी मारने मे सफल हो गये।

उन्होंने कई पेड काटे और उनके तनो को बेडे की तरह एक साथ बाध दिया। बेड़े को उन्होंने नदी के तट पर रख दिया। इसके बाद लट्ठो की पहली तह पर उन्होंने एक तह और डाली। इस तरह तह-पर-तह डालकर उन्होंने एक ऊचा मच बना दिया। इसके बाद इस मच पर उन्होंने अपनी झोपडिया बनाईं। अब उन्हे बाढो का डर नही था, क्योकि विक्षुब्ध नदी जब अपने किनारो को फोड निकलती थी, तो वह झोपडियो की दहलीज़ तक भी नही पहुच पाती थी।

यह एक महान विजय थी, क्योकि निचले तट को उन्होंने ऊचा तट बना दिया था। अपनी नदियो को नियत्रित करने के लिए हम जो बाध और तटबध बनाते हैं, लट्ठो का यह मच ही उन सबका प्रारभ-बिंदु था।

प्रागैतिहासिक मनुष्य ने नदी से जूझने मे काफी श्रम और समय लगाया।

लेकिन नदी के तट पर बसने के लिए वह क्यो तैयार हुआ और वह पानी के पास क्यो रहना चाहता था?

इसका जवाब उन मछियारो से मागो, जो अपने दिन तट पर शातिपूर्वक अपने तिरौदो को देखते-देखते बिता देते है।

प्रागैतिहासिक मानव के लिए नदी का जो बड़ा आकर्षण था, वह उसकी मछलिया थी।

भरे गड्ढे उन जगहों पर स्थित थे, जहां छत को थामनेवाली बल्लियां गड़ी हुई थीं। जले हुए सरकंडों के टुकड़ों ने बताया कि छत सरकंडों की बनी थी। बीच में मिलनेवाली काली धारियां आवास को नष्ट कर देनेवाली आग में बल्लियों के जमीन पर गिरने से बनी थी।

बीच के चूल्हे पर खाना नहीं पकाया जाता था, क्योंकि अगर ऐसा होता तो राख इतनी साफ और सफेद न होती। यहां रेत की परत बहुत मोटी थी, क्योंकि बीच के चूल्हे में प्राचीन परिपाटी के अनुसार दिन-रात अखंड ज्वाला को जलाये रखा जाता था।

कोई आग ही इस ज्वाला को बुझा सकती थी।

घर की औरतें छत को थामनेवाले खंभों के बीच बने चूल्हों पर खाना पकाया करती थीं और यही कारण है कि वहां की राख इतनी मैली थी और जमीन हड्डियों से पटी हुई थी।

चूल्हे कई थे, जिसका मतलब था कि औरतें भी बहुत थीं। ये स्त्रियां, उनके पति और बच्चे बंधुता या सगोत्रता पर आधारित एक बिरादरी के सदस्य थे।

बिरादरी काफी बड़ी थी, जिसमें सौ या शायद उससे भी ज्यादा लोग थे। यही कारण है कि आवास इतना बड़ा था। लेकिन, अब भी यह देखने में अपने पुरखे – नुकीली छतवाले गोल झोंपड़े – से मिलता-जुलता था।

खंभों की दो कतारों से होकर एक लंबा गलियारा प्रवेश-द्वार से बीच के चूल्हे की तरफ जाता था। गलियारे के दाईं तरफ खाना पकाने के चूल्हे थे, बाईं तरफ खाली जगह थी।

घर के भीतर उन्हें खाली जगह की क्यों ज़रूरत थी?

इसका उत्तर मध्य एशिया से बहुत दूर, अंडमान द्वीपसमूह में पाये जानेवाले संयुक्त आवासों में मिला। इन द्वीपों के निवासी इस खाली जगह का उपयोग जादुई संस्कारों और समारोहों के लिए करते थे।

यहीं, गलियारे के बाईं तरफ ही, पुरातत्वविदों को दीवार के साथ-साथ बहुत छोटे-छोटे चूल्हों के निशान मिले। यह वह जगह है, जहां शायद बिरादरी के अविवाहित सदस्य रहा करते थे।

इस प्रकार, वैज्ञानिक अपने मानस नेत्र में उस मकान का पुनर्निर्माण करने में सफल हो गये, जिसमें ये प्रागैतिहासिक मछियारे रहा करते थे।

फिर भी, अवशेषों ने उन्हें इसके बारे में कुछ भी नहीं बताया कि वे मछलियां कैसे पकड़ते थे, उनके पास डोंगियां थीं या नहीं।

एक प्राचीन डोंगी रूस में लादोगा झील के किनारे मिली थी।

जहाजों की परनानी

कोई साठ वर्ष हुए मजदूर लादोगा झील के निकट एक नहर खोद रहे थे। पीट और रेत में खुदाई करते समय उन्हें मनुष्यों की खोपड़ियां और चकमक के औजार मिले।

पुरातत्वविदों को इसका पता चला। वे दलदल से भांति-भांति की चीजों को

इस प्रकार लाने लगे, मानो वह किसी संग्रहालय का शो-केस हो। उन्होंने चकमक के कुल्हाड़े, चकमक के हथौड़े, मछली पकड़ने के कांटे और फल, कांटेदार और सील मछली के रूप में तराशे हुए हड्डी के तावीज खोद निकाले। फिर, और हड्डी की इन सब चीजों की खोज कर लेने के बाद उन्होंने अपनी सब [illegible] खोज की – एक बिन बिगड़ी डोंगी। यह इतनी अच्छी हालत में थी कि आदमी भी इसमें बैठकर मजे में यात्रा कर सकता था। यह हमारे आज के जहाज [illegible] जन्म भी नही थी। हमारी सभी नावों, भाप और तेल के जहाजों की परना[illegible] बड़े बलूत के तने को खोखला करके बनाई गई थी।

अगर तुम इस डोंगी के भीतर निगाह डालो, तो तुम देख लोगे कि [illegible] के कुल्हाड़े ने बलूत के तने पर किस तरह चोटें की थी।

उन जगहों पर, जहां कुल्हाड़ा लकड़ी के तंतु-क्रम के साथ-साथ चलाई [illegible] था, वहां बात इतनी नहीं बिगड़ी और सतह काफी चिकनी है। लेकिन [illegible] अगले और पिछले हिस्से में, जहां कुल्हाड़ा तंतु-क्रम के खिलाफ पड़ा है, काम [illegible] दम निकालनेवाला था। यहां लकड़ी पर सभी तरफ से चोटें की गई हैं। सभी [illegible] उभार और गिराव है, मानो चकमक के दांतों ने बलूत की लकड़ी को चबाया [illegible] कुछ जगहों पर, जहां लकड़ी में गाठें थीं या उसकी वृद्धि टेढ़ी-मेढ़ी हुई थी [illegible] कुल्हाड़ा बिलकुल ही बेकार साबित हुआ। तब, लकड़ी के खिलाफ कुल्हा[illegible] लड़ाई में आग ने आकर कुल्हाड़े की मदद की।

सारा-का-सारा दुबाल (नाव का पिछला हिस्सा) झुलसा हुआ है और [illegible] की काली चिटकी हुई परत से ढका हुआ है। लगता है कि इस जमाने में एक [illegible] बनाना वैसा ही मुश्किल था, जैसा आज एक बड़ा जहाज।

पास ही वैज्ञानिकों को चकमक का वह कुल्हाड़ा भी मिला, जिसने इस [illegible] को बनाया था। इसका धारवाला सिरा चिकना और तेज था। कुछ ही दूर [illegible] में गड़ी एक सान भी थी। इसका मतलब था कि चकमक के औजार पहले की [illegible] सीधे गढ़ नहीं लिये जाते थे, बल्कि अब उन्हें चिकना और तेज भी किया [illegible] था।

और क्या भोथरा कुल्हाड़ा कभी मजबूत बलूत को काट भी सकता था?

आदमी को बलूत को डोंगी में बदलने में बहुत समय और श्रम लगाना [illegible]

आखिर काम पूरा हुआ। नाव को पानी में उतार दिया गया। [illegible] के लोग अपनी कांटेदार बर्छियां, कांटे, [illegible] (मछलीमार भाले) और [illegible] के जाल लेकर झील पर चल पड़े।

झील बहुत बड़ी थी, उसमें मछलियों की भरमार थी, लेकिन लोगों में [illegible] से बहुत दूर जाने की हिम्मत न थी, क्योंकि पानी लोगों के लिए [illegible] अनजाना जगत था। वे यह कैसे जान सकते थे कि वह कैसा है? [illegible] कर सकते थे कि अब वह क्या करेगा? एक दिन वह निश्चल और शांत [illegible] अगले ही दिन वह बड़ी-बड़ी और क्रोधपूर्ण लहरों के रूप में उठने लगता।

जिस विशाल बलूत को कोई भी तूफान कभी नहीं गिरा सकता था, वह [illegible] लहरों पर एक तिनके की तरह तैर और उछल रहा था।

आतक से भरे लोग नाव को किनारे की तरफ ले आये। वहा ठोस जमीन उनका इतजार कर रही थी, जिस पर उनके पैर चलने के आदी थे। धरती हिलती नही थी, वह उन्हे इधर-उधर उछालती नही थी।

और इसलिए प्रागैतिहासिक मनुष्य बच्चे की तरह धरती माता से चिपटा रहता था, जिसने उसका पोषण किया था।

मछली के पीछे आसमान तक फैले पानी के विस्तार के खतरो मे जाने के बजाय मछियारे मछली के तट के पास आने की प्रतीक्षा किया करते थे।

धीरे-धीरे और बहुत ही सावधानी के साथ वे आत्मविश्वास प्राप्त करने लगे और ज्यादा दूर जाने की हिम्मत करने लगे।

एक जमाना था कि आदमी की दुनिया वही खत्म हो जाती थी, जहा पानी की शुरुआत होती थी। हर नदी के तट पर एक अदृश्य दीवार थी, जिस पर लिखा था. "प्रवेश वर्जित है।"

लेकिन मनुष्य इस अदृश्य दीवार को तोडकर निकल आया। अभी तक वह अपनी इस नई दुनिया, पानी की दुनिया की सीमाओ के पास ही रहता था। लेकिन किसी भी नये उपक्रम मे पहला कदम लेना ही सबसे मुश्किल होता है। समय आयेगा कि वह तट से पूरी तरह से अलग हो जायेगा।

वह किसी कमजोर डोगी पर सवार होकर नही, बल्कि एक ऐसे जहाज मे जायेगा, जो उसे समुद्र पर ले जायेगा, जहा वह सुदूर क्षितिज के पार नये-नये तटो को, नये-नये देशो को ढूढेगा, जिसमे उसी की तरह के मनुष्य रहते है।

पहले कारीगर

नौजवान कारीगरो! मैं तुम लोगो से बात कर रहा हू, जिन्होंने कुल्हाडी, रदे, हथौडे और बरमे का उपयोग करना अभी-अभी सीखा है। भावी इस्पात ढालनेवालो और रसायनज्ञो, मशीनो और हवाई जहाजो के डिजाइनरो मकानो और जहाजो के बनानेवालो! मै तुमसे बात कर रहा हू।

यह किताब तुम लोगो के लिए लिखी गई है जिन्हे अपने औजारो और अपने काम से प्यार है।

तुम जानते हो कि तुम्हारे औजार और जिस लकडी या धातु पर तुम काम कर रहे हो, उनकी आपस की लडाई कितनी जबरदस्त और सख्त होती है, और इसमे प्राप्त विजय कितनी आनददायी होती है!

जब तुम लकडी का एक टुकडा उठाते हो, तो तुम जो चीज बनाना चाहते हो, उसकी अपने दिमाग मे कल्पना कर लेते हो। बात बडी ही आसान लगती है – यहा जरा-सा टुकडा काट दिया, यहा छेद कर दिया और यहा से जरा-सा टुकडा निकाल लिया। लेकिन लकडी राजी नही होती। वह अपने को काटनेवाले यत्र का पूरे जोर से मुकाबला करती है।

एक के बाद दूसरा औजार लडाई मे शामिल हो जाता है। अगर चाकू से काम नही चलता, तो कुल्हाडी से चल सकता है। अगर कुल्हाडी काफी मजबूत नही है, तो दर्जनो तेज दातोवाला आरा लडाई को जारी रखता है।

और कुछ समय में यह सब फालतू सामग्री छीलन, छिपटियों और टुकड़े
बदलकर अलग कर दी जाती है जिसने तुम्हारी वांछित आकृति को छिपाकर आ
से ओझल कर रखा था।

तुम जीत गये। मगर जीत अकेले तुम्हारी ही नहीं है। तुम्हारी जीत उन सभी
कारीगरों की बदौलत संभव हुई, जिन्होंने अनेक सदियों के दौरान उन औजारों
का आविष्कार किया और उन्हें सुधारा, जिनका तुम उपयोग करते हो, जिन्होंने
नई सामग्रियों की और उनके उपयोग के नये तरीकों की खोज की।

यहां, इस पुस्तक के पृष्ठों पर, तुम उन पहले कारीगरों के बारे में पढ़ भी
चुके हो जिन्होंने पहले चाकू, कुल्हाड़े और हथौड़े बनाये थे।

तुमने उन्हें काम करते देखा है। जिस तरह तुम्हारा काम कठिन है, इसी तरह
उनका भी था लेकिन इसने भी अंत में उन्हें बड़ी खुशी दी।

ये पहले बढ़ई, किसान और राजगीर कपड़ों की जगह जानवरों की खालें पहना
करते थे। उनके औजार बड़े भद्दे थे। डोंगी बनाने में वे कई महीने लगाते थे। हमारे
लिए मूर्ति बनाना जितना मुश्किल है, उनके लिए खाना पकाने का मिट्टी का एक
बर्तन बनाना उससे ज्यादा मुश्किल था।

लेकिन ये बढ़ई, किसान और कुम्हार निर्माताओं, रसायनज्ञों और इस्पात
ढालनेवालों की उस विशाल सेना के पहले सिपाही थे, जो अपने दैनिक श्रम से
अब धरती का चेहरा बदल रहे हैं।

मिसाल के लिए, आदिकालीन कुम्हारों को ही ले लो। वे पहले आदमी थे,
जिन्होंने एक नई तरह की सामग्री को तैयार किया, जो प्रकृति में नहीं मिलती थी।
पहले, जब कोई प्रागैतिहासिक कारीगर चकमक की कुल्हाड़ी या हड्डी की कांटेदार
बर्छी बनाता था, तब वह जिस सामग्री का उपयोग करता था, उसे बनाता नहीं
था – वह बस उसकी सूरत बदल देता था। लेकिन यह कभी नहीं हुई थी। आदमी
ने मिट्टी का एक बर्तन बनाया और उसे अलाव में पकाया। आग ने मिट्टी के सभी
गुणों को बदलकर उसे ऐसा बना दिया कि उसे पहचाना भी नहीं जा सकता था।

पहले मिट्टी गीली होने पर हमेशा गारे में बदल जाती थी। लेकिन आग में
पकाने के बाद उसे पानी का कोई डर न रहा। उसमें पानी डाला जा सकता था और
इससे न उसकी आकृति बदलती थी, न वह मुलायम हो जाती थी।

प्रागैतिहासिक मनुष्य ने मिट्टी को एक नई वस्तु में बदलने के लिए आग का
उपयोग किया। यह एक दुहरी जीत थी – मिट्टी पर जीत और आग पर जीत।
ठीक है कि आग ने मनुष्य को ठंड से बचाकर, जंगली जानवरों को दूर रखकर,
जंगलों को साफ करने में उसकी सहायता करके और डोंगी बनाने समय उसके
कुल्हाड़े की मदद को आकर पहले भी मनुष्य की सेवा की थी। लोग आग पैदा
करने का भेद भी जान चुके थे, जब भी वे लकड़ी के दो टुकड़ों को आपस में रगड़ते,
आग उनके सामने निश्चय ही उपस्थित हो जाती थी।

अब आदमी ने आग को एक नया और कहीं मुश्किल काम दिया – एक वस्तु
को दूसरी वस्तु में बदलने का काम।

जब मनुष्य ने आग के अद्भुत गुणों को जान लिया, तो उसने उसमें मिट्टी

पकवाना, अपना भोजन तैयार करवाना, अपनी रोटी सिकवाना और तांबा पिघल-वाना शुरू किया।

आज मुझे पूरी दुनिया में मुश्किल से ही कोई ऐसा कारखाना मिलेगा, जो किन्हीं वस्तुओं को अन्य वस्तुओं में बदलने के लिए आग का इस्तेमाल न करता हो।

आग कच्ची धातु से लोहा निकालने, रेत से कांच और लकड़ी से कागज बनाने में हमें सहायता देती है। इस्पात ढालनेवालों और रसायनज्ञों की एक पूरी फौज इस्पात मिलों में जलनेवाली भट्ठियों को नियन्त्रित करती है। और इन सभी भट्ठियों का प्रारंभ उस चूल्हे में हुआ था, जिसमें प्रागैतिहासिक कुम्हार ने अपना पहला घड़ा और छोटा-सा तिकोना बर्तन पकाया था।

पुरातत्त्वविदों को एक प्रागैतिहासिक निवासस्थान पर और कई चीजों में मिट्टी के कई मर्तबान भी मिले।

बाहर की तरफ इन मर्तबानों पर आपस में गुंथी हुई लकीरोंवाले एक बड़े ही सरल डिज़ाइन की सजावट थी। यह डिज़ाइन इस बात का सबूत है कि प्रागैतिहासिक कुम्हार अपने बर्तनों को किस प्रकार आकृति देते और पकाते थे।

एक बुनी हुई टोकरी को भीतर की तरफ मिट्टी की तह से ढक दिया जाता था। इसके बाद टोकरी को आग पर रख दिया जाता था। सरकंडे जल जाते थे और भीतर का बर्तन बच जाता था। पौधों के तनों ने उसकी सतह पर जो आपस में गुंथे हुए निशान छोड़ दिये थे वे ही डिज़ाइन बन जाते थे।

बाद में, जब कुम्हारों ने मिट्टी के बर्तनों को बुनी हुई टोकरियों के बिना पकाना सीख लिया, तब भी वे अपने बर्तनों को उन्हीं खानेदार डिज़ाइनों से ही अलंकृत करते रहे। उनका ख्याल था कि उनकी दादियां-परदादियां जिस तरह के बर्तन इस्तेमाल करती थीं, उनका बर्तन अगर उन्हीं जैसा न हुआ तो वह खाना ठीक से न पकायेगा।

प्रागैतिहासिक कारीगरों का विश्वास था कि प्रत्येक वस्तु में कोई अज्ञात रहस्यमय शक्ति और गुण होता है। कौन जाने बर्तन की असली शक्ति शायद उसके डिज़ाइन में ही हो। अगर उन्होंने डिज़ाइन बदल दिया तो कहीं जिंदगी भर पछताना न पड़े, क्योंकि तब बर्तन दुर्भाग्य, बुरा समय और मुसीबत ला सकता था। कभी-कभी बर्तन को बुरी नज़र से बचाने के लिए कुम्हार उस पर कुत्ते की तसवीर बना दिया करता था।

कुत्ता मनुष्य का सहायक था। कुत्ता उसके साथ शिकार पर जाता था और उसके घर की रखवाली करता था।

बर्तन पर कुत्ते का चित्र बनाते समय कुम्हार अपने मन में कहता — कुत्ता रखवाला है, वह बर्तन की और उसमें रखी हर चीज़ की रखवाली करेगा।

... खानेदार डिज़ाइनों से अलंकृत मिट्टी के मर्तबान कई जगहों पर मिले हैं। ... में एक, जो रूस में कालीनी नदी के पास मिला था, बड़ा सुन्दर है।

कारण उसकी बुआई अनजाने ही करते थे। इसके बाद उन्होंने अनाज को जानकर
बोने के लिए बिखेरना शुरू कर दिया।

अनाज के गाड़े जाने और फिर जीवित हो जाने के बारे मे कितनी ही जातियो
मे अभी तक कथाए और आख्यान प्रचलित हैं।

पुराने ज़माने मे जब स्त्रिया धरती को अपनी कुदालो से खोदती थी और फिर
उसमे अनाज को दाबती थी, तब उन्हे विश्वास रहता था कि वे एक रहस्यमय देवता
ो गाड रही हैं, जो बाद मे अनाज की सुनहरी बालियो के रूप मे उनके पास लौट
येगा। शरद मे जब वे फसल काटती थी, तो वे देवता के परलोक से लौट आने
शुनिया मनाया करती थी।

जब वे आखिरी पूला बाध लेती, तो वे उसे ज़मीन पर रख देती और फिर
उसके इर्द-गिर्द नाचती और गाती। यह कोई मामूली नाच नही होता था। यह
एक जादू-टोने का सस्कार होता था। स्त्रिया परलोक से लौट आने के लिए अनाज
की स्तुतिया करती थी और उससे सदा ही कृपा करने का अनुरोध करती थी।

नये में

राना

इस शताब्दी के आरभ मे महान अक्तूबर समाजवादी क्राति के प
ऐसी जगहे थी, जहा प्रत्येक शरद मे जब फसल काट ली जाती थी
"कटाई" का उत्सव मनाया करती थी।

वे आखिरी पूला लेती और उसके ऊपरी सिरे पर रूमाल बाध देती अ
साया पहना देती। इसके बाद वे एक-दूसरे के हाथ पकडकर उसके गिर्द घे
लेती और गाती

> आज हुई है कटाई
> हमारे खेतो की
> जय हो, जय हो, जय हो।
> एक की हुई है कटाई,
> और एक की हुई बुआई
> जय हो, जय हो, जय हो।

प्रार्थना के इस गीत की अजीब और नीरस आवाज उन मस्ती भरे गीतो से
ज़रा भी मेल नही खाती थी, जिन्हे गाव के नौजवान लडके और लडकिया शाम
को टहलते समय गाते थे।

"कटाई" एक पुराना सस्कार था, जो युगो-युगो मे सबसे पहले किसानो के
समय से चला आ रहा था। ऐसे कितने ही सस्कार मंत्रो और गीतो के रूप मे हम
तक आ गये है।

बच्चे हाथ मे हाथ जोडकर गाते है :

> अरे, हमने बोया था बाजरा
> हा, बाजरा, भई बाजरा।
> अरे, हमने बोया था बाजरा,
> हा, बाजरा, भई बाजरा।

इस तरह अंधविश्वास सदियो जीते रहते है। पत्थर का "मुर्ग देवता"
पाषाणयुग का एक टुकडा था, फिर भी यह बीसवी सदी के आरंभ काल
र जीवित रहा।

भूत
भंडारघर

औरते जब जमीन को अपनी कुदालो से खोदने मे लगी होती, तो मर्द
न बैठे रहते। वे अपने दिन शिकार मे बिताते और देर गये साझ को अपने
चितो के साथ लौटते।

अपने पिता और बडे भाइयो को लौटते देखकर बच्चे यह मालूम करने
कि शिकार सफल रहा या नही, लपककर उनके पास जाते। जगली सुअर के
मे सने सिर की तरफ, जिसके मुह से दो मुडे हुए दात बाहर निकले हुए थ
बारहसिंघे के शाखाओवाले सीगो की तरफ वे बडे कुतूहल के साथ देखते। लेकि
उन्हे सबसे ज्यादा खुशी तब होती, जब शिकारी जिंदा जानवरो को लेकर वापस
आते – नन्हे-नन्हे, दीन भेडो के मेमने या असहाय और बिना सीगो के बछड
बछियाए।

शिकारी अपने चौपाये कैदियो को तुरत ही नही मार डालते थे। उन्हे
बाडे मे रखा जाता था और खिलाया-पिलाया जाता था कि वे बडे हो। पर वे
पास बछडे रभाते और मेमने मिमियाते रहते, तो शिकारी अधिक निश्चित रहते
थे। वे जानते थे कि अगर अगले शिकार मे वे खाली हाथ भी लौटे, तो उन्हे भूखा
न रहना पडेगा। बाडो मे उन्होने अपना खाद्य भडार रख छोडा था, और
यह भडार ऐसा था जो अपने आप बडा होता रहता था और सख्या मे
भी बढता जाता था।

शुरू-शुरू मे लोग चौपायो को उनके मास और खालो के लिए ही रखा करते
थे। पशुपालन मे जो भारी लाभ है, उसका उन्हे पता नही था। शिकारी इन सुरक्षित
जानवरो को अपने शिकार की ही निगाह से देखते थे और अपने शिकार को मारने
के वे आदी थे। उनके लिए यह समझना आसान नही था कि गाय या भेड को जिंदा
रखना उसे मारने से ज्यादा फायदेमद है।

गाय को खाया एक ही बार जा सकता है, मगर उसका दूध बरसो लिया जा
सकता है। गाय को अगर वे मारे नही, तो अतत तब ही गाय से उन्हे ज्यादा मास
मिलेगा, क्योकि गाय हर साल बच्चा जनती है।

भेड के बारे मे भी यही बात थी। मरी हुई भेड की खाल उतारना कोई मुश्किल
न था। लेकिन एक खाल ज्यादा काम की न थी। यह बात ज्यादा फायदे की थी कि
खाल को भेड पर ही रहने दिया जाये और उसका ऊन काट लिया जाये, क्योकि उस
पर हर मुडाई के बाद नया ऊन उग आता था। इस तरीके से उन्हे एक ही भेड
से दस-दस सबाडे तक मिल सकते थे। चौपाये कैदियो को कत्ल करने के ढंग और
बदले मे उनसे खिराज ले लेना ज्यादा अच्छा था।

जब आदमी ने गाय, भेड और घोडे का पालतू बना लिया, तो वह उन्हे अपनी
मर्जी के मुताबिक पालने-पोसने लगा। वह इस बात का ध्यान रखता कि उसका

'प्रागैतिहासिक शिकारी बाइसन या रीछ से अपने मांस का दान करने का अनुरो-
करता था। प्रागैतिहासिक किसान धरती, आकाश, सूर्य और वर्षा से अच्छी
देने की प्रार्थना करता था।

लोगों ने नये देवी-देवताओं को जन्म दिया। ये देवता बहुत कुछ पुराने
वताओं जैसे ही थे। प्रथा के अनुसार वे अभी तक जानवरों के ही रूप में या उ
ों के सिरवाले मनुष्यों के रूप में बनाये जाते थे। लेकिन इन पशुओं के नाम
थे और काम भी।

एक का नाम आकाश था, दूसरे का सूर्य तो तीसरे का पृथ्वी। उजाला और
ा, वर्षा और सूखा पैदा करना इनका काम था। हमारे मनुष्य ने खेती की
कुछ और ढंग भरे थे, लेकिन वह अभी अपनी शक्ति को नहीं जानता था।
उसे अभी तक यही विश्वास था कि उसका दैनिक भोजन उसके अपने श्रम का परि-
णाम नहीं है, बल्कि आकाश से प्रसाद के रूप में मिलता है।

प्रागैतिहासिक शिकारी बाइसन या रीछ से अपने माम का दान करने का अनु
करता था। प्रागैतिहासिक किसान धरती, आकाश, सूर्य और वर्षा से अच्छी फ
देने की प्रार्थना करता था।

लोगो ने नये देवी-देवताओ को जन्म दिया। ये देवता बहुत कुछ पुराने देव
देवताओ जैसे ही थे। प्रथा के अनुसार वे अभी तक जानवरो के ही रूप मे या जान
वरो के सिरवाले मनुष्यो के रूप मे बनाये जाते थे। लेकिन इन पशुओ के नाम भ
ये थे और काम भी।

एक का नाम आकाश था, दूसरे का सूर्य, तो तीसरे का पृथ्वी। उजाला और
ेरा, वर्षा और सूखा पैदा करना इनका काम था। हमारे मनुष्य ने प्रौढ़ता की
: कुछ और डग भरे थे, लेकिन वह अभी अपनी शक्ति को नही जानता था।
अभी तक यही विश्वास था कि उसका दैनिक भोजन उसके अपने श्रम का परि-
नही है, बल्कि आकाश मे प्रसाद के रूप में मिलता है।

पेट भरता रहे और वे ठंड से बचे रहें। लेकिन बदले में गाय को पहले की अपे
कहीं ज्यादा दूध देना पड़ता था, क्योंकि अब उसे केवल अपने बछड़े को ही नहीं
बल्कि अपने मालिकों को भी दूध पिलाना पड़ता था। धीरे-धीरे घोड़े ने भारी बोझ
ढोना सीख लिया। भेड़ के पास अब खुद अपने और अपने मालिकों के लिए काफी
ऊन था।

झुंडों में सबसे ज्यादा दूध देनेवाली गायों, सबसे मजबूत घोड़ों और सबसे
सबसे ऊनवाली भेड़ों को ही रहने दिया जाता था। इस तरह घरेलू पशुओं की नई
नस्लें पैदा हुईं।

लोगों ने यह एकाएक ही शुरू नहीं कर दिया। शिकारी को पशुपालक बनने में
कई सदियां लग गईं।

और अंत में क्या हुआ?

लोगों ने एक अद्भुत भंडारघर खोजा। अपने बोने हुए दानों को वे धरती में
छिपा देते थे, और धरती उनके बोये हर दाने के बदले उन्हें ढेरों दाने लौटा देती
थी।

वे अपने पकड़े सभी जानवरों को नहीं मार देते थे और जिन्हें वे जिंदा रहने
देते थे, वे बड़े होते थे और अपनी संख्या-वृद्धि करते थे।

आदमी ज्यादा आज़ाद हो गया, वह अपने को प्रकृति पर कम आश्रित अनुभव
करने लगा। पहले वह कभी नहीं जानता था कि वह किसी जानवर का पीछा करके
उसे मार सकेगा या नहीं, उसे अपनी टोकरियां भरने लायक काफी अनाज मिलेगा
या नहीं। प्रकृति की रहस्यमय शक्तियां उसे उसका भोजन दे भी सकती थीं और
नहीं भी। अब मनुष्य ने प्रकृति की सहायता करना सीख लिया था – उसने अपना
अनाज पैदा करना और अपनी गायें-भेड़ें पालना-पोसना सीख लिया था। औरतों
को अब जंगली धान्य घासों की तलाश में नहीं जाना पड़ता था। शिकारियों को
जंगल में जंगली जानवरों की तलाश और उनका पीछा करने में अपने दिन बिताना
नहीं पड़ते थे।

अब अनाज की बालियां घर के पास ही उगती थीं, और उनके निकट ही गायें
और भेड़ें चरा करती थीं।

मनुष्य ने एक अद्भुत भंडारघर पा लिया था। फिर भी, यही कहना ज्यादा
सही रहेगा कि यह उसे अचानक ही नहीं मिल गया था, वरन उसने इसका अपने
श्रम से निर्माण किया था।

उसे अपने खेतों और चरागाहों के लिए जमीन चाहिए थी। जमीन को जंगल
से छीनना था, बुआई के पहले उसकी खुदाई करनी थी। यह कितना कठिन परिश्रम
था!

मनुष्य प्रकृति से अपनी स्वतंत्रता और स्वाधीनता की तरफ ऐसे ही नहीं चला
आया, उसे हजारों ही बाड़ों को लांघकर अपना रास्ता निकालना पड़ा। उसकी नई
उद्यमशीलता ने उसकी खुशियों और चिंताओं को बढ़ा दिया था। सूरज फसल को
जला सकता था, वह चरागाहों की हरी घास को सुखा सकता था। अतिवर्षा से
अनाज सड़ सकता था।

प्रागैतिहासिक शिकारी बाइसन या रीछ से अपने मास का दान करने का अनुरोध
करता था। प्रागैतिहासिक किसान धरती, आकाश, सूर्य और वर्षा से अच्छी फस
देने की प्रार्थना करता था।

लोगो ने नये देवी-देवताओ को जन्म दिया। ये देवता बहुत कुछ पुराने देवी-
देवताओ जैसे ही थे। प्रथा के अनुसार वे अभी तक जानवरो के ही रूप मे या जान-
वरो के सिरवाले मनुष्यो के रूप मे बनाये जाते थे। लेकिन इन पशुओ के नाम भी
नये थे और काम भी।

एक का नाम आकाश था, दूसरे का सूर्य, तो तीसरे का पृथ्वी। उजाला और
अंधेरा, वर्षा और सूखा पैदा करना इनका काम था। हमारे मनुष्य ने प्रौढता की
ओर कुछ और डग भरे थे, लेकिन वह अभी अपनी शक्ति को नही जानता था।
मे अभी तक यही विश्वास था कि उसका दैनिक भोजन उसके अपने श्रम का परि-
म नही है, बल्कि आकाश से प्रसाद के रूप मे मिलता है।

समय की सूई आगे चलती है

चलो, समय की सूई को कई हजार साल आगे ले जाये। तब हमारी कहानी के और आधुनिक काल के बीच सिर्फ पचास सदिया ही रहेगी।

पचास सदिया! किसी आदमी की जिदगी या किसी जाति के इतिहास तक की बात करे, तो यह बहुत लबा समय है। लेकिन हम एक आदमी की बात नही कर रहे है, हम पूरी मानव-जाति की बात कर रहे है।

मानव-जाति की आयु लगभग दस लाख वर्ष है। यही कारण है कि पचास सदिया कोई बहुत लबा जमाना नही है।

तो समय की सूई आगे आ गई है। पृथ्वी ने सूर्य की कई हजार परिक्रमाए और कर ली हैं। पृथ्वी के गोले पर इस अरसे मे क्या हुआ है? यह कहने के लिए कि ऊपर की तरफ यह खासा गजा हो गया है एक निगाह ही काफी है।

एक जमाना था कि इसकी बर्फ की सफेद टोपी के इर्द-गिर्द घने हरे जगल उगे हुए थे। अब जगल कम घने हो गये और स्तेपी की चौडी-चौडी धारिया उनमे गहराई तक घुस आई। जहा-तहा पेडो के झुड को धूपदार खुली जगहो ने पीछे धकेल दिया। नदियो और झीलो के पास जगल सरकडो और झाडियो के लिए जगह छोडकर पीछे हट गये।

लेकिन नदी के मोड के पास पहाडी पर वह क्या है? यह ढाल के ऊपर पडे एक पीले रूमाल जैसा नजर आता है।

यह इसान के हाथो से बदला गया धरती का एक टुकडा है। सुनहरी बालियो मे हमे औरतो की झुकी हुई पीठे दिखाई देती है। उनकी दरातिया तेजी से अनाज काट रही है।

हमने हथौडे को हजारो वर्ष पहले काम करते देख लिया था, मगर दरानी को देखने का यह हमारा पहला मौका है। यह हमारी देखी हुई दरातियो की तरह जरा भी नही है, क्योकि यह चकमक और लकडी की बनी है, जिसमे लकडी के फ्रेम मे चकमक के दाते लगे है।

हम जिस खेत मे आये है, वह ससार के सबसे पहले खेतो मे से एक है। अपार वनविस्तारवाली पृथ्वी पर ऐसे पीले "रूमाल" अब बहुत कम है।

अनाज को घासपात सभी तरफ से बेजान किये दे रहे हैं, क्योकि लोगो ने उनसे लडना अभी नही सीखा है। फिर भी, अत मे अनाज की बालियो की ही जीत होती है। एक समय आयेगा जब ये पीले खेत धरती पर एक सुनहरे महासागर की तरह फैल जायेगे।

दूरी पर हमे नदी के किनारे हरे चरागाह पर सफेद, कत्थई और चितकबरी आकृतियो का एक झुड दिखाई देता है। ये आकृतिया चल रही है, कभी अलग हो जाती है, तो कभी फिर पास-पास आ जाती है।

कुछ आकृतिया औरो से बडी हैं। हा, यह गायो, बकरियो और भेडो का झुड है। मानव-प्रयास से उत्पन्न और परिवर्तित हुए इन जानवरो की सख्या अभी बहुत

कम है। लेकिन अपने जगली सबधियों की तुलना में, जिन्हे अपनी देखभाल आप
करनी पडती है, ये कही तेजी से वश-वृद्धि करते हैं।
दो या तीन हजार वर्षों में संसार में गायों और बैलों की तुलना मे जगली भैसे
बहुत कम बाकी रह जायेंगे।

अगर खेत है और जानवरो का झुड भी है, तो पास ही कही बस्ती भी होनी
चाहिए। और यह रही वह—नदी के ऊंचे किनारे पर। यह कोई शिकारियो का
शिविरस्थल नही है। खभो और डालियो की बनी यहां कोई झोपड़ी नही है। इसके
बजाय यहा तिकोनी छतोवाले लकडी के असली घर हैं। दीवारों पर मिट्टी की पुताई
है। प्रवेशद्वार के ऊपर एक शहतीर बाहर निकली हुई है। इसके सिरे पर इस घर
के रक्षक देवता बैल के सीगदार सिर की तराशी हुई मूर्त्ति है। पूरी बस्ती एक ऊंचे
कठघरे और मिट्टी के परकोटे से घिरी हुई है।
हवा धूए, खाद और ताजे दूध की गंध से महक रही है।
घरो के पास बच्चे खेल रहे है, जबकि पास ही कीचड में सूअर लोट रहे हैं।
खुले दरवाजे से चूल्हे मे आग देखी जा सकती है। एक बुढिया चपातिया सेक रही है।
वह गुंधे हुए आटे की लोइयो को गरम राख पर रखती है और चपातियो को मिट्टी
के बर्तन से ढकती जाती है। उसके पास एक बेंच पर लकड़ी के कटोरे और प्याले
रखे हैं।

चलो, गाव से चलते हैं और नदी पर जाते हैं। पानी भरी एक डोगी तट के
पास उथले पानी मे हचकोले खा रही है। अगर हम नदी के रास्ते ऊपर की तरफ
उस झील तक जाये, जहा से यह निकलती है, तो हमे एक गाव और मिलेगा,
मगर इससे बिलकुल भिन्न। दूसरा गांव टापू की तरह पानी के बीच
स्थित है।

सबसे पहले, झील की तली मे नुकीली बल्लियां ठोक दी जाती थी। बल्लियो
पर लट्ठे लगा दिये जाते थे और लट्ठो के ऊपर तख्तेबंदी कर दी जाती थी। सकरे
डगमगाते पुल लकडी के टापू को तट से जोड़ते हैं। घरो की दीवारो पर टंगे जाल
और मछली पकडने के दूसरे साधन सूख रहे हैं। झील मे मछलियो की भरमार होनी
चाहिए। लेकिन इस गाव के निवासी केवल मछियारे ही नही हैं। मकानों के बीच
यहा-वहा हमे नुकीली छतोवाली खतिया मिलती हैं। खतिया गुथी हुई टहनियो की
बनी है। उनमे अनाज भरा है। उनके बराबर में गोशालाएं हैं।

यद्यपि कल्पना मे यह प्राचीन बस्ती बहुत वास्तविक लगती है, असल में यह
कभी की धूल मे परिणत हो चुकी है। भूतपूर्व मकानो की छतें पानी के नीचे चली
गई हैं। झील की तली पर हम इन मकानो के अवशेष कैसे पा सकते है? यह बात
एकदम असभव लगती है। लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई झील सूख जाती
है और हमारे सामने उन रहस्यो को खोल देती है, जिन्हें उसने सदियो से छिपा
रखा था।

झील की कहानी

१८५३ मे स्विटजरलैड मे एक भयानक सूखा पडा। घाटियो मे नदिया सूख गई, झीलो का पानी तटो से हट गया और उसने गाद से ढके तलो को खोल दिया। ज्यूरिच झील के तट पर स्थित आवेरमाइलेन नगर के लोगो ने इस सूखे का फायदा उठाकर झील से जमीन का एक टुकडा छीन लेने की सोची।

इसका मतलब था कि पानी से निकली सूखी जमीन की पट्टी को शेष झील से अलग करने के लिए उन्हे उस पर बाध बनाना था।

काम शुरू हो गया। पहले जिस जगह रविवार के दिन शहर के बने-ठने लोग नीली और हरी नावो पर नौका-विहार करते थे, वहा अब ठेलेवाले बाध के लिए मिट्टी के बोझ के बाद बोझ लानेवाली ठेलागाडियो मे जुते घोडो पर चीखने-चिल्लाने लगे। बाध के लिए मिट्टी उन्हे झील के पेंदे से, जो अब अप्रत्याशित रूप से सूखी जमीन बन गया था, वही मिल गई। तभी अचानक जमीन खोदनेवालो मे से एक का बेलचा एक सडी हुई बल्ली से जा लगा। उसी के पास उन्हे एक और फिर एक और बल्ली मिली। प्रकटत यहा लोग पहले काम कर चुके थे। हर बेलचा भर मिट्टी चकमक के कुल्हाडे, मछली पकडने के काटे और मर्तबान लेकर आती। शीघ्र ही पुरातत्त्वविद मौके पर पहुच गये। उन्होंने हर बल्ली, झील के पेंदे पर मिली हर वस्तु का अध्ययन किया और बैसाखियो पर बने एक गाव को कागज पर पुनर्निर्मित किया, जो किसी जमाने मे ज्यूरिच झील के तट पर खडा हुआ था।

इसी प्रकार के खम्भो पर बने और बल्लियो पर खडे गावो के अवशेष रूस मे मास्को के निकट क्ल्याज्मा नदी और मूरोम के पास वेलेत्मा नदी के किनारे मिले। यहा मिली विभिन्न वस्तुओं मे मछलियो की हड्डिया, काटेदार बर्छिया और मछली पकडने के काटे थे।

हमारी सदी मे पुरातत्त्वविदो ने स्विटजरलैड मे नॉएशातेल झील का अध्ययन किया। झील के पेंदे को कई जगहो पर काटकर उन्होंने पाया कि वह कई परतो का बना है।

जिस तरह कचौडी मे पपडी को भीतर भरी चीज से अलग करना आसान होता है, उसी तरह यहा भी यह एकदम साफ था कि एक परत कहा शुरू हुई और दूसरी कहा खत्म हुई। सबसे नीचे की परत रेत की थी, इसके बाद मनुष्य के आवासो, घरेलू सामान और औजारो के अवशेषो से भरी गाद की एक परत आई, इसके बाद फिर रेत की एक परत। यह क्रम कई बार आया। एक जगह पर रेत की दो परतो के बीच कोयले की एक मोटी परत थी।

ये सभी परते कैसे बनी?

पानी केवल रेत ही जमा कर सकता था। कोयला कहा से आया?

यह केवल आग से ही आ सकता था।

परतो का सावधानीपूर्वक अध्ययन करके पुरातत्त्वविदो ने झील के इतिहास को जाना। एक बार बहुत-बहुत पहले लोग झील पर आये और उन्होंने इसके किनारे एक बस्ती बसाई। फिर कई वर्ष बाद झील मे बाढ आई और उसने किनारो को पानी मे डुबा लिया।

लोगो ने अपने बाढग्रस्त गाव को छोड दिया। मकान पानी मे सड गये और

[illegible] है। लेकिन अपने जंगली संबंधियों की तुलना में, जिन्हें अपनी देखभाल [illegible] करनी पड़ती है, ये कहीं तेज़ी से वंश-वृद्धि करते हैं।

दो या तीन हज़ार वर्षों में संसार में गायों और बैलों की तुलना में [illegible] बहुत कम बाकी रह जायेंगे।

अगर खेत हैं और जानवरों का झुंड भी है, तो पास ही कहीं बस्ती भी होनी चाहिए। और यह रही वह – नदी के ऊंचे किनारे पर। यह कोई [illegible] शिविरस्थल नहीं है। खंभों और डालियों की बनी यहां कोई झोपड़ी नहीं है। [illegible] बजाय यहां तिकोनी छतोंवाले लकड़ी के असली घर हैं। दीवारों पर मिट्टी की पुताई [illegible] है। प्रवेशद्वार के ऊपर एक शहतीर बाहर निकली हुई है। इसके सिरे पर [illegible] के रक्षक देवता बैल के सींगदार सिर की तराशी हुई मूर्ति है। पूरी बस्ती एक [illegible] कठघरे और मिट्टी के परकोटे से घिरी हुई है।

हवा धूएं, खाद और ताज़े दूध की गंध से महक रही है।

घरों के पास बच्चे खेल रहे हैं, जबकि पास ही कीचड़ में सूअर लोट रहे [illegible] खुले दरवाज़े से चूल्हे में आग देखी जा सकती है। एक बुढ़िया [illegible] वह गुंधे हुए आटे की लोइयों को गरम राख पर रखती है और [illegible] के बर्तन से ढकती जाती है। उसके पास एक बेंच पर लकड़ी के कटोरे और [illegible] रखे हैं।

चलो, गांव से चलते हैं और नदी पर जाते हैं। पानी भरी एक [illegible] पास उथले पानी में हचकोले खा रही है। अगर हम नदी के रास्ते ऊपर [illegible] उस झील तक जायें, जहां से यह निकलती है, तो हमें एक गांव और [illegible] मगर इससे बिलकुल भिन्न। दूसरा गांव टापू की तरह पानी के [illegible] स्थित है।

सबसे पहले, झील की तली में नुकीली बल्लियां ठोक दी जाती थीं। [illegible] पर मट्ठे लगा दिये जाते थे और मट्ठों के ऊपर तख्तेबंदी कर दी जाती थी। [illegible] डगमगाते पुल लकड़ी के टापू को तट से जोड़ते हैं। घरों की दीवारों पर [illegible] और मछली पकड़ने के दूसरे साधन सूख रहे हैं। झील में मछलियों की [illegible] चाहिए। लेकिन इस गांव के निवासी केवल मछियारे ही नहीं हैं। [illegible] यहां-वहां हमें नुकीली छतोंवाली खत्तियां मिलती हैं। खत्तियां गुंथी हुई [illegible] बनी हैं। उनमें अनाज भरा है। उनके बराबर में गोशालाएं हैं।

यद्यपि कल्पना में यह प्राचीन बस्ती बहुत वास्तविक लगती है, [illegible] कभी की धूल में परिणत हो चुकी है। भूतपूर्व मकानों की [illegible] गई है। झील की तली पर हम इन मकानों के अवशेष कैसे पा सकते हैं? [illegible] एकदम असंभव लगती है। लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि [illegible] है और हमारे सामने उन रहस्यों को खोल देती है, जिन्हें उसने [illegible] रखा था।

झील की कहानी

१८५३ मे स्विटजरलैंड मे एक भयानक सूखा पडा। घाटियो मे नदिया सूख गईं, झीलों का पानी तटो से हट गया और उसने गाद से ढके तलो को खोल दिया। ज्यूरिच झील के तट पर स्थित आबेरमाइलेन नगर के लोगो ने इस सूखे का फायदा उठाकर झील से जमीन का एक टुकडा छीन लेने की सोची।

इसका मतलब था कि पानी से निकली सूखी जमीन की पट्टी को शेष झील से अलग करने के लिए उन्हे उस पर बाध बनाना था।

काम शुरू हो गया। पहले जिस जगह रविवार के दिन शहर के बने-ठने लोग नीली और हरी नावो पर नौका-विहार करते थे, वहा अब ठेलेवाले बाध के लिए मिट्टी के बोझ के बाद बोझ लानेवाली ठेलागाडियो मे जुते घोडो पर चीखने-चिल्लाने लगे। बाध के लिए मिट्टी उन्हे झील के पेंदे से, जो अब अप्रत्याशित रूप से सूखी जमीन बन गया था, वही मिल गई। तभी अचानक जमीन खोदनेवालो मे से एक का बेलचा एक सडी हुई बल्ली से जा लगा। उसी के पास उन्हे एक और फिर एक और बल्ली मिली। प्रकटत यहा लोग पहले काम कर चुके थे। हर बेलचा भर मिट्टी चकमक के कुल्हाडे, मछली पकड़ने के काटे और मर्तबान लेकर आती। शीघ्र ही पुरातत्त्वविद मौके पर पहुच गये। उन्होंने हर बल्ली, झील के पेंदे पर मिली हर वस्तु का अध्ययन किया और बैसाखियो पर बने एक गाव को कागज पर पुनर्निर्मित किया, जो किसी जमाने मे ज्यूरिच झील के तट पर खडा हुआ था।

इसी प्रकार के तख्तो पर बने और बल्लियो पर खडे गावो के अवशेष रूस मे मास्को के निकट क्ल्याज्मा नदी और मूरोम के पास वेलेत्मा नदी के किनारे मिले। यहा मिली विभिन्न वस्तुओं मे मछलियो की हड्डिया, काटेदार बर्छिया और मछली पकडने के काटे थे।

हमारी शती में पुरातत्त्वविदो ने स्विटजरलैंड मे नॉएशातेल झील का अध्ययन किया। झील के पेंदे को कई जगहो पर काटकर उन्होंने पाया कि वह कई परतो का बना है।

जिस तरह कचौडी मे पपड़ी को भीतर भरी चीज से अलग करना आसान होता है, उसी तरह यहा भी यह एकदम साफ था कि एक परत कहा शुरू हुई और दूसरी कहा खत्म हुई। सबसे नीचे की परत रेत की थी, इसके बाद मनुष्य के आवासो, घरेलू सामान और औजारो के अवशेषों से भरी गाद की एक परत आई, इसके बाद फिर रेत की एक परत। यह क्रम कई बार आया। एक जगह पर रेत की दो परतो के बीच कोयले की एक मोटी परत थी।

ये सभी परतें कैसे बनी?

पानी केवल रेत ही जमा कर सकता था। कोयला कहा से आया?

यह केवल आग से ही आ सकता था।

परतो का सावधानीपूर्वक अध्ययन करके पुरातत्त्वविदो ने झील के इतिहास को जाना। एक बार बहुत-बहुत पहले लोग झील पर आये और उन्होंने इसके किनारे एक बस्ती बसाई। फिर कई वर्ष बाद झील मे बाढ आई और उसने किनारों को पानी मे डुबा लिया।

लोगो ने अपने बाढग्रस्त गाव को छोड दिया। मकान पानी मे सड गये और

टुकड़े-टुकड़े हो गये। जहां किसी समय शहतीरों के नीचे अबाबीलें घोंसले बनाया करती थीं, वहां अब छोटी-छोटी मछलियों के दल इधर-उधर तैरने लगे। किसी समय जो किसी मकान का दरवाजा था, उससे अब तेज दांतोंवाली पाइक मछलियां मंथर गति से तैरकर निकलती थीं। चूल्हे के पास जो बेंच थी, उसके नीचे [illegible] मछलियां अपनी मटरगश्ती चलाती थीं। शीघ्र ही खंडहर गाद की एक परत के नीचे दब गये और रेत से ढक गये।

कालांतर में झील बदल गई। पानी तट से उतर गया और पेंदा उघड़ गया। जिस बलुई भित्ति पर कभी गांव था, वह भी फिर नजर आने लगी। लेकिन गांव का कहीं कोई निशान न था, क्योंकि उसके खंडहर रेत में दरारों पर दबे हुए थे।

अब लोग फिर तट पर आये। कुल्हाड़ों की आवाज हवा में गूंजने लगी। पीली रेत पर लकड़ी की खपचियां बिखर गईं। एक के बाद एक पानी के निकट नये मकान घर खड़े होने लगे।

आदमी और झील के बीच लड़ाई चलती रही। कभी एक पक्ष की जीत होती, तो कभी दूसरे की। लोग अपने घर बनाते, और झील उन्हें नष्ट कर देती।

आखिर लोग लड़ाई से उकता गये। उन्होंने अपने घरों को पहले की भांति पानी के किनारे पर नहीं, बल्कि उसके ऊपर बनाने का निश्चय किया। उन्होंने झील के पेंदे में लंबी बल्लियां ठोकीं। तख्तेबंदी की दरारों में से वे बहुत नीचे छपछपाते पानी को देख सकते थे। लेकिन अब उन्हें इसकी चिंता न थी। यह विशाल चाहे उठे मगर तख्तेबंदी तक कभी नहीं पहुंच सकता था।

लेकिन झील के निवासियों की एक दुश्मन और थी और वह थी आग।

प्रागैतिहासिक गुफावासी आग से नहीं डरते थे, क्योंकि उनकी गुफाओं की [illegible] सकती थी।

जो हुआ, वह यह था।

जब अलग-अलग चीज़ो ने आग पकडी, तो वे पानी मे गिर पडी। पानी ने
हे बचा लिया, क्योकि उसने आग को बुझा दिया और वे बिना हानि हुए तले
जा डूबी। वहा उनके लिए एक नया खतरा था – वे पानी मे गल सकती थी।
दूसरी बार जिस चीज़ ने बचाया, वह यह थी कि वे भुलस गई थी। कोयले
तली-सी परत ने उन्हे गलने से बचा लिया।
ानी और आग ने अगर अलग-अलग काम किया होता, तो वे निस्सदेह इन
ीज़ो को नष्ट कर देते। लेकिन मिलकर काम करके उन्होने हज़ारो वर्ष पहले
नेन के कपडे के एक नमूने जैसी नाजुक चीज़ को भी आज तक बचाकर रख

पहला कपडा हाथ मे बुना गया था।

एस्किमो लोग आज भी बुनाई के लिए करघे का उपयोग नही करते वे अ
कपडा हाथ से बुनते है। वे लबाई की ओर जानेवाले धागो (ताने) को एक चौ
पर लगा देते है। फिर वे आर-पार जानेवाले धागो (बाने) को इनकी का उपयो
किये बिना हाथ से ले जाते है। धागे लगे हुए इस छोटे से चौखटे मे आधुनिक करघ
पहचानना कठिन है। फिर भी, आधुनिक करघे का जन्म लकडी के इस साधारण
चौखटे मे ही हुआ था।

भील के पेदे पर मिला भुलसा हुआ और काला पडा चिथडा हमे मनुष्य के
जीवन की एक अत्यत महत्वपूर्ण घटना के बारे मे बताता है। वह जो सदा जानवरो
की खाले ही पहना करता था, उसने अब अपने लिए लिनेन की जिसे उसने खेतो
मे बोया और काटा था, "खाल" बना ली थी।

सूई, जो कपडे के ईजाद किये जाने से हज़ारो साल पहले पैदा हो चुकी थी,
उसे आखिर जिदगी मे अपनी वाजिब जगह मिल गई। वह जानवरो की खालो को
नही, कपडे के टुकडो को सीने लगी।

औरतो के लिए सुदर-सुदर नीले फूलोवाले सन के खेतो का मतलब ज्यादा
चिता और परेशानी थी।

उनके हाथ कटाई करते-करते दुखने लगते मगर सन उखाडने का समय होता।
पहले उन्हे हर पौधे को जड सहित उखाडना पडता। इसके बाद सन को सुखाया
धोया और फिर सुखाया जाता। इसी पर अत किसी भी तरह न हो जाता। सुखे
सन को कूटा, पीटा और कघो मे भाडा जाता। आखिर अब तारो के बालको के
सनई बालो जैसा हलके रग का धुला और भाडा हुआ सन तैयार हो जाता। अब
लकनिया रेशे को धागे मे बदलती हुई घूमना शुरू कर देती। और धागा बनने के
बाद इसे बुना जा सकता था।

कपडा बनाने के लिए बडा काम करना पडता था लेकिन स्त्रियो के लिए अब
अपनी सारी मुसीबतो के बदले मे रगीन भालर और किनारीदार खूबसूरत कमीज़
एप्रन और सहगे भी सो थे।

नया औज़ार बनाते, तो वे एक बड़े ढेले से शुरू करते और तब तक धीरे-धीरे उसके टुकड़े उतारते जाते जब तक कि एक छोटे से औज़ार के अलावा और कुछ न बाकी रहता। उनके आवासों के आसपास चकमक की छिपटियों के ढेर-के-ढेर लगे रहते, जो औज़ार बनाने के लिए बेकार थीं। आज भी तुम हर कहीं पड़ी छीलन को देखकर बढ़ई की दूकान को पहचान सकते हो।

लाखों वर्षों के दौरान चकमक के प्रभूत भंडार क्षीण हो गये। अगर आज हम चकमक का औज़ार बनाने की सोचें, तो हमें बहुत कम चकमक मिल पायेगा क्योंकि हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए चकमक नहीं छोड़ा है।

संसार में चकमक का अकाल पड़ गया। यह एक भयानक विपत्ति थी। ज़रा कल्पना करो कि अगर काफ़ी लोहा न रहे, तो हमारे कल-कारख़ानों का क्या होगा। कच्ची धातु की खोज में खनिकों को धरती के अधिकाधिक भीतर खुदाई करनी होगी, क्योंकि सतह के पासवाले भंडार इस्तेमाल में आ चुके होंगे।

प्रागैतिहासिक लोगों को भी बिलकुल यही करना पड़ा। उन्होंने खदानें खोदना शुरू की – संसार की पहली खदानें।

हमें कभी-कभी खड़िया मिट्टी (चॉक) के निक्षेपों में ऐसी प्राचीन दस-ग्यारह मीटर गहरी खदानें मिल जाया करती हैं, क्योंकि चकमक और खड़िया अक्सर साथ-साथ मिलते हैं।

उन दिनों सतह के नीचे काम करना बड़ा भयावह था। लोग खदान में रस्सी या दांतेदार बल्ली के सहारे उतरते थे। नीचे अंधेरा और धुआं भरा होता था। लोग लकड़ी की जलती चिपटी या तेल के नन्हें से दीये की रोशनी में काम करते। आजकल खदानों और खाइयों में अपनाये जानेवाले सुरक्षा के उपायों में भारी काठ-बंदी शामिल होती है, पर उन दिनों ज़मीन के नीचे की सुरंगों की दीवारों और छत को सुदृढ़ करने के बारे में कोई कुछ न जानता था। अक्सर ढीली हुई चट्टान का ढेर अपने नीचे के खनिकों को जान से मार देता था। चकमक की प्राचीन खदानों में घुसने हुए खनिकों की ठठरियां खड़िया के बड़े-बड़े खंडों के नीचे दबी हुई मिली हैं। ठठरियों के बराबर उनके औज़ार थे – सींगों की बनी कुदालें।

ऐसी दो ठठरियां एक ही सुरंग में मिली थीं – एक वयस्क आदमी की थी और दूसरी बच्चे की। कोई पिता संभवतः अपने पुत्र को अपने साथ ले गया होगा, मगर वे कभी घर लौटकर न गये।

हर सदी के बीतने के साथ-साथ चकमक लगातार कम पड़ता जा रहा था और उसका खनन कठिन होता जा रहा था। लेकिन प्रागैतिहासिक मानव को चकमक की आवश्यकता थी। वह उससे अपने कुल्हाड़े, चाकू और कुदालें बनाता था।

उसे चकमक का काम देनेवाली किसी चीज़ की सख़्त ज़रूरत थी।

और तब प्रकृत तांबा आड़े वक़्त काम आया। लोग इसकी तरफ़ ज़्यादा गौर से देखने लगे – यह हरा पत्थर क्या है? क्या इसका कोई इस्तेमाल हो सकता है?

जब वे शुद्ध तांबे का कोई टुकड़ा उठा लाते, तो वे उसे पीटना शुरू करते, क्योंकि उनका ख़याल था कि तांबा पत्थर ही है और इसलिए वे उसे चकमक की ही तरह गढ़ने की कोशिश करते थे। चकमक के हथौड़े की चोट तांबे को और कड़ा

बन देती थी और उसकी आकृति को बदल देती थी। लेकिन उसे पीटने का एक भाग गलता था। अगर चोटें ज्यादा सख्त होतीं, तो तांबा भुरभुरा हो जाता था और टुकड़े-टुकड़े हो जाता था।

इस तरह मनुष्य ने पहले-पहल धातु को गढ़ना शुरू किया। ठीक है कि अभी तक यह ठंडी गढ़ाई ही थी, लेकिन ठंडी गढ़ाई से उष्ण गढ़ाई अधिक दूर नहीं थी।

कभी-कभी ऐसा होता कि शुद्ध तांबे या खनिज तांबे का टुकड़ा आग में गिर जाता। या शायद आदमी ही उसे पकाने की कोशिश करता, जैसे वह अपने मिट्टी के बर्तनों को पकाया करता था। जब आग बुझती, तो राख और कूड़े में लाल पत्थरों में पिघले तांबे का एक गोला होता।

लोग अपने किये हुए इस "चमत्कार" की तरफ अचरज के साथ देखते। लेकिन उनको विश्वास था कि इस हैरान किये स्याह पत्थर को जिस चीज ने चमकदार लाल तांबे में बदला है, वह "अग्नि की आत्मा" है, उनका इसमें कुछ भी नहीं है।

तांबे के गोले को टुकड़ों में तोड़ लिया जाता और फिर प्रत्येक टुकड़े को चकमक के हथौड़े से पीट-पीटकर कुल्हाड़ी के फलों, कुदालों और कटारों में बदला जाता।

इस तरह मनुष्य को अद्भुत भंडारघर में एक कड़ी, चमकदार धातु मिल गई। उसने आग में खनिज धातु का एक टुकड़ा फेंका था और उसने उसे तांबे के रूप में लौटा दिया था।

यह चमत्कार मानव-श्रम द्वारा किया गया था।

रूस के पहले कृषक

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में व० ख्वोइको नामक रूसी पुरातत्त्वविद ने कीएव प्रदेश में त्रिपोल्ये नाम के गाव के पास एक प्रागैतिहासिक कृषक बस्ती के अवशेष खोजे।

बाद में ऐसे कई अन्य गावो के अवशेष रूस के दक्षिण में मिले। सोवियत काल में त० पास्सेक तथा व० बोगायेव्स्की ने इस अध्ययन को जारी रखा। उनके कार्यों ने हमारे लिए इस बात की कल्पना करना संभव बना दिया कि पाच हजार साल पहले किसान किस तरह रहते थे।

प्रागैतिहासिक ग्राम एक ऊचे कठघरे से घिरा हुआ था। उसके बीच में एक बड़ा चौक था। चौक के चारों तरफ ढलुआ छतोंवाले पुताई किये हुए लकड़ी के मकान थे।

हजारों साल पहले का बना एक मकान का छोटा-सा मिट्टी का नमूना मिला है। खिलौना तो यह शायद ही होगा, बहुत संभव है कि यह जादू-टोने के किसी संस्कार में काम आनेवाली चीज रहा हो।

शायद लोगों का खयाल था कि भीतर औरतों की नन्ही-नन्ही मूर्तियोंवाला यह छोटा-सा घर सचमुच के बड़े घर को भूत-प्रेतों और दुर्भाग्य से बचायेगा।

नमूने में प्रवेशद्वार के दाईं ओर एक भट्ठी है और बाईं तरफ एक ऊचा मच है, जिस पर खाने की विभिन्न चीजें रखने के लिए बड़े-बड़े बर्तन हैं। मच के पास

... भट्ठा आज भी ... था। छत कड़ियों पर ... है।
की तरह थी। फर्श मकान के बनाये जाते समय फर्श पर जलाई गई आग से पकी
मिट्टी का बना था। मिट्टी से पुती दीवारों पर डिज़ाइन बने हुए थे।
हर घर में विभाजक दीवारों से अलगाये हुए कई-कई कमरे थे।
लेकिन गांवों में बड़े-बड़े खाईनुमा घर भी थे।
अब गांवों के निवासियों के बीच कुशल कुम्हार, लोहार और कमेरे मौजूद थे।
कुम्हारों ने एक-एक मीटर ऊंचे बर्तन बनाना और उनको रंग-बिरंगे बेलबूटों
में अलंकृत करना सीख लिया था। पुरातात्त्विक खोजों में गुलाबी मिट्टी के बने बर्तन
भी हैं, जिन पर फीतों, कुंडलों और लहरों के कलापूर्ण डिज़ाइन हैं, जो कहीं-
कहीं बड़ी-बड़ी आंखोंवाले किसी आदमी के चेहरे, किसी पशु या सूर्य से मिलते हैं।

अगर हम धरती में परिरक्षित औज़ारों की परीक्षा करें, तो हम चकमक के
औज़ारों से तांबे के औज़ारों तक के परिवर्तन-क्रम को स्पष्ट देख सकते हैं।
सबसे पुराने औज़ार – चाकू, खुरचनियां, भालों तथा तीरों के फल – ये सब
चकमक या हड्डी के बने हुए थे।
कुदालें चकमक की या बारहसिंघे के सींग की बनी हुई थीं। कुदाल को लकड़ी
के हत्थे से लगाने के लिए उसमें छेद कर दिया जाता था।
अनाज गाय की स्कंधास्थि या लकड़ी की बनी दरातियों से काटा जाता था।
लकड़ी की दराती चूंकि मोटे तनों को नहीं काट सकती थी, इसलिए उसमें चकमक
के दांते लगा दिये जाते थे।
इन्हीं गांवों में हम तांबे के सबसे पहले औज़ारों – चौड़े फलवाले कुल्हाड़ों – को
... के लिए काम में लाये जानेवाले सांचे भी पाते हैं।
हम यह तक जानते हैं कि कौनसी धान्य घासें बोई जाती थीं। पुरातत्त्वविदों
... जोमियदचिनो गांव के मकानों की दीवारों पर पुताई करने में प्रयुक्त मिट्टी में
गेहूं, जौ, राई और बाजरे के दाने पाये।
हमारे कृषक आखिर कृषि विज्ञान में पारंगत हो रहे थे। उनके पीछे थोड़ा-
बहुत अनुभव भी था ही – ठीक कहें, तो यही पांच हज़ार साल का।

मानव-उद्योग का पंचांग

हम वर्षों, शताब्दियों और सहस्राब्दियों में समय की गणना करने के आदी हैं।
लेकिन जो लोग प्रागैतिहासिक मानव के जीवन का अध्ययन करते हैं, उन्हें एक दूसरे
ही प्रकार के पंचांग, समय की एक दूसरी ही माप का उपयोग करना पड़ता है।
यह कहने के बजाय कि "इतने हज़ार साल हुए", हम कहते हैं कि "... युग में", "नव पाषाण युग में", "ताम्र युग में", "कांस्य युग में"। यह ... पंचांग नहीं है, बल्कि मानव-उद्योग का पंचांग है। यह हमें ... बता देता है
कि मानव-जाति विकास की किस मंज़िल पर पहुंच गई थी।

पैमाने में समय की छोटी या बड़ी मापें होती हैं – सदी, साल, महीना, दिन, घंटा।

मानव-उद्योग के पैमाने की भी अपनी बड़ी-छोटी मापें हैं। उदाहरण के लिए, हम कह सकते हैं "पाषाण युग, काटने और तोड़नेवाले औजारों का समय", या "पाषाण युग, पॉलिशदार औजारों का समय।"

हमारी कहानी हमें अब मानवजाति के इतिहास में उस काल तक ले आई है, जब पत्थर के औजारों की जगह धातु के औजार आ गये थे, जब कृषि और पशुपालन का पहले-पहल उदय हुआ था। श्रम के इस विभाजन ने वस्तुओं के विनिमय को जन्म दिया। अगर तांबे के कुल्हाड़े एक जगह बनते थे, तो वे धीरे-धीरे अन्य कबीलों को भी पहुंचने लगे।

लोग अपनी डोंगियों में बैठकर नदियों को पार करके अनाज के बदले चमड़े या कपड़े के बदले मिट्टी के बर्तनों की अदला-बदली करने गांव-गांव जाया करते थे। एक कबीले के पास तांबे की बहुतायत हो सकती थी, जबकि दूसरे का नाम अपने हुनरमंद कुम्हारों के लिए मशहूर था। कहीं किसी झील पर लकड़ी की बल्लियों पर बने किसी गांव के निवासी अपने पड़ोसियों से मिलने, जो अदला-बदली के लिए सामान लेकर आये थे। वस्तुओं के विनिमय ने अनुभव का, काम के नये तरीक़ों का भी विनिमय करवाया।

लोगों को इसमें इशारों की बोली का इस्तेमाल करना पड़ता था, क्योंकि हर कबीले की अपनी अलग भाषा थी। फिर भी आगंतुक जब वापस जाते, तो वे अपने साथ केवल दूसरों द्वारा तैयार किया गया सामान ही नहीं, बल्कि उन अपरिचित नये शब्दों को भी ले जाते थे, जो उन्होंने यहां सीखे थे। इस प्रकार कबीलों की बोलियां आपस में घुली-मिलीं। साथ ही हर शब्द के निहित अर्थ को नये शब्द के साथ-साथ ग्रहण कर लिया गया। किसी पड़ोसी कबीले के देवी-देवताओं ने अपने देवी-देवताओं के साथ जगह ले ली। अनेकों विश्वासों में से कुछ ऐसे विश्वास पैदा हो रहे थे, जो भविष्य में पूरे-के-पूरे राष्ट्रों के लिए सामान्य हो जानेवाले थे।

देवी-देवता यात्रा कर रहे थे। नई जगहों पर उन्हें नये नाम दे दिये जाते थे, लेकिन उन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है।

जब हम प्राचीन जातियों के धर्मों का अध्ययन करते हैं, तो बाबिल के ताम्मुज, मिस्र के ओसीरीस और यूनान के अदोनीस में हम एक ही देवता को पाते हैं। यह कृषि का वही प्राचीन देवता है, जो शरद में मर जाया करता था और जो हर वसंत में मृतक विश्व से वापस आ जाता था।

कभी-कभी तो हम किसी देवता विशेष की यात्राओं को नक्शे तक पर दिखा सकते हैं।

मिसाल के तौर पर, अदोनीस यूनान में शाम से उन देशों से आया, जहां शामी नस्ल के लोग रहते थे। उसका नाम इस बात का प्रमाण है, क्योंकि शामियों की भाषा में "अदोनीस" का मतलब "साहब" है। यूनानियों को यह शब्द मालूम नहीं था और उन्होंने इसे नाम के रूप में स्वीकार कर लिया।

इस तरीके से वस्तुओं, शब्दों और धर्मों का विनिमय हो रहा था।

यह कहना गलत होगा कि यह विनिमय सदा ही शातिमय होता था। अगर
"आगतुक" औरो के तैयार हुए तावे, कपडे और अनाज को बलपूर्वक पा सकते थे,
तो वे ऐमा करने मे झिझकते नही थे। इस प्रकार विनिमय, जो अक्सर बेईमानी
भरा होता था, खुली डकैती मे बदल जाता था। आगतुक और मेजबान एक-दूसरे
पर हमला करते थे, और फिर, जिसकी लाठी, उसकी भैस। अजनबी को लूट
लेने या मार डालने मे कुछ भी अनुचित न था।

इमलिए अचरज की क्या बात है कि शीघ्र ही हर गाव एक किले जैसा दीखने
लगा। अनचाहे आगतुको का अप्रत्याशित आगमन रोकने के लिए वह मिट्टी के परकोटे
और कठघरे मे घेर दिया जाता था।

अन्य कबीलो के सदस्यों पर लोगो को बहुत कम भरोसा था। हर कबीला
अपने को "आदमी" कहता था, मगर दूसरे कबीलो के सदस्यो को आदमी नही
मानता था। जबकि अपने को वे "सूर्य की सतान" या "गगन-निवासी" कहते थे,
ारे कबीलों को वे अपमानजनक विद्रूप-नाम दिया करते थे, जो कभी-कभी उनके
य चिपके ही रहते थे और उनके नाम ही बन जाते थे।

जब हम दूसरे कबीलो के प्रति घृणा के बारे मे इतिहासकारो और यात्रा करने-
ो की पुस्तके पढ़ते हैं, तो हमे दूसरी जातियो के प्रति उस घृणा का खयाल आ
ा है, जिसे हमारे जमाने मे जातिवादी जानबूझकर फैला रहे हैं। वे केवल अपने
ी "आदमी" समझते हैं, जबकि उनकी राय मे, अन्य लोग आदमी नही है,
किसी निम्न वर्ग के प्राणी हैं।

ितिहास ने हमे सिखाया है कि ससार मे श्रेष्ठ जाति जैसी कोई चीज नही है।
ातिया ऐसी हैं, जो अधिक उन्नत है और कुछ जातिया ऐसी है, जो सास्कृतिक
पिछडी हुई है। मानव-उद्योग के पचाग के अनुसार सभी समकालिक जातियो
ाामिक आयु समान नही है। महान अक्तूबर समाजवादी क्राति के पहले रूस
जातिया विकास की एक ही मजिल पर नही पहुच गई थी। कुछ जातिया
मे रह रही थी, जबकि अन्य जातिया अभी तक लकडी के हलो से ही खेतो
करती थी और करघो पर कपडा बुनती थी। ऐसी जातिया तक थी,
ान औजार हड्डी से बनाती थी और यह भी नही जानती थी कि लोहा भी
होता है।

ब सोवियत सघ की उन्नत जातिया उन लोगो की सहायता करती है, जो
मे पिछड गई थी। तीन दशको के भीतर मध्य एशिया, साइबेरिया और
नर की जातिया सदियो आगे आ गई है।
नव-उद्योग के पचाग के अनुसार हमारे देश के सभी लोग समाजवादी युग
है और हमारे देश के सभी लोग समान है।

अध्याय १०

दो क़ानून

ऐसा अकसर हुआ है कि समुद्रो को पार करनेवाले अन्वेषको ने नये देशो की ही नही, बल्कि इतिहास मे ऐसे युगो की भी खोज की है, जिन्हे कभी का भुलाया जा चुका था।

जब यूरोपवासियो ने आस्ट्रेलिया की खोज की, तो यह एक महान विजय थी क्योकि उन्होने एक पूरे-के-पूरे महाद्वीप को खोज और जीत लिया था।

लेकिन उनकी खोज आस्ट्रेलियाइयो के लिए एक बडा दुर्भाग्य था। मानव-इतिहास के पचाग के अनुसार वे अभी तक एक और ही युग मे रह रहे थे। वे यूरोपीय परपराओ को नही समझते थे और यूरोपीय तौर-तरीको के आगे झुकना
नही चाहते थे। उनको उनके इस "अपराध" के लिए क्षमा नही किया गया और
गली जानवरो की तरह उन्हे खदेड़ा और उत्पीड़ित किया गया। आस्ट्रेलियाई जबकि
मे ही रह रहे थे, यूरोप के नगरो मे बड़ी-बड़ी इमारते खडी हो रही थी।
लियाई निजी सपत्ति का मतलब भी नही जानते थे, जबकि यूरोप मे अगर
दमी किसी धनी जमीदार के जगल मे एक हिरन को भी मार देता, तो
मे ठूस दिया जाता था।
ट्रेलियाइयो के लिए जो कानून था, वह यूरोपीयो के लिए एक
था।

लियाई शिकारियो को जब भेडो का रेवड मिल जाता, तो वे खुशी
मारते हुए उसे घेर लेते। वे रेवड पर अपने भाले और बूमरैग फेकते
तौर पर यह मौका आने के साथ ही यूरोपीय फार्मस्वामियो की बदूके
थी।

फार्मस्वामी भेडो को अपनी निजी सपत्ति समझता था, जबकि आदिम
शिकारी के लिए यह सौभाग्य से मिला शिकार होता था। "भेड उस
है, जिसने उसे खरीदा है या पाला है", यह यूरोपीयो का कानून
उस शिकारी का है, जिसने उसे पकडा", आस्ट्रेलियाइयो का कानून

के आस्ट्रेलियाई अपने ज़माने के क़ानून का पालन करते थे, इसलिए
स तरह गोली से उड़ा दिया करते थे, मानो वे मनुष्य नही, भेडो
आनेवाले भेडिये है।

ानूनों की तब फिर टक्कर होती, जब आस्ट्रेलियाई औरते आलू
पहुच जाती। क्षण भर की भी झिझक के बिना वे इन सुस्वादु
लग जाती। और इसमे आश्चर्य की क्या बात थी – यहा
योग्य कद थे, और सो भी एक ही जगह! जितने कद
के भीतर चुन सकती थी, उतने वे महीने भर मे भी
।

आकस्मिक सौभाग्य ही उनका दुर्भाग्य था। गोलिया छूटने लगती

और औरतें इस बात को कभी समझ पाये बिना अपने बोझों सहित जमीन पर गिरने लगतीं कि किसने उनकी जान ली है और किसलिए।

अमरीका की खोज के बाद भी इन दोनों दुनियाओं के बीच ठीक ऐसी ही लड़ाई हुई।

पुरानी "नई दुनिया"

अमरीका की खोज करनेवाले यूरोपीयों ने समझा कि उन्होंने एक नई दुनिया ढूंढ़ ली है।

कोलंबस को इस घटना के उपलक्ष्य में एक वंशचिह्न तक प्रदान किया गया था जिस पर लिखा गया था:

> कोलंबस ने नई दुनिया की खोज की
> कस्तीलिय और लिओन के लिए।

लेकिन यह "नई दुनिया" असल में एक पुरानी दुनिया थी। यूरोपीयों ने अमरीका में अनजाने ही खुद अपने अतीत को खोज लिया था, जिसे वे कब का भूल चुके थे।

उनका खयाल था कि अमरीकी आदिवासियों के रीति-रिवाज जंगली और अजीब हैं। आदिवासियों के घरों, पोशाकों और तौर-तरीकों की उनके घरों, पोशाकों और तौर-तरीकों से तनिक भी समानता न थी।

उत्तर के आदिवासी अपनी गदाएं और अपने बाणों के फल चकमक और हड्डी के बनाया करते थे। वे लोहे के बारे में कुछ भी न जानते थे। पर वे कृषि से परिचित थे—वे मक्का, कद्दू, सेम और तंबाकू बोते थे। उनका मुख्य उद्यम शिकार था। वे लकड़ी के घरों में रहते थे और अपने गांवों को ऊंचे-ऊंचे कटहरों से घेर लेते थे।

दक्षिण की तरफ़, मेक्सिको में, आदिवासियों के पास तांबे के औज़ार और सोने के गहने थे, उनके कच्ची ईंटों के बड़े-बड़े मकान थे।

अमरीका के प्रारंभिक उपनिवेशकों और विजेताओं ने अपनी डायरियों में इन सब बातों का बड़े विस्तार के साथ वर्णन किया है।

लेकिन वस्तुओं का वर्णन करना जीवन की प्रणाली का वर्णन करने से आसान है। अमरीका में जीवन की जो प्रणाली थी, वह यूरोपीयों के लिए अजीब थी, वे इसे नहीं समझ सकते थे और उन्होंने इसके जो वर्णन किये हैं, वे बड़े अस्पष्ट और भ्रांतिपूर्ण हैं।

"नई दुनिया" मुद्राहीन, व्यापारीहीन और धनी-निर्धनहीन दुनिया थी। कुछ आदिवासी कबीले थे, जो सोने की चीजें बनाना जानते थे, लेकिन सोने का महत्व वे नहीं जानते थे।

कोलंबस के जहाज़ियों ने जिन पहले आदिवासियों को देखा, उनकी नाक में सोने की सलाइयां और गले में सोने के हार थे। लेकिन उन्होंने इन गहनों को कांच के मनकों और सस्ते सजावटी ज़ेवरों से खुशी-खुशी बदल लिया।

... अजनबी जानते थे कि दुनिया मे सभी लोग मालिको और चाकरो, ज़मीदारों और किसानों मे बटे हुए हैं, लेकिन यहा सभी लोग बराबर थे। जब कोई कबीला किसी दुश्मन को कैद कर लेता, तो वह उसे गुलाम या नौकर नही बनाता था। वह या तो उसे तुरत मार देता था, या उसे गोद ले लेता था।

यहा किसी के पास कोई महल, मकान या जायदाद न थी। लोग सामूहिक आवासो मे रहा करते थे, जिन्हे वे "लबे घर" कहते थे। पूरे-के-पूरे कुल एक साथ रहते थे और इस विशाल परिवार के लिए सभी समान रूप से उत्तरदायी थे। ज़मीन किसी एक आदमी की नही, बल्कि पूरे कबीले की थी। मालिक के लिए उसकी ज़मीन पर काम करनेवाले भूदास नही थे। यहा सभी लोग आज़ाद थे।

सामती युग मे, जिसमे भूदासत्व क़ानूनी था, रहनेवाले यूरोपीयो को चकराने के लिए यही काफी था।

यूरोप मे हर कोई जानता था कि अगर उसने किसी और की चीज़ को ले लिया, तो शहर कोतवाल उसका गरीबान पकडकर उसे जेल घसीटकर ले जायेगा। यहा न कोतवाल था, न निजी सपत्ति और कैदखाने ही थे। इसके बावजूद यहा सभी चीज़ो मे व्यवस्था थी। लोग इस व्यवस्था को कायम रखते थे, यद्यपि यूरोप की अपेक्षा भिन्न तरीके से।

यूरोप मे कानून इस तरह से बने हुए थे कि इनसे यह सुनिश्चित होता था कि ग़रीब कभी अमीर की किसी चीज को न ले, कि नौकर सदा अपने मालिको की आज्ञा माने, कि भूदास ज़िदगी भर अपने ज़मीदारों के लिए काम करते रहे। लेकिन यहा हर आदमी की रक्षा उसका परिवार और उसका कबीला करता था। अगर कोई आदमी मारा जाता, तो पूरा कुल उसका बदला लेता। अगर हत्यारे के सबधी मरे हुए आदमी के सबधियो से क्षमा याचना कर लेते और उनके पास सुलह की सौगाते लेकर आते, तो हत्या का अत शातिमय हो सकता था।

यूरोप मे राजा, महाराजा और राजकुमार थे। मगर यहा न राजा थे, न राज-सिहासन। सरदारो की परिषद सारे कबीले की मौजूदगी मे कबीले के सभी मामले तय करती थी। सरदारो को उनकी योग्यताओ के कारण चुना जाता था और अगर वे काम चलाने के योग्य सिद्ध न होते, तो उन्हे पदच्युत कर दिया जाता था। सरदार कबीले का स्वामी नही होता था। कुछ आदिवासी भाषाओ मे "सरदार" शब्द का अर्थ मात्र "वक्ता" था।

पुरानी दुनिया मे राष्ट्र का प्रमुख राजा और परिवार का प्रमुख पिता होता था। राज्य मनुष्य का सबसे बड़ा और परिवार सबसे छोटा समुदाय था। राजा अपनी प्रजा का न्याय करता और उसे दड देता था। पिता अपने बच्चो का न्याय करता और उन्हे दड देता था। राजा अपने बाद देश अपने बेटे को देता था, पिता अपने बाद अपनी जायदाद अपने पुत्र को दे जाता था।

लेकिन यहा, "नई" दुनिया मे, बाप की अपने बच्चो पर कोई सत्ता न थी।

बच्चे मा के होते थे और उसी के पास रहते थे। "लंबे घर" मे सारी व्यवस्था स्त्रियो के ही हाथ मे होती थी। यूरोपीय परिवारो में बेटे घर पर रहते थे, जबकि बेटिया अपने पतियों के परिवारों के साथ जाकर रहती थी। यहां इसका उलटा होता था – पत्नी अपने पति को अपनी मा के घर लेकर आती थी। और पत्नी ही परिवार की प्रमुख होती थी।

एक अन्वेषक ने लिखा था

"औरतें ही आम तौर पर घर की व्यवस्था करती थी और वे सदा एक-दूसरे का साथ देती थी। वे अपने सामान को साझे मे रखती थी। मगर उस अभागे पति की शामत थी कि जो ज्यादा नही जुटा पाता था। घर मे उसकी चाहे कितनी ही चीजे और बच्चे क्यो न हो, उसे मिनट भर में अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर निकल जाने को कहा जा सकता था। और अगर कही वह इसका विरोध करने की कोशिश करता, तब तो उसकी खैर नही थी। उसका जीना जजाल हो जाता था। अगर कोई मौसी या नानी उसकी हिमायत न करती, तो उसे या तो अपने कुल लौटकर जाना पडता था, या किसी और कुल की औरत से शादी करनी पडती थी। औरतो को तब बडी सत्ता प्राप्त थी। जब वे जरूरी समझती थी, तो (जैसा कि वे खुद कहती थी) किसी सरदार को 'सीग मारकर गिरा देने' मे वे कोई आगा-पीछा न करती थी, और इसका मतलब होता था कि वह अब सरदार नही रहेगा, बल्कि कबीले के हर दूसरे आदमी की तरह एक सामान्य योद्धा बन जायेगा। इसी तरह से, नये सरदार का चुनाव सदा औरतो पर ही निर्भर करता था।"

पुरानी दुनिया मे औरत अपने पति की सेविका होती थी। लेकिन आदिवासी कबीलों मे औरत परिवार की प्रमुख होती थी। कभी-कभी तो वह कबीले तक की प्रमुख होती थी। जॉन टैनर नामक अमरीकी के बारे मे कवि पुश्किन का एक लेख है, जिसे आदिवासियों ने पकड लिया था और नेट-नौ-क्वा नामक आदिवासी स्त्री (पत्नी) ने जिसे गोद मे लिया था। यह एक सच्ची कहानी है। नेट-नौ-क्वा [illegible] कुछ कबीले की सरदार थी, और उसकी जगी डोंगी पर सदा एक पताका फहराती रहती थी। जब वह अंग्रेजों के किले पर पहुचती थी, तो उसे हमेशा तोपों की सलामी दी जाती थी। केवल आदिवासी ही नही, बल्कि गोरे लोग भी इस स्त्री का सम्मान करते थे।

अचरज की बात नही कि इन परिवारों मे वंशक्रम पिता से नही, माता से निर्धारित की जाती थी। यूरोप मे बच्चों के नाम मे उनके पिता का अंतिम नाम जुड़ा होता था, लेकिन यहा वे अपनी मा का नाम लेते थे। अगर पिता 'हिरन' कबीले का होता और मा 'रीछ' कबीले की, तो बच्चे 'रीछ' कबीले के ही होते थे। हर कुल मे औरतें और उनके बच्चे, उनकी बेटियों के बच्चे और उनकी पोतियों और नातिनों के बच्चे होते थे।

यूरोपियनों के लिए यह सब बड़ा चकरानेवाला था। वे कहते थे कि आदिवासी [illegible] जंगली है और वे कुछ असभ्य है।

मगर सच यह है कि वे इस बात को पूरी तरह खूब समझते थे कि मनुष्यों और [illegible]

मे, पहली डोंगियों और कुदालों के जमाने मे उनके अपने पूर्वजों के भी यही रिवाज थे।

अमरीका के बारे मे अपने लेखों मे पहले उपनिवेशकों और विजेताओं ने आदिवासी कबीलों के सरदारों को कुलीन लोग यानी जमींदार बताया है। उनका खयाल था कि "सरदार" की उपाधि खिताब है और टॉटेम (गणचिह्न) कोई राज्यचिह्न है। उनके कथनानुसार सरदारों की परिषद विधानमडल है और मुख्य सरदार राजा है। यह बात इतनी ही गलत है, जैसे कि आज फौज के सेनापति को राजा कहना।

सदियां बीत गईं, मगर अमरीका के गोरे अधिवासी देसी आबादी के रीति-रिवाजों को अब भी नहीं समझे।

यह गलतफहमी तब तक चली जब तक लेविस एच० मोर्गन नामक ए
ने अपनी पुस्तक 'प्राचीन समाज' मे अमरीका की एक बार
नहीं की। इसमें उन्होंने सिद्ध किया कि इरोकुओ तथा अज़टेक
की जीवन-प्रणाली विकास की वह मंजिल है, जिसे यूरोपीय कभी
चुके हैं।

लेकिन मोर्गन की किताब १८७७ मे आई, जबकि हम अमरीक
विजेताओं की बात कर रहे है।

गोरे आदमी आदिवासियों को नहीं समझते थे। और, इसी तरह,
गोरों को नहीं समझते थे। वे इस बात को नहीं समझ सकते थे कि मुट्ठी
के पीछे एक गोरा दूसरे का गला घोंटने को क्यों तैयार रहता है। वे इ
नहीं समझ सकते थे कि गोरे लोग अमरीका क्यों आये हैं और "किस
प्रदेश को जीतना" क्या मतलब रखता है।

प्रागैतिहासिक लोगों का विश्वास था कि जमीन सारे कबीले की हो
रक्षक आत्माएं उसकी रक्षा करती है। किसी और की जमीन को लेने
दूसरे कबीले के देवताओं के कोप को जगाना था।

आदिवासी एक-दूसरे से युद्ध भी करते थे। लेकिन जब एक कबीला
हरा देता था, तो वह हारे हुए कबीले के लोगों को गुलाम नहीं बना
वह उन्हें अपने तरीकों और रीति-रिवाजों पर चलने के लिए मजबूर
था या उनके सरदारों को पदच्युत नहीं कर देता था। वह उससे सिर्फ खि
करने लगता था। सरदार को उसका अपना कुल या कबीला ही पदच्युत
था।

दो दुनियाएं, दो सामाजिक व्यवस्थाएं टकराईं। अमरीका की विजय क
दो दुनियाओं के संघर्ष का इतिहास है।

स्पेनियों का मेक्सिको पर कब्ज़ा करना एक अच्छे उदाहरण का काम

है।

यह एक भयानक ग़लती थी। सोना गोरों को लालच के मारे पागल ही बना सकता था। मगर अज़्टेक यह नहीं जानते थे, क्योंकि आदिवासी और गोरे अलग-अलग युगों के लोग थे।

मोंटेज़ूमा ने गाड़ियों के पहियों के बराबर सोने की तश्तरियों, सोने के ज़ेवरों और मनुष्यों और जानवरों की सोने की मूर्तियों के साथ अपने दूत रवाना किये।

इन मूल्यवान चीज़ों को अगर वे ज़मीन में गाड़ देते, तो यह ज़्यादा होशियारी की बात होती!

जब कोर्तेज़ और उसके आदमियों ने इस सोने को देखा, तो अज़्टेकों की क़िस्मत का फ़ैसला हो गया।

दूतों ने व्यर्थ ही कोर्तेज़ से समुद्र के पार लौट जाने की ख़ुशामद की, व्यर्थ ही उन्होंने अनचाहे आगन्तुकों को उन मुश्किलों और ख़तरों का डर दिखाया, जो देश के भीतर जाने पर उनके सामने आते।

पहले स्पेनियों ने मेक्सिको के सोने के बारे किस्से ही सुने थे, मगर अब वे उसे अपनी आंखों से देख रहे थे। और उनकी आंखें लालच से जलने लगीं, क्योंकि किस्से सच्चे थे।

दूतों की बातें उन्हें पागलपन भरी लगीं। उनका लक्ष्य जब इतने पास है, तो वे समुद्र पार क्यों लौटें!

वे इसे पागलपन ही समझते, क्योंकि उन्होंने लंबी समुद्र यात्रा में कितनी-कितनी तकलीफ़ें भेली थीं! पत्थर जैसे बड़े बिस्कुट खाना, भीड़ भरे केबिनों में सख़्ती के सख़्त तख़्तों पर सोना, तारकोल-सने जहाज़ के वस्त्र पहनकर कमरतोड़ काम करना, तूफ़ानों और पानी के नीचे डूबी चट्टानों से टक्कर लेना, आदि-आदि – यह सब उन्होंने भविष्य में मिलनेवाली दौलत के लिए ही सहा था।

कोर्तेज़ ने अपने आदमियों को डेरा उखाड़ने और कूच करने का आदेश दिया। उन्होंने अपने हथियारों और सामान को अपने गुलामों की पीठों पर लादा। लद्दू जानवरों में परिणत ये आदमी दम लेने को हांफते और कराहते हुए सड़क पर लड़-खड़ाते चल पड़े। लेकिन वे विरोध कैसे कर सकते थे? जो पीछे रह जाते थे, उन्हें गोरों की तलवारें आगे भगातीं और जो विरोध करते, उनके सिर उड़ा दिये जाते।

एक अज़्टेक चित्र मिला है, जिसमें इस पहले अभियान को चित्रित किया गया है। हमें सड़क पर लंगोटिया पहने तीन आदमी जाते हुए दिखाई देते हैं। एक आदमी पीठ पर एक तोपगाड़ी के पहिये को लिए जा रहा है, दूसरा एक साथ बंधी कई बन्दूक़ों को, और तीसरा सामान के एक बक्से को। एक स्पेनी अफ़सर ने एक आदि-वासी के सिर के ऊपर अपना डंडा उठा रखा है। उसने आदिवासी के बाल पकड़ रखे हैं और उसके पेट में लात मार रहा है। पास ही एक चट्टान है, जिस पर सलीब पर टंगे ईसा मसीह का चित्र बना है।

विजेता लोग अपने को "अच्छे ईसाई" समझते थे और विजित प्रदेशों में सलीब के साथ जाते थे।

पूरे चित्र पर आदिवासियों के कटे हुए सिर और हाथ बिखरे हुए हैं।

इस तरह आजाद आदिवासियों को मनुष्य द्वारा मनुष्य के गुलाम बनाये जाने के मतलब का पहले-पहल पता चला।

स्पेनी लोग धीरे-धीरे, मगर निश्चित रूप से बढ़ते चले गये। और फिर, एक ऊंचे पहाड़ी दर्रे से उन्होंने एक झील और उसके बीच एक शहर को देखा।

अज़्टेकों ने चूंकि कोई मुकाबला नहीं किया, इसलिए "मेहमान लोगों" ने शहर में प्रवेश कर लिया। उन्होंने पहला काम यह किया कि अपने मेजबान, शूर सरदार मोंटेजूमा को गिरफ्तार कर लिया।

कोर्तेज की आज्ञा से मोंटेजूमा को बेड़ियों में जकड़ दिया गया। कोर्तेज ने अपने कैदी से कहा कि वह स्पेन के बादशाह के प्रति निष्ठा की शपथ ले। कैदी ने आज्ञा-कारितासे उन सभी शब्दों को दुहरा दिया, जिन्हें दुहराने के लिए उससे कहा गया। उसे नहीं मालूम था कि बादशाह क्या होता है या शपथ का क्या मतलब होता है।

कोर्तेज ने सोचा कि वह जीत गया है। उसका खयाल था कि उसने मेक्सिको के बादशाह को कैद कर लिया है। और क्योंकि कैदी बादशाह ने अपना राज स्पेन के बादशाह को दे दिया है, इसलिए सभी कुछ ठीक है। यह कोर्तेज का खयाल था। मगर यह बहुत बड़ी गलतफहमी थी। वह मेक्सिको के तौर-तरीकों से उतना ही अपरिचित था, जितना मोंटेजूमा स्पेनी तौर-तरीकों से। उसका खयाल था कि मोंटे-जूमा एक बादशाह है, जबकि असल में वह मात्र एक सरदार था, जिसे अपने देश के भविष्य का निश्चय करने का कोई अधिकार न था।

कोर्तेज ने अपनी जीत का जश्न जरा जल्दी ही मना लिया।

फिर अज़्टेकों ने एक ऐसी बात की, जिसकी कभी अपेक्षा नहीं की जा सकती थी – उन्होंने एक नया सरदार चुन लिया – मोंटेजूमा के भाई को।

नये सरदार ने अपने योद्धाओं का नेतृत्व करते हुए उस बड़े मकान पर हमला किया, जिसमें स्पेनी लोग ठहरे हुए थे।

स्पेनी लोगों ने तोपों और बंदूकों से लड़ाई की।

अज़्टेक लोग पत्थरों और तीर-कमानों से लड़े।

तोप के गोले और बंदूक की गोलियां तीर या पत्थर से ज्यादा शक्तिशाली होती हैं। लेकिन अज़्टेक लोग अपनी आजादी के लिए लड़ रहे थे और कोई चीज उन्हें नहीं रोक सकती थी। जहां दस मरते, वहां उनकी जगह सौ आ जाते। भाई भाई का, चाचा भतीजे का बदला ले रहा था। मौत का किसी को भी भय न था। अज़्टेक के लिए उसके जीवन का तब कोई मोल नहीं होता था, जब उसके कुल या कबीले पर जरा भी खतरा होता था।

जब कोर्तेज ने देखा कि मामला बस के बाहर होता जा रहा है, तो अज़्टेकों के साथ बातचीत करने का निश्चय किया। उसने सोचा कि मोंटेजूमा ही सबसे अच्छा बिचौलिया रहेगा, क्योंकि वह मेक्सिको का बादशाह है। वह चाहता था कि मोंटेजूमा अपनी प्रजा को हथियार डाल देने की आज्ञा दे दे।

स्पेनियों ने उसकी बेड़ियां खोल दीं। उसे एक घर की सपाट छत पर ले जाया

ाया, मगर लोग उसके साथ एक गद्दार और कायर की तरह पेश आये। उस पर त्थरों और तीरों की बौछार की गई। सभी तरफ से एक ही आवाज़ उठी

"चुप रह गद्दार! तू योद्धा नहीं है! तू तो औरत है! औरतों की तरह कताई और बुनाई कर! इन कुत्तों ने तुझे कैदी बना रखा है! तू डरपोक है!"

और साघातिक रूप से घायल मोंटेजूमा गिर पड़ा।

कोर्तेज बड़ी मुश्किल से हमलावरों की कतारों से निकल पाया। उसके आधे आदमी मारे गये। उसकी खुशकिस्मती से अज़्टेकों ने उसका पीछा नहीं किया, वरना वह वहां से ज़िंदा न निकल पाता।

लेकिन जब अज़्टेकों ने उसे ज़िंदा निकल भागने दिया, तो उन्होंने फिर एक बड़ी गलती की। कोर्तेज ने एक फौज और जुटाई और टेनोहटिटलान पर घेरा डालने के लिए लौट आया।

अज़्टेकों ने स्पेनियों से महीनों अपने नगर की रक्षा करते हुए डटकर लड़ाई की। लेकिन उनके तीर-कमान तोपों के आगे क्या करते? टेनोहटिटलान को आखिर छीन लिया गया और लूटमार के बाद धूल में मिला दिया गया।

लौह-युग के लोगों ने ताम्र-युग के लोगों को जीत लिया। प्राचीन सामुदायिक व्यवस्था को नई व्यवस्था के आगे से हटना पड़ा।

ादुई जूते

उन्नीसवीं सदी में लिखी एक कहानी है–एक आदमी को मामूली जूतों के बजाय एक जोड़ा जादुई जूते बेच दिये गये, जिनका एक-एक कदम दस-दस कोस का पड़ता था। इस कहानी का नायक जरा खब्तुलहवास आदमी था और इसलिए इस विचित्र घटना की तरफ फौरन उसका ध्यान ही नहीं गया। मेले से घर लौटते समय वह गहरे विचार में डूबा हुआ था कि अचानक उसे बहुत ठंड लगी। उसने आस-पास देखा और पाया कि वह बर्फ से घिरा हुआ था और हलके लाल रंग का सूरज क्षितिज के कुछ ऊपर टंगा हुआ था। हुआ यह था कि उसके ादुई जूते उसे आर्कटिक प्रदेश में से गये थे और इसका उसे पता भी हीं चला था।

कोई और आदमी होता, तो वह इस अद्भुत उपलब्धि का अधिक-से-अधिक ाभ उठाता। लेकिन कहानी के नौजवान को पैसा बनाने में तनिक भी दिलचस्पी हीं थी। उसकी सबसे अधिक रुचि विज्ञान में थी। और इसलिए उसने निश्चय िया कि अपने इस सौभाग्य का उपयोग वह दुनिया को अधिक-से-अधिक देखने और ानने में करेगा। अपने जादुई जूते पहने-पहने वह उत्तर से दक्षिण और दक्षिण से त्तर सारी दुनिया में भागता रहता। सर्दियों में वह साइबेरियाई तैगा की ठंड से फ्रीकी रेगिस्तान की गरमी में पहुंच जाता और रात में वह पूर्वी गोलार्ध से पश्चिमी ोलार्ध चला जाता।

अपना जीर्ण-शीर्ण काला कोट पहने और अपने संग्रहों के थैले को अपने कंधे र लटकाये, वह टापू से टापू लांघता हुआ आस्ट्रेलिया से एशिया, एशिया से अमरीका ला जाता था।

एक पहाड़ की चोटी से दूसरी पर आहिस्ता से कदम धरते हुए, आग उगलते ज्वालामुखियों और बर्फ से ढके पहाड़ों के ऊपर से गुजरते हुए वह खनिजों और ौधों को इकट्ठा करता जाता, प्राचीन मंदिरों और गुफाओं की जांच करता और ृथ्वी और सभी सजीव वस्तुओं का अध्ययन करता जाता।

इतिहासकार को भी जादुई जूतों की ही जरूरत है। इस पुस्तक के पृष्ठों पर हम एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप और एक युग से दूसरे युग में गये हैं।

कभी-कभी हम तेजी से गुजरते अवकाशों और काल की सतत उड़ान से चकराने भी लगे। लेकिन हम बिना ठहरे चलते ही चले गये। मामूली जूते पहने आदमियों की तरह हम रास्ते में ठहरते हुए सामान्य ब्यौरों का अध्ययन नहीं कर सकते थे।

हमारे सदियों को फांदते समय शायद कुछ चीजें अनदेखी रह गई हों। लेकिन अगर हमने अपने जादुई जूते मिनट भर के लिए भी उतार दिये होते और सामान्य गति से चलने लगते, तो हम कभी ब्यौरों के विस्तार के पार न देख पाते। अगर तुम जंगल में हर पेड़ का बारीकी से अध्ययन करने लगो, तो तुम पाओगे कि पेड़ों के कारण तुम जंगल को भी नहीं देख सकते।

अपने जादुई जूतों में हम एक युग से दूसरे युग में ही नहीं, बल्कि एक विज्ञान से दूसरे विज्ञान में भी चले गये।

हम पौधों और प्राणियों के विज्ञान से भाषा के विज्ञान में, भाषा के विज्ञान से औज़ारों के इतिहास में, औज़ारों के इतिहास से विश्वासों के इतिहास में और धर्मों के इतिहास से पृथ्वी के इतिहास में चले गये।

यह कोई आसान काम न था, मगर रास्ता भी और कोई नहीं था। मनुष्य ने विज्ञानों को इसलिए पैदा किया है कि वे उसके काम आयें, और जब हम पृथ्वी पर मनुष्य के जीवन की, समाज में उसके स्थान की बात करते हैं, तब सभी विज्ञान आवश्यक हो जाते हैं।

हम अभी-अभी स्पेनी विजय के समय अमरीका गये हुए थे।

अब हमें ६०००–२००० ई० पू० के यूरोप में वापस आ जाना चाहिए। हम उसी तरह के कुल पायेंगे, जैसे इरोक़ुओ कबीलेवालों और अज़्टेकों के थे।

स्त्रियों का यहां आदर किया जाता था, क्योंकि वे घरों की निर्मात्री और कुलों की जन्मदात्री थीं। स्त्रियां सर्दियों के लिए खाद्यभंडार का प्रबंध करती थीं, ज़मीन की जुताई करती थीं, फ़सल को बोती और काटती थीं।

स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा कहीं अधिक काम करती थीं, मगर उनका सम्मान भी अधिक किया जाता था। यही कारण है कि हर गांव और हर घर में ही घर भी अधिक किया जाता था। यही कारण है कि हर गांव और हर घर में ही प्रतीक चकमक की नक़्क़ाशी हुई स्त्री की एक मूर्ति हुआ करती थी, जो कुल-माता का प्रतीक थी। उसकी आत्मा घर की रक्षा करती थी। लोग भरपूर फ़सल के लिए और शत्रुओं से रक्षा के लिए उसकी प्रार्थना किया करते थे।

सदियों बाद घर की यह रक्षाकारिणी माता यूनान के एथेंस नगर में प्रकट हुई। वहां वह भाले से लैस, नगर की संरक्षिका यूनानी देवी एथेना बन गई। उसने नाम को धारण करनेवाली नगरी एथेंस का संरक्षण करनेवाली देवी की अब बस कोई छोटी-सी मूर्ति नहीं, एक विशाल प्रतिमा थी।

पुरानी इमारत में पहली दरारें

हमारी भाषाओं में हमारी भूतपूर्व सामुदायिक जीवन-प्रणाली के अवशेष अभी तक वर्तमान हैं, यद्यपि स्वयं इस प्रणाली का हमारी स्मृतियों में कुछ भी बाक़ी नहीं है।

जब बच्चे अपरिचितों को अब "चाचा" या "चाची" अथवा बूढ़े व्यक्तियों को अब "नाना" या "नानी" कहते हैं, तो यह उस समाज का अवशेष है जिसमें कुल के सभी सदस्य सम्बंधित होते थे।

और हम कुछ व्यक्तियों को संबोधित करते हुए अक्सर "भाई" और [illegible] बच्चे को "बेटा" कहते हैं, जो हमारा बेटा कतई नहीं होता।

हमारी भाषाओं में भी [illegible] अतीत के ये अवशेष [illegible] हैं। [illegible]
[illegible] के कारण [illegible] हैं। [illegible]
[illegible]
[illegible]

थे, वे "भाजे और भाजिया" होते थे, जबकि भाई के बच्चे सबधी नहीं होते थे, क्योंकि वे दूसरे कुल के होते थे।

गार नामक प्राचीन राज्य मे राजा का उत्तराधिकारी उसका अपना पुत्र नहीं, बहन का पुत्र होता था।

अभी हाल – पिछली शताब्दी – तक अफ्रीका मे एक अशान्ती जाति थी, जिसके राजा को "नाने" कहा जाता था, जिसका मतलब है "माओ की मा"।

मध्य एशिया मे समरकद मे बादशाह को "आफशीन" कहते थे, जिसका प्राचीनकाल मे मतलब होता था "घर की मालकिन"।

इस बात के हम कई और उदाहरण प्रस्तुत कर सकते थे कि लोगो के दिमागो ने प्राचीन मातृसत्तात्मक समाज की, जिसमे मा ही घर की मालकिन और शासिका होती थी, स्मृति को किस तरह कायम रखा है।

इसका मतलब यही हो सकता है कि अगर लोग इसे इतने लबे समय तक याद रखते है, तो कुल बहुत शक्तिशाली होना चाहिए था। लेकिन उसे नष्ट किसने किया?

अमरीका मे यह जीवन-प्रणाली यूरोपीय विजेताओ के आगमन के साथ नष्ट हुई। और यूरोप मे अमरीका के खोजे जाने के हजारो वर्ष पहले यह उसी प्रकार ढह गई जिस प्रकार दीमकों का खाया मकान ढह जाता है।

इसकी शुरुआत तब हुई, जब पुरुषो ने कुल के अधिकाधिक आर्थिक मामलो को अपने हाथ मे लेना शुरू कर दिया।

बिल्कुल प्रारभ मे ही धरती को जोतने का काम स्त्रिया करती थी, जबकि पुरुष पशुओ के झुडो की देखभाल करते थे। जब तक झुड बहुत छोटे ही थे, धरती की काश्त करनेवालियो – स्त्रियो – का काम सबसे महत्वपूर्ण था। गोश्त बहुत कम होता था और काम चलाने लायक काफी दूध कभी नहीं होता था। औरतो द्वारा इकट्ठा किये और उपजाये अनाज के बिना खाने को कुछ न होता। कभी-कभी तो पूरा भोजन मुट्ठी भर सूखा अनाज या जौ की बनी एक चपाती का ही होता था। इसमे स्त्रियो द्वारा ही इकट्ठा किये जगली शहद या बेरियो को शामिल कर लिया जाता था। औरते घर को चलाती थी और इसलिए वे ही उस पर शासन भी करती थी।

लेकिन हमेशा यही नहीं होता था। स्तेपी मे धान्य घासे उगाना बहुत कठिन था। मैदानो की स्थायी जगली घासे अनाजो के लिए जगह छोड़ना न चाहती थी, वे अपनी मजबूत जड़ो को धरती मे गहरा घुसा देती। और जब कुदाल धरती को खोदती, तो उसे नरम मिट्टी नहीं, बल्कि ठोस सघन भूमि, अछूती भूमि मिलती, जिसे खोदना बहुत मुश्किल था।

और इसलिए बीज-बीज बार-बार औरते मिलकर कुदाल चलाती। लेकिन इस पर भी वे कम मात्रा की ही फसल पाती थी।

इसी हालत मे न बोये गये बीजो को सूरज सुखा देता और पक्षी चुग लेते। बच ही रहे, उनसे अकुर उग पाते। फिर खेत मे सूखा अपना ही काम करता –

अपने जादुई जूतों मे हम एक युग मे दूसरे युग मे ही नही, बल्कि एक विज्ञान मे दूसरे विज्ञान मे भी चले गये।

हम पौधो और प्राणियो के विज्ञान से भाषा के विज्ञान मे, भाषा के विज्ञान से औजारो के इतिहास मे, औजारो के इतिहास मे विश्वासो के इतिहास मे और धर्मों के इतिहास मे पृथ्वी के इतिहास मे चले गये।

यह कोई आसान काम न था, मगर रास्ता भी और कोई नही था। मनुष्य ने विज्ञानो को इसलिए पैदा किया है कि वे उसके काम आये, और जब हम पृथ्वी पर मनुष्य के जीवन की, ससार मे उसके स्थान की बात करते है, तब सभी विज्ञान आवश्यक हो जाते है।

हम अभी-अभी स्पेनी विजय के समय अमरीका गये हुए थे।

अब हमे ४०००–३००० ई० पू० के यूरोप मे वापस आ जाना चाहिए। हम उसी तरह के कुल पायेंगे, जैसे इरोक्वुओ कबीलेवालो और अज्टेको के थे।

स्त्रियो का यहा आदर किया जाता था, क्योंकि वे घरो की निर्मात्री और कुलो की जन्मदात्री थी। स्त्रिया सर्दियों के लिए खाद्यभंडार का प्रबंध करती थी, जमीन की जुताई करती थी, फसल को बोती और काटती थी।

स्त्रिया पुरुषो की अपेक्षा कही अधिक काम करती थी, मगर उनका सम्मान भी अधिक किया जाता था। यही कारण है कि हर गाव और हर घर मे हड्डी या चकमक की तराशी हुई स्त्री की एक मूर्ति हुआ करती थी, जो कुल-माता का प्रतीक थी। उसकी आत्मा घर की रक्षा करती थी। लोग भरपूर फसल के लिए और शत्रुओ से रक्षा के लिए उसकी प्रार्थना किया करते थे।

सदियो बाद घर की यह रक्षाकारिणी माता यूनान के एथेंस नगर मे प्रकट हुई। वहा वह भाले से लैस, नगर की सरक्षिका यूनानी देवी एथेना बन गई। उसके नाम को धारण करनेवाली नगरी एथेंस का सरक्षण करनेवाली देवी की अब वहा कोई छोटी-सी मूर्ति नही, एक विशाल प्रतिमा थी।

पुरानी इमारत में पहली दरारें

हमारी भाषाओ मे हमारी भूतपूर्व सामुदायिक जीवन-प्रणाली के अवशेष अभी तक वर्तमान है, यद्यपि स्वयं इस प्रणाली का हमारी स्मृतियो मे कुछ भी बाकी नही है।

रूसी बच्चे अपरिचितो को जब "चाचा" या "चाची" अथवा बुजुर्ग अजनबियों को जब "नाना" या "नानी" कहते हैं, तो यह उस समाज का अवशेष है, जिसमें कुल के सभी सदस्य सबधित होते थे।

और हम कुछ आदमियो को सबोधित करते हुए अक्सर "भाइयो" और ऐसे बच्चे को "बेटा" कहते है, जो हमारा बेटा कतई नही होता।

दूसरी भाषाओ मे भी प्राचीन अतीत के ये अवशेष कायम है। जर्मन भाषा मे "मेरे भांजे-भांजिया" के बजाय "मेरी बहन के बच्चे" कहा जाता है। इसका कारण यह है कि कभी के विस्मृत उस काल मे बहन के बच्चे कुल मे ही रहते थे, जबकि भाई के बच्चे उसकी पत्नी के कुल के होते थे। बहन के बच्चे रिश्तेदार होते

थे, वे "भाजे और भाजिया" होते थे, जबकि भाई के बच्चे सबधी नही होते थे, क्योंकि वे दूसरे कुल के होते थे।

शाक नामक प्राचीन राज्य मे राजा का उत्तराधिकारी उसका अपना पुत्र नही, बहन का पुत्र होता था।

अभी हाल – पिछली शताब्दी – तक अफ्रीका मे एक अशाती जाति थी, जिसके राजा को "नाने" कहा जाता था, जिसका मतलब है "माओं की मा"।

मध्य एशिया मे समरकद मे बादशाह को "आफशीन" कहते थे, जिसका प्राचीनकाल मे मतलब होता था "घर की मालकिन"।

इस बात के हम कई और उदाहरण प्रस्तुत कर सकते थे कि लोगो के दिमागो ने प्राचीन मातृसत्तात्मक समाज की, जिसमे मा ही घर की मालकिन और शासिका होती थी, स्मृति को किस तरह कायम रखा है।

इसका मतलब यही हो सकता है कि अगर लोग इसे इतने लबे समय तक याद रखते है, तो कुल बहुत शक्तिशाली होना चाहिए था। लेकिन उसे नष्ट किसने किया?

अमरीका मे यह जीवन-प्रणाली यूरोपीय विजेताओ के आगमन के साथ नष्ट हुई। और यूरोप मे अमरीका के खोजे जाने के हजारो वर्ष पहले यह उसी प्रकार स्वय ढह गई जिस प्रकार दीमको का खाया मकान ढह जाता है।

इसकी शुरूआत तब हुई, जब पुरुषों ने कुल के अधिकाधिक आर्थिक मामलो को अपने हाथ मे लेना शुरू कर दिया।

बिलकुल प्रारभ मे ही धरती को जोतने का काम स्त्रिया करती थी, जबकि पुरुष पशुओ के झुडो की देखभाल करते थे। जब तक झुड बहुत छोटे ही थे, धरती को काश्त करनेवालियो – स्त्रियों – का काम सबसे महत्वपूर्ण था। गोश्त बहुत कम होता था और काम चलाने लायक काफी दूध कभी नही होता था। औरतो द्वारा इकट्ठा किये और उपजाये अनाज के बिना खाने को कुछ न होता। कभी-कभी तो सारा भोजन मुट्ठी भर सूखा अनाज या जौ की बनी एक चपाती का ही होता था। इसमे स्त्रियो द्वारा ही इकट्ठा किये जगली शहद या बेरियो को शामिल कर लिया जाता था। औरते घर को चलाती थी और इसलिए वे ही उस पर शासन भी करती थी।

लेकिन हमेशा यही नही होता था। स्तेपी मे धान्य घासे उगाना बहुत कठिन था। मैदानो की रसीली जगली घासे अनाजो के लिए जगह छोडना न चाहती थी, अपनी मजबूत जडो को धरती मे गहरा घुसा देती। और जब कुदाल धरती को खोदती, तो उसे नरम मिट्टी नही, बल्कि ठोस सतृण भूमि, अछूती भूमि मिलती, जिसे खोदना बहुत मुश्किल था।

और इसलिए तीन-तीन चार-चार औरते मिलकर कुदाल चलाती। लेकिन इस पर भी वे बस सतह को ही खुरच पाती थी।

गहरी जमीन मे न बोये गये बीजो को सूरज सुखा देता और पक्षी चुग लेते। बहुत कम ही हरे, नये अकुर उग पाते। फिर खेत मे सूखा अपना ही वरण करता –

यह सुकुमार धान्य पौधों को जला देता और बलवान, सहिष्णु घासपात को ज़िंदा रहने देता।

जब कटाई का समय आता, तो स्त्रियां देखतीं कि काटने को कुछ भी नहीं है। ऊंचे घासपात में अनाज की बालियां उन्हें मुश्किल से ही मिल पातीं। स्तेपी की घासें हवा में उस शत्रु-सेना की पताकाओं की तरह झूमतीं, जो परास्त होने के बाद फिर लौटकर विजयी हुई हो।

अनाज की जगह घासपात! क्या इतनी परेशानी और कमरतोड़ काम किसी मतलब का था?

लेकिन आदमियों के लिए जो घास है, वही ढोरों के लिए दाना है। गायें और भेड़ें मैदान में चैन से रहती थीं। हर कदम पर उनके लिए भरपेट खाना तैयार था।

हर वर्ष के बीतने के साथ झुंड बड़े होते जाते थे। कुल के पुरुष अपनी पेटियों में कटार खोंसे उनके पीछे-पीछे लगे रहते थे। चरवाहे का सबसे अच्छा दोस्त, उसका कुत्ता, झुंडों को इकट्ठा करने और उनका बिखरना रोकने में उसकी सहायता करता था। झुंड और भी तेज़ी से बढ़ते गये और हर साल लोगों को ज्यादा दूध, मांस और ऊन प्रदान करते रहे।

घर में अनाज काफ़ी न होता, मगर भेड़ के दूध से बने पनीर की भरमार होती और घर की पतीलियों में मेमने का शोरबा खुदबुदाता रहता।

स्तेपी मे पुरुष का काम, चरवाहे का काम ज्यादा महत्त्वपूर्ण होने लगा।

जल्दी ही उत्तरी वनो मे भी पुरुष कुल के प्रमुख के रूप में अपना स्थान लेने लगा।

स्वीडन मे एक हलवाहे का प्राचीन चट्टान-चित्र मिला है। यह गवाह हमे बताता है कि हलवाहा एक हल के पीछे जा रहा है और हल को बैलों की जोड़ी खींच रही है।

मानव-जाति के इतिहास मे यह सभवत. पहला हल है। यह अभी तक बहुत कुछ कुदाल जैसा ही है। अकेला अतर यह है कि इसमे एक लबी बल्ली लगी हुई है और इसे आदमी नही, बैल खीच रहे हैं।

तो मनुष्य ने अपने पहले "इंजन" की खोज कर ली! हल में जुता बैल निस्सदेह एक ज़िदा इजन है—हमारे फौलाद के ट्रैक्टर का ज़िदा पूर्वज। जब आदमी ने बैल की गर्दन पर जुआ रखा, तो उसने अपना बोझ जानवर पर डाल दिया। इस तरह जिन ढोरो ने पहले उसे सिर्फ मास, दूध और चमडा दिया था, उन्होंने अब उसे अपनी शक्ति भी दे दी।

अपनी गर्दनो पर लकडी के जुए लिये मंदगति किंतु शक्तिशाली बैल पहले हलो को खीचने लगे। ये हल मिट्टी में कुदालों की अपेक्षा ज्यादा गहराई तक जाते थे। और उनके पीछे-पीछे खुदकर निकली मिट्टी एक काले फीते जैसी दिखाई देती थी।

पहले हलवाहे ने अपनी सारी शक्ति हल के हत्थे पर लगा दी थी।

अब बैल ने उसका बोझ ले लिया। वह जुताई करता था और दाने को अनाज

करता था और उसके अनाज को ढोता था। शरद मे बैलो को खलिहान पर ले :
जाता और वे अनाज को अपने खुरों से अलग कर देते। इसके बाद उन्हे बेप
गाड़ी मे जोत दिया जाता और वे अनाज के बोरो को खेतो से खीर
घर ले आते।

पशु-पालन कृषि की अनुपूर्ति करता था। चरवाहा हलवाहा भी हो गया।
इससे उसे घर मे और ज्यादा शक्ति प्राप्त हो गई।

ठीक है, काम मे औरतो का भी पूरा हिस्सा था। वे कताई और बुनाई क
थी, फसल काटती थी और बच्चो को पालती-पोसती थी।

लेकिन वे अपनी पुरानी शक्ति और सम्मानित स्थान को गवा चुकी थी। चराग
मे और घर मे पुरुषो की ही चलती थी।

अब औरते पुरुषो पर किसी चीज से नाराज हो जाने पर इतना नही चीख
चिल्लाती थी, जितना कि वे पहले करती थी। और अब आदमी जवाब देने ह
थे–और केवल सफाई देने के लिए ही नही। पहले सासो, मौसिया सासो अं
ननिया सासो के लिए किसी आदमी को घर से निकाल बाहर करना बहुत आसा
था। अब वे उसकी परवाह करने लगी, क्योकि दूसरे कुल का यह अजनब
आदमी, जिसने उनके परिवार मे शादी कर ली थी, उन सभी के लि
काम कर रहा था, वह कुल का पेट भरने मे सहायता दे रहा था। अ
वे खुद अपने पुरुषो को दूसरे कुलो को दे देने के लिए पहले की तरह तैया
न थी।

कुलो पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए पुरुषो ने आपस मे सैनिक समझौ
कर लिये।

पहले, जब कोई आदमी मरता था, तो उसकी बहन के बच्चे उसके न्यायपूर्ण
उत्तराधिकारी होते थे। अब पुरुषो ने इस कबीलाई कानून को बदलने की कोशिश
की।

तुआरेग कबीले के अफ्रीकी खानाबदोशो मे उत्तराधिकार को "न्यायपूर्ण"
भाग और "अन्यायपूर्ण" भाग मे बाटा जाता था। विरासत का "न्यायपूर्ण" भाग
बहन के बच्चो को मिलता था और इसमे हर वह चीज, जो मृतक ने अपने जीवनकाल
में अपनी मा से प्राप्त की थी और हर वह चीज शामिल होती थी, जो सामूहिक
श्रम मे काम करते समय संचित हुई थी। "अन्यायपूर्ण" भाग मे लडाई मे जीता
धन और व्यापार मे संचित हर चीज सम्मिलित होती थी। यह भाग उसके अपने
बच्चो को मिलता था।

मातृसत्तात्मक समाज हजारो वर्ष चला था। और इसके बाद पुरानी जीवन-
प्रणाली मे बबूर के पुराने पेड की तरह दरारे नजर आने लगी।

कुल के लोगो ने अधिकाधिक अवसरो पर पुराने तरीको के खिलाफ जाना शुरू
कर दिया। पहले पत्नी पति को अपने परिवार मे ले जाती थी। अब पति पत्नी को
अपने घर मे लाता था।

चूंकि यह बात पुराने तरीको के खिलाफ थी, इसलिए जो इस रिवाज को तोड़ता
था, उसे अपराधी समझा जाता था।

कोई नौजवान किसी दूसरे कुल से पत्नी को सीधे-सीधे लेकर नही चला आ सकता था। उसे पत्नी को भगाना, उसका अपहरण करना पड़ता था।

आधी रात को नौजवान और उसके सब रिश्तेदार भालो और कटारो से लैस होकर उस नवयुवती के मकान के पास तक छिपकर जाते, जिसे लड़के के कुल ने उसकी पत्नी के रूप मे चुना था।

औरते चीखें सारे खानदान को जगा देते थे। दुलहिन का श्वेतकेशी नाना भी और बिना दाढ़ी-मूछवाले भाई भी, सभी लोग अपने हथियारो की तरफ लपकते, लडाई मे उलझे पुरुषो की जबरदस्त चिल्लाहटे औरतो के क्रदन को डुबा देती। आखिर, दूल्हा अपने कुलवालो की आड मे अपनी जिदा लूट–अपनी दुलहिन–को लिये-लिये वापस आ जाता।

अनेक वर्ष बीत गये। कालातर मे कबीलाई पुराने कानून का यह उल्लघन एक नया कबीलाई रिवाज बन गया। तब दूल्हा और दुलहिन के रिश्तेदारो मे "लडाई" एक सस्कार बन गई।

रक्तपात की जगह भेटो और मुक्ति-मूल्य ने ले ली। दुलहिन की रोती मा, बहने और सहेलिया भी विवाह-सस्कार का एक अग बन गई, जिसके अत मे दावत होती थी।

अभी तक ऐसे लोग है, जिन्हे वे प्राचीन शोकपूर्ण गीत याद हैं, जिनमें एक अजनबी कुल और अजनबी घर मे आनेवाली युवा वधू अपने दुर्भाग्य पर विलाप करती है।

और उसका हाल था भी ऐसा ही। अनजान घर मे युवती पूर्णत. अपने पति की दया पर आश्रित होती। कोई ऐसा न था, जिसके आगे वह अपना दुखडा रो पाती, क्योकि उसकी सास और ससुर दोनो और उसके पति के सभी सबधी सदा उसके पति का ही पक्ष लेते। जब कोई आदमी घर मे एक जवान दुलहिन को लेकर आता, तो यह लडकी परिवार मे एक और काम करनेवाली की हैसियत से आती थी और हर कोई इस बात का ध्यान रखता था कि वह क्षण भर को भी खाली न बैठे और अपने थोडे से हिस्से से जरा भी ज्यादा न खा ले। परिवार, जिसमे हर बात मे माता की ही चलती थी, हर बात मे पिता की ही चलनेवाला परिवार बन गया।

अब बच्चे अपनी मा के परिवार के साथ नही रहते थे, वे अपने पिता के परिवार के साथ रहने लगे। सबध अब मां के परिवार से नही, पिता के परिवार से निर्धारित किया जाता था। रूस मे लोग आदमी के पहले नाम के साथ उसके पिता का पहला नाम और "का बेटा" जोड़ने लगे।

पितृनामो का उपयोग यही से आया है, यही कारण है कि हम किसी को "प्योत्र इवानोविच" कहते हैं, जिसका पुराने जमाने मे मतलब था, "प्योत्र, इवान का बेटा"।

पहले खानाबदोश

मनुष्य ने जिस अद्‌भुत भडारघर की खोज की थी, उसमें वह अधिकाधिक भेंटे पाता रहा। स्तेपी मे हजारो ही भेडे चरती थी। खेतो मे नरम काली जमीन मे जोर लगाकर चलते बैलो को हलवाला हाकता था।

उर्वर घाटियो मे पहले फलोद्यान और द्राक्षोद्यान मीठी गध के साथ मुकुलित हो रहे थे। शाम के समय लोग अजीरो के पेडो के नीचे इकट्ठा होकर बातचीत किया करते थे।

मनुष्य के श्रम ने उसे कितने ही वर दे दिये थे, लेकिन अब उसे सख्त मेहनत मे और ज्यादा काम करना पडता था। अंगूर का हर गुच्छा, गेहू की हर बाली मानव श्रम से लबालब भरे हुए थे।

अगूरवाटिकाओ की देखभाल मे बडा कठिन काम करना पडता था। जब अगूरो के भारी-भारी गुच्छे चुन लिये जाते, तो उनका रस निकालने के लिए उन्हे पत्थर के कोल्हुओ मे रखकर कुचला जाता था। अगूर दब-पिस जाते और उनका स्याह सुर बकरे की खाल के थैलो मे चला जाता था। लोग बकरे की खाल मे लैस एक अद्भुत देवता और उसकी व्यथाओं के बारे मे भक्तिपूर्ण गीत गाते थे, जो सभी मानव की श्रेष्ठता के लिए होते थे।

नदियो के निचले मैदानो मे, जहा हर वसत मे बाढ का पानी धरती को उपजाऊ बनाता था, प्रकृति स्वय अच्छी फसल पैदा करने मे हाथ बटाती लगती थी।

लेकिन यहा भी काश्तकार के हाथ आराम नही करते थे। लोग पानी को खेतो मे रोक रखने और जहा उसकी ज्यादा जरूरत हो, उसे वहा भेजने के लिए नालिया खोदते और बाध बनाते थे।

लोग नदी की प्रार्थना किया करते थे, जो उनकी मिट्टी को उपजाऊ बनाती थी और वे इसी बीच इस बात को पूरी तरह से भुला देते थे कि अगर उन्होंने जमीन पर कमरतोड मेहनत न की होती, तो उस पर घासपात के अलावा और कुछ न उगता।

जैसे-जैसे समय गुजरता गया, काश्तकार की परेशानिया बढती गई। पशुपालक को भी दम लेने की फुरसत न थी। झुड जितना बडा होता, चरवाहे के लिए उतना ही अधिक काम होता। दर्जन भर भेडो की देखभाल एक बात है, लेकिन हजारो का ध्यान रखना और बात है। बडा झुड चरागाह को ज्यादा तेजी के साथ सफाया कर देता था और इसलिए उसे गाव से अधिकाधिक दूरी पर दूसरे चरागाहो की तलाश मे जाना पडता था।

अत मे, पूरे के पूरे गाव अपने डेरे-डडे उखाडते और झुडो के पीछे चल देते। लोग अपने तबू और सामान अपने ऊटो की पीठ पर लाद लेते और अपनी जिदा दौलत को अपने आगे-आगे हाकते हुए चल पडते।

पीछे वे उजाड खेतो को छोड जाते, जो शीघ्र ही घासपात से भर जाते। मगर उन्हे इन खेतो को छोडने का असल मे कोई दुख न था, क्योकि शुष्क स्तेपी मे अच्छी फसल बडी ही विरल बात थी।

इतिहास मे पहली बार केवल एक ही कबीले के लोगो मे नही, बल्कि विभिन्न कबीलो के बीच भी श्रम का विभाजन हुआ।

स्तेपी मे चरवाहों के ऐसे कबीले प्रकट हुए, जो ढोर पालते थे और अनाज से उनका विनिमय करते थे। वे कभी एक ही जगह नहीं रहते थे, बल्कि एक चरागाह से दूसरे चरागाह जाते हुए जगह-जगह घूमते रहते थे।

खानाबदोशों की जिंदगी तूफानी और आजाद थी।

वे अपने डेरे खुले स्तेपी में डाल देते थे, ऊपर तारों-भरे असीम आकाश के अलावा और कुछ न होता था, विराट स्तेपी ही उनका घर था। उनकी सर्व-लंबी यात्राओं में बच्चे ऊंटों की झूलती पीठों पर झोंके खाते-खाते ही सो जाते थे उन्होंने बस एक इसी पालने को जाना था।

फिर भी, जिस जमाने की हम बात कर रहे हैं, उसमें चरवाहे कबीलों में अभी तक बहुत कम असली खानाबदोश थे।

ज़िंदा औज़ार

खानाबदोश कबीले की जिंदगी न शांतिमय थी और न ही शांत। अपनी घुमक्कड़ी के दौरान खानाबदोश जब काश्तकारों के खेतों और झुंडों पर आ पहुंचते, तो वे अकसर उस चीज को बलात ले लेते थे, जिसे वे खुद नहीं बोते थे। किसी नदी की घाटी से नीचे आकर या स्तेपी मे जाते-जाते जंगल के छोर की तरफ बढ़कर वे रास्ते में पड़नेवाले गांवों को जलाते और लूटते हुए, फसल को रौंदते हुए, जानवरों को हांकते हुए और ग्रामवासियों को बंदी बनाते हुए आगे बढ़ते थे।

उन्हें बंदियों की ही सबसे ज्यादा जरूरत थी, क्योंकि लोगों को काम करने के मजबूर किया जा सकता था।
लिए, झुंडों की देखभाल करने के लिए

खानाबदोश चरवाहे इस तरह रहते थे। लेकिन किसान भी कोई विशेष शांति-प्रेमी नहीं थे।

शरद में, जब फसल पक आ जाती थी, तो उन्हें अपने पड़ोसियों के साथ भंडारों, कपड़ों, गहनों और हथियारों को लूटने के लिए उन पर हमला करने में ज्यादा संकोच न होता था। यहां भी सबसे मूल्यवान उपलब्धि उनके बंदी ही होते थे, क्योंकि किसानों को भी नालियां खोदने, बांध बनाने और बैल हांकने के लिए अतिरिक्त काम करनेवालों की जरूरत पड़ती थी।

आरंभ में बंदियों को गुलाम नहीं बनाया जाता था, क्योंकि एक बंदी के हाथों से कोई विशेष लाभ न प्राप्त किया जा सकता था। आदमी यद्यपि काम करता पर वह जितना कमाता था, उतना ही खा लेता था।

जब बड़े-बड़े झुंड पैदा हो गये, जब एक आदमी जितने अनाज, मांस तथा ऊन का उपयोग कर सकता था, उसका काम उससे ज्यादा पैदा करने लगा, तो सभी कुछ बदल गया। किसान अपने अनाज का ऊन से विनिमय करने के लिए अपनी आवश्यकता से अधिक धान्य पैदा करने लगे। इसी प्रकार चरवाहों को अपने कपड़ों और मांस के लिए भेड़ों के जितने बड़े रेवड़ की जरूरत थी, वे उससे बड़े रेवड़ रखने की कोशिश करते थे, क्योंकि अतिरिक्त ऊन को अनाज और हथियारों से बदला जा सकता था।

लिखने का इतिहास चित्र-शब्दों के साथ शुरू होता है। इन चित्रों के समय अक्षर और संकेतों में परिवर्तित होने में कई शताब्दियां लग गई।

इन चित्रों का अनुमान करना कठिन है जिनसे हमारी वर्णमालाओं के अक्षर निकले हैं। पुरातन वर्णमालाओं का उपयोग करनेवालों में कौन यह सोच सकता है कि "A" अक्षर बैल का सिर है? लेकिन अगर तुम "A" का सिर नीचे और पैर ऊपर कर दो तो तुम देखोगे कि यह सींगदार सिर से मिलता-जुलता है। प्राचीन [illegible] की भाषा में यह सींगदार सिर "A" के लिए – उनकी वर्णमाला के पहले अक्षर [illegible] के लिए था जिसका मतलब था "बैल"।

इसी प्रकार हम वर्णमाला के सभी अक्षरों के इतिहास का पता लगा सकते हैं। हम पता लगा सकते हैं कि "O" आंख के लिए था और "P" लंबी गर्दनवाले सिर के लिए।

लेकिन हमारा आईना तो हम बहुत दूर ले आये हैं।

असल में हम अपनी कहानी में अभी उसी जगह पहुंचे हैं, जब पहली चित्र-लिपि प्रकट हुई थी।

मनुष्य ने लिखना बहुत धीरे-धीरे और बड़ी अनिश्चितापूर्वक सीखा।

फिर भी अब समय आ गया था कि वह लिखना सीखे।

जब तक कि ज्ञान करने के लिए अधिक जानकारी या तथ्य नहीं थे, मनुष्य जितनी भी बातों को जानते थे उन्हें याद रखा जा सकता था। आध्यात्मिक, पौराणिक कथाएं और परियों की कहानियां एक आदमी से दूसरे आदमी के पास चली जाती थीं। हर बूढ़ा आदमी एक जिंदा किताब था। लोग कहानियों, पौराणिक कथाओं और सामान्य आचार के नियमों को याद कर लेने और अपने बच्चों को एक मूल्यवान धरोहर के रूप में दे जाते ताकि अपनी बारी में उनके बच्चे उन्हें अपने बच्चों तक पहुंचा दें। लेकिन यह धरोहर जितनी भारी होती गई, इसे पूरी तरह से याद करना उतना ही मुश्किल होता गया।

और इसलिए याद की मदद को यादगार आई। एक के अनुभव को दूसरे तक पहुंचाने में लिखित भाषा बोली जानेवाली भाषा की सहायता करने लगी। किसी सरदार की विजय यात्राओं और लड़ाई के कारनामों को बाद की पीढ़ियों के दिमागों में ताजा रखने के लिए उन्हें उसकी समाधि पर चित्रित कर दिया जाता था।

जब अन्य मित्र कबीलों के पास दूत भेजे जाते थे, तो भोजपत्र के टुकड़े पर या मिट्टी की तख्ती पर याद दिलाने का काम करने के लिए कितने ही चित्र-शब्द बना दिये जाते थे।

समाधि-प्रस्तर पहली पुस्तक था, भोज की छाल का एक टुकड़ा पहला पत्र था।

हमें अपने टेलीफोनों, रेडियो और टेप रेकार्डरों पर अभिमान है, जो दिक्-काल पर पार पाने में हमारी सहायता करते हैं। हमने आवाजों को सैकड़ों और हजारों किलोमीटर की दूरियों पर भेजना सीख लिया है। टेपों और रेकार्डों पर अंकित हमारी आवाजें अबसे सैकड़ों साल बाद भी साफ-साफ बोलेंगी। हमने बड़ी भारी प्रगति कर ली है, लेकिन हमें अपने से पहले-

वाले लोगो की उपलब्धियो को भूल नही जाना चाहिए। हमारे पैदा ह
के बहुत पहले हमारे पूर्वजो ने पहले-पहले भोज की छाल पर पत्र लिख
अवकाश को और पत्थर के स्मारको पर सदेश खोदकर काल को जीत लि
था।

इनमे से कई स्मारक हजारो वर्ष पहले के महान अभियानो और युद्धो की अप
कहानी सुनाने के लिए अभी तक बचे रहे है। भाले और तलवार चलाते योद्धा
की आकृतिया पत्थर पर नक्श है। ये विजयोत्सव मनाते घर लौटते विजेता है
जबकि उनके पीछे सिर भुकाये और कमर के पीछे बधे हाथ उनके कैदी घिसट
चले आ रहे है। और यहा, चित्र-लिपियो मे, हमे हथकडी का एक चित्र मिलत
है, जो दासता और असमानता का निशान है। यह निशान हमे मानव-जाति क
इतिहास मे एक नये अध्याय के प्रारभ के बारे मे, दास-प्रथा के आरभ के बा
मे बताता है।

बाद मे मिस्र के मदिरो की दीवारो पर हमे ऐसे कितने ही चित्र
साक्षी मिलेगे।

एक चित्र मे एक निर्माणस्थली के लिए ईंटे ले जाते गुलामो की एक लबी
कतार दिखाई गई है। एक गुलाम ने कुछ ईंटे अपने कधे पर जमा ली है और वह
इस ढेर को दोनो हाथो से सहारा दे रहा है। दूसरा एक बहगी मे ईंटे ले जा रहा
है, जैसे किसान पानी की दो बाल्टियो को ले जाते है। राजगीर एक दीवार बना
रहे है। ईंटो के ढेर पर एक सर्वेक्षक को बैठा दिखाया गया है। उसने अपनी कुह-
नियो को अपने घुटनो पर टेक रखा है और उसके हाथ मे एक लबी छडी है। उसे
काम नही करना पडता। उसका काम औरो से काम करवाना है। एक दूसरा सर्वेक्षक
निर्माणस्थली के पास इधर-उधर घूम रहा है। उसने एक गुलाम के सिर
पर अपनी छडी तान रखी है, क्योकि गुलाम ने प्रत्यक्षत उसकी मरजी
के खिलाफ कुछ किया है।

प्याज मे नही कली गुलाब की कभी उग सकती है,
नही दासी कभी स्वाधीन नर को जन सकती है।

दास और स्वाधीन लोग

यूनानी कवि थिओग्नीस ने यह एक ऐसे समय मे लिखा था कि जब दास-प्रथा समाज की स्थापित प्रणाली बन गई थी।

फिर भी आरभ मे गुलामो को नीचा नही समझा जाता था। आजाद आदमी और गुलाम एक ही बडे परिवार या बिरादरी के सदस्यो के रूप मे साथ-साथ रहते और काम करते थे।

पिता – कुल-पिता – इस पारिवारिक बिरादरी का प्रमुख और शासक होता था। उसके बेटे, उनकी पत्निया और बच्चे और उसके गुलाम उसके आश्रय मे रहते थे और पूर्णत उसके आधीन होते थे। पिता जितनी सुगमता से अपने उद्दड गुलाम को कोडो से पीट सकता था, उसी तरह वह अपने उद्दड पुत्र को भी पीट सकता था।

बूढ़ा गुलाम जब अपने मालिक से बात करता था, तो वह उसे सीधे
"बेटा" कहता था, जबकि रिवाज के अनुसार मालिक बूढ़े गुलाम को "बाबा"
कहता था।

अगर तुमने 'ओडिस्सी'* पढ़ा हो, तो तुम्हें शायद बूढ़े सूअर-पालक यूमीयस
की याद हो, जो अपने मालिक के साथ ही खाना-पीना था। यूमीयस को "देवता
तुल्य" कहा गया है, जैसे कि किसी कबीले के मुखिया को "देवता तुल्य" कहा
जाता है।

लेकिन गीत के बोलों पर सदा ही विश्वास नहीं किया जा सकता। सूअरों
की देखभाल करनेवाला यूमीयस न किसी देवता के समकक्ष था और न अपने मालिक
के ही। उसे काम करना पड़ता था, जबकि उसका मालिक काम करने के मामले
में आजाद था। गुलाम से परिवार के किसी सदस्य के मुकाबले ज्यादा काम की
अपेक्षा की जाती थी, जबकि उसे मिलनेवाला हिस्सा कहीं कम होता था। गुलाम
अपने मालिक की संपत्ति होता था, जबकि उसका मालिक संपत्ति का स्वामी होता
था।

जब पुराना मालिक मर जाता, तो उसके गुलाम उसके अन्य माल-मत्ते, सामान
के संग्रह, जानवरों के झुंडों सहित उसके बेटों की संपत्ति बन जाते थे।
इस पारिवारिक बिरादरी में समानता का कोई भी लेश बाकी न था।

यहां पिता अपने बच्चों पर शासन करता था, पति अपनी पत्नी पर हुकूमत
करता था, सास अपनी बहुओं पर और बड़ी बहुएं छोटी बहुओं पर हुकूमत चलाती
थी। लेकिन गुलाम तो सीढ़ी पर सबसे नीचे था। उस पर हर कोई अपना हुक्म
चलाता था।

कुलों और बिरादरियों में पहले जो बराबरी थी, वह भी जाती रही।
किसी के पास ज्यादा ढोर थे, तो किसी के पास कम। और ढोर संपत्ति के प्रतीक
थे। बैल के बदले कपड़े और हथियार लिये जा सकते थे। कांसे के सबसे पहले सिक्के
के बैल की फैली हुई खाल की आकृति में ढाले जाने का यही कारण था।

पर एक गुलाम तो एक बैल से भी ज्यादा कीमती था।

गुलाम सूअरों, गायों और भेड़ों की देखरेख करता था। शाम को उनके साथ
दिन भर चरागाहों में रहने के बाद वह उन्हें बाड़ों और थानों में बंद करता था।
दास फसल की कटाई में मदद देता था, दास ही अंगूर से रस और जैतून से तेल
निकाला करता था। धान्यागारों में सुनहरे अनाज के ढेर लगे हुए थे। मिट्टी के
दोहरी मुठियावाले बड़े-बड़े बर्तनों में, जिन्हें अंफोरा कहते थे, सुगंधित तेल इकट्ठा
होता जाता था।

गुलाम स्वतंत्र आदमी की सहायता करता था, लेकिन गुलाम ही सबसे मुश्किल
और सबसे गंदे काम को करता था।

अब लड़ाइयां लाभदायी हो गईं, क्योंकि लड़ाइयां गुलाम पैदा करती थीं और
गुलाम अपने स्वामियों के लिए अपार संपदा पैदा करते थे।

---

* प्राचीन यूनानी महाकवि होमर का महाकाव्य। – सं०

और इसलिए स्वतंत्र लोग अपने जानवरो की देखभाल और पालन और अपनी जमीनो की जुताई करने के लिए गुलामो को छोडकर खुद लड़ाई पर चले जाया करते थे।

लडाइया और भी ज्यादा काम लाती थी। दूसरे कबीले पर हमला करने के लिए लोगो को तलवारो और भालो और रथो की जरूरत थी। योद्धा अपने रथो मे द्रुतगामी घोडे जोतते और लडाई के मैदानो मे तेजी के साथ घूमते थे।

लेकिन लडाई मे हमला और बचाव, दोनो ही होते है। दुश्मन की तलवारो और भालो से बचने के लिए योद्धाओ को शिरस्त्राण पहनने पडते थे और ढालो का इस्तेमाल करना पडता था। अतत सामूहिक निवासो को बडे-बडे पत्थरो की बनी मजबूत दीवारो से घेर दिया गया।

कुल जितना धनी और शक्तिशाली होता था, अपनी प्रतिरक्षा पर वह उतना ही अधिक समय और श्रम लगाता था। बचाने के लिए उसके पास काफी कुछ होता था।

जल्द ही भारी फाटको और दीवारों पर बुर्जो से लैस दर्जनो कमरो और भडार-घरोवाले विशाल कोटले पहाडियो की चोटियो पर नजर आने लगे।

तंबू मकान और मकान शहर कैसे बना

सोवियत पुरातत्त्वविद स० तोल्स्तोव ने अपनी पुस्तक 'प्राचीन ख्वारेज्म' मे उन किलो के खडहरो का वर्णन किया है, जिनकी उन्होने मध्य एशिया के रेगिस्तानो मे खोज की थी।

ये किले आकार में मकानो की बनिस्बत कसबो जैसे ही ज्यादा थे।

कई किलोमीटर लबी मिट्टी की बनी मोटी दीवारो ने एक विशाल खाली चौक को घेर रखा था। बिरादरी के लोग दीवारो के भीतर ही, छत मे छोटी-छोटी खिड़कियोवाले मेहराबदार गलियारो मे रहा करते थे।

यह बात अजीब थी कि हजारो लोग दीवारो मे बने अंधेरे और तग गलियारो मे रहते थे, जबकि बीच का बडा चौक खाली ही रहता था।

तोल्स्तोव ने एक बहुत ही सरल उत्तर पा लिया। उन दिनो ख्वारेज्म के निवासियो का मुख्य धन उनके ढोर थे। चौक असल मे अनेको भुडो का एक विशाल बाडा था, जबकि झरोखो और पहरे की मीनारोवाली दीवारे इस सपत्ति को दुश्मन के हमले से बचाती थी।

जब कोई दुश्मन हमला कर ही देता, तो किले के सभी निवासी झरोखो मे अपनी-अपनी जगह ले लेते और हमलावरो पर तीरो की बौछार करते।

लेकिन जिस दौलत की वे मिलकर रक्षा करते थे, वह अब उनकी सयुक्त सपत्ति नही रही थी, क्योकि यद्यपि हर निवासी एक-दूसरे से सबधित था, तो भी कुछ परिवारो के पास औरों से अधिक भेडे, बैल और घोडे थे।

प्राचीन आख्यानो से हमे उस सुदूर काल का पता चलता है, जब "धनी' शब्द एक शब्दावली का अग था। लोग महज यही नही कहते थे

कि कोई आदमी "धनी" है, वे कहते थे, "गाय-बैलों मे धनी", "घोड़ो
मे धनी"।

पड़ोसी किलो पर हर नया हमला गरदारो के झुडो को और अमीरो और गरीबो
के बीच के फासले को बढाना जाता था।

तोल्स्तोव और उनके सहकर्मियो ने बाद के जमाने मे बने और भी घर और
किलो जैसे कसबे दोनो ही तरह का पता लगाया।

रेगिस्तान मे उनकी खुदाइया वर्षों चली। यह एक बड़ा कठिन और गभीर
कार्यभार था। एक कभी की लुप्त सभ्यता की खोज मे सोवियत विद्वानो ने ऊटो,
मोटरकारो, मोटरनौकाओं और हवाई जहाजो पर सफर किये। कभी-कभी ऊट
की पीठ या पहाडी चोटी से उन्हे बस भूरी और खारी रेत की परत मे ढके टीले
ही नज़र आते। मगर हवाई जहाज पर से वही उन्हे दीवारो, सड़को और विशाल
सामुदायिक मकानो की स्पष्ट रूपरेखाए भी दिखाई देती।

इन सभी मकानो और कसबो की तुलना करके उन्होने आखिर आदिम सामु-
दायिक प्रथा से दास-प्रथा मे रूपातरण की कहानी को पूरा किया।

यह दृजान्वास-काला के पास मछियारो का एक डेरा है। यहा कोई अमीर-
गरीब न था। सभी चूल्हे एक ही आकार के थे, सभी लोग बराबर थे, क्योकि
सभी समान निर्धन थे। यह घर बिना किलेबदी का था। यहा बचाने को कोई धन
न था।

इस शिविर-स्थल से कुछ ही दूरी पर वैज्ञानिको को मिट्टी के बने एक "लबे
घर" के अवशेष मिले। दो पचास मीटर लबे गलियारो की पूरी लबाई मे एक के
बाद एक कतार मे चूल्हे बने हुए थे।

इस घर की भी किलेबदी नही थी।

लेकिन सदिया बीत गईं। कई "लबे घर" एक बडे खाली चौक को बसी हुई
दीवार से घेरते हुए एक-दूसरे से जुड गये।

कुइजेली-गिर का बाडेदार मकान इसी तरह का है। यहा हमे दीवारो मे झरोखे
और प्रहरी बुर्ज भी मिलते हैं। लोग अपने झुडो को दुश्मनों के हमलो से बचाते थे,
मगर उन्हे अपने पडोसियो पर हमला करने और दूसरो के माल को उड़ा लाने मे
कोई सकोच न था। यहा कुछ परिवार दूसरो की अपेक्षा अधिक धनी थे, यद्यपि
इसका कोई निश्चित प्रमाण नही है। पुरातत्त्वविद अन्य देशो और ससार के अन्य
भागो मे रहनेवाले लोगो के रिवाजो के अध्ययन द्वारा केवल अनुमान ही कर सकते
हैं कि यह असमानता विद्यमान थी।

अगला कदम दृजान्वास-काला का किला है। दीवारो के भीतर का चौक खाली
नही है, क्योकि कई कमरोवाले दो विशाल सामुदायिक मकानो ने खाली जगह को
भर रखा है। दोनो मकानो के बीच से एक सड़क "अग्निगृह" को जाती है। प्राग-
तिहासिक मछियारो के डेरे मे जहा प्राचीन चूल्हे मे अविराम अग्नि रहती थी,
यहा मदिर बन गया है।

किले मे अब एक ही कुल नही रहता। यहा दो कुल रहते है और प्रत्येक का
अपना घर है। यहा बाडा नही है, क्योकि निवासियो का मुख्य उद्यम पशु-पालन

नही, कृषि है। किले की दीवारो के बाहर सिचाई की आडी-तिरछी नालियो मे भरे खेत है। किला खेतो और इन नालियो की खानाबदोशो से रक्षा करता है।

यह इससे भी बाद की मजिल है—तोप्राक-काला की गढी। किले की दीवारो के भीतर कई कमरोवाले लगभग दर्जन भर मकान है।

शहर को चारो तरफ से कई बुर्जियोवाली दीवारो ने घेर रखा है। यात्री शहर तुरत ही नही घुस सकता, उसे पहले एक भूलभुलैया से गुजरना होता है, जो नद्वार की रक्षा करती है।

मुख्य सडक, जो प्रवेशद्वार से प्रारभ होती है, शहर के एक सिरे से सिरे तक चली जाती है। इसके दोनो तरफ सैकडो कमरेवाले विशाल यिक भवन, छोटी-छोटी मीनारे और आगन है। मुख्य सडक "अनि-को और शहर के शासक के तीन मीनारोवाले शानदार महल को जाती है।

आज इसके केवल खडहर ही बाकी है, जो जगह-जगह रेत और मिट्टी मे ढके हुए है। पुरातत्त्वविदो को इस नगर की रूपरेखा की पुनर्रचना मे बडा समय और श्रम लगाना पडा था।

उनके श्रम के फलस्वरूप खोजो का एक सतत प्रवाह बध गया। सबसे दिलचस्प चीजे तीन मीनारवाले महल मे मिली, जहा मुख्य कमरो की दीवारो पर निपुण कलाकारो के बनाये भित्तिचित्रो के अवशेष अभी तक मौजूद है। यहा, वीरान मरु स्थल मे, अतीत के दृश्य महल की दीवारो पर उतर आये, मानो वे सजीव हो उठे हो—वीणा बजाती एक लडकी, सिर पर टोकरी को जमाती हुई एक अगूर तोडनेवाली, काला लबादा पहने एक आदमी, घोडे, शेर और मशाल। कुशल मूर्ति-रागे की बनाई मूर्तियो के टुकडे भी थे।

महल मे मिली हर चीज इसी तथ्य की ओर इगित करती थी कि इसके मालिक र के अन्य निवासियो की अपेक्षा कही धनी और उच्च कुलीन थे। और अन्य मकानो से दर्पपूर्वक ऊचा निकला हुआ महल स्वय इस बात का न था कि इसके निवासी औरो से बहुत समृद्ध थे। यह शहर और पूरे देश के शासक ख्वारेज्मशाह का, उसके परिवार और उसके गुलामो का निवास था।

र स्वय एक राज्य जैसा था। राजा की एक सेना थी, जो गुलामो और को दबाये रखने, रईसो और अमीरो के अधिकारो की रक्षा करने, सिचाई ो के निर्माण के अधीक्षण मे उसकी सहायता करती थी। एक सिचाई की ने मे कई हजार गुलाम लगते थे। और केवल एक ही गढी नही, बल्कि गढिया और एक नियमित सेना ख्वारेज्म के खेतो, नहरो और किसानो हीन मकानो की रक्षा करती थी।

ार हजारो वर्षों मे से गुजरकर विद्वानो ने अपनी आखो से देख लिया न मे और मकान कसबे मे कैसे बदल गया, समान लोगो की बिरादरी दासत्मक राज्य मे कैसे परिणत हो गई।

पुरातत्वविदों ने ये विशाल किले मध्य एशिया के अलावा और जगहों मे भी पाये हैं। उन्हे वे हर ऐसी जगह मिले, जहां लोगों को शत्रु-आक्रमण से अपनी धन-दौलत की रक्षा करनी थी।

क़िले का घेरा

किले की दीवारो के ऊपर से दूर-दूर तक देखा जा सकता है। जब दूरी पर धूल का एक बादल दिखाई देता है और धूप में भालों के फल चमचमाते हैं, तो गढ़ी तेजी के साथ अपनी रक्षा करने के लिए तैयार हो जाती है। हलवाहा अपने बैलों को फाटकों के भीतर रेलता है, चरवाहे अपने झुंडों को हाक लाते हैं। जब आखिरी आदमी भी गढ़ी में आ चुका होता है, तो भारी फाटकों को बंद करके आगल लगा दी जाती है। योद्धा लोग दुश्मन का तीरो की बौछार से स्वागत करने के लिए उसके आगमन की प्रतीक्षा मे दीवारो और बुर्जों पर अपनी-अपनी जगह सभाल लेते हैं।

हमलावर गढ़ी के पास आ जाते हैं और अपना डेरा गाड़ देते हैं। वे जानते है कि गढ़ी आसानी से आत्मसमर्पण न करेगी। इन ऊची दीवारो के ढहते-ढहते कई महीने बीत जायेंगे। हर सुबह गढ़ी के फाटक जोरो से चर्राते हुए खुल जाते हैं। अपने भालो को हिलाता हुआ योद्धाओ का एक दल तेजी से बाहर निकल आता है। ये लोग खुली लडाई मे युद्ध के भाग्य का निर्णय करने आये हैं। वे शत्रु के घोड़ो की दुमो से अलकृत शिरस्त्राणों पर क्रोधाध होकर अपनी तलवारे चलाते है। वे लडते-लडते बेदम हो जाते है, पर न अपनी परवाह करते हैं, न दुश्मन की।

एक पक्ष अपने घरो और परिवारो की रक्षा की भावना से उत्प्रेरित हो रहा है। दूसरा इसलिए गुस्से के मारे जला जा रहा है कि जो दौलत इतनी पास है, वह फिर भी इतनी दूर है। जो रक्षक अभी तक जीवित है, वे रात के आगमन के साथ वापस लौट जाते हैं। सूर्य निकलने तक के लिए लड़ाई बंद हो जाती है।

दिन बीतते जाते है। घिरे हुए लोग हमलावरो के साथ हिम्मत से लड़ रहे है, लेकिन भूख उनके दुश्मनो के भालो और तीरो से भी ज्यादा बुरी है।

जिन धान्यागारों में कभी अनाज था, उनमें अब धूल के अलावा और कुछ नहीं बचता। जब मिट्टी के बड़े-बड़े घड़ो मे भरे तेल की अंतिम धारा कुओं में बह जाती है, तो गढ़ी मे विषाद शुरू हो जाता है। यह भूखे बच्चों के रोने की आवाज है, औरतें चुपके से अपने आंसू पोंछ लेती है कि मर्द कहीं नाराज न हो जायें।

हर लड़ाई के बाद गढ़ी में रक्षकों की संख्या कम होती जाती है। और अन्तिम वह दिन आता है जब लौटते हुए योद्धाओं के ठीक पीछे हमलावर गढ़ी में घुस आते हैं। मजबूत दीवारों के भीतर वे एक पत्थर को भी खड़ा नहीं रहने देते। जहां जन कभी रहते, काम करते और खाते थे, वहां अब खंडहरों और लाशों के सिवा कुछ नहीं बचता। विजेता जवान और बूढ़े—सभी जिंदा लोगों को [illegible] नये गुलाम बनाने के लिए ले जाते हैं।

ज़िंदा लोगों की कहानी, मुर्दों की ज़बानी

रूस के दक्षिण में जो स्तेपी फैले हुए है, उनमें कुछ जगहें ऐसी है जहा ऊचे टीलों की लबी कतारे – दृष्टि के छोर तक – जाती दिखाई देती है। स्थानीय निवासियों में से किसी को भी याद नहीं कि सपाट स्तेपी में ये टीले कैसे आये या किसने उन्हे बनाया।

अगर तुम सचमुच ज़ोर दो, तो कोई पुराना बाशिंदा तुम्हे बतायेगा कि ये "ममाइयो" या "ममाइयो की बेटियों" की कब्रे है। लेकिन वह यह नहीं समझा पायेगा कि "ममाई" कौन थे या वे कब रहते थे।

अगर वह बातूनी है, तो वह तुम्हें खुशी-खुशी उस जमींदार के बारे में बता देगा जो कभी यहा रहा करता था और जो उसका मालिक था और जिसने छिपे खज़ाने की खोज में नक्शा हाथ में लिये टीले की खुदाई में कितने ही बरस लगाये थे। लेकिन उसे कुछ न मिला। तभी क्रांति हो गई, "जमींदार को निकाल बाहर कर दिया गया" और उसे अपनी खोज को बद करना पड़ा।

लेकिन इन बूढ़ों से टीलों के बारे में पूछना अपने वक्त को बरबाद करना होगा। अगर तुम उनके बारे में सचमुच जानना चाहते हो, तो तुम्हे उन पुरातत्त्वविदो से पूछना चाहिए, जो यहा खुदाइया कर रहे है।

बूढ़ा आदमी बस उन्हीं बातों को याद रखता है, जो उसके जीवनकाल में हुई है, जबकि पुरातत्त्वविद उन बातों के बारे में भी जानता है, जो कई सदी पहले हुई थी।

ये टीले प्राचीन शव-स्तूप है – उन लोगो की कब्रे, जो कभी स्तेपी में रहा करते थे।

पुरातत्त्वविदो को इन टीलों के भीतर मानव-ककाल मिलते है। उनके पास विभिन्न वस्तुए पड़ी होती है – मिट्टी के घड़े, चकमक या कांसे के औज़ार, कई पशुओं की हड्डिया। यह वह सामान है, जो मरनेवाले को अपनी लबी यात्रा के लिए दिया जाता था।

लोगों का विश्वास था कि मौत के बाद आदमी को खाना और काम करना पड़ता, कि स्त्री की प्रेतात्मा को उसकी तकली की, जबकि पुरुष की प्रेतात्मा को उसके भाले की ज़रूरत पड़ सकती है।

सर्वाधिक प्राचीनतम शव-स्तूप एक ही जैसे है। कई चीज़े, जो मृत व्यक्ति की होती थे, उसी के साथ रख दी जाती थी, क्योंकि उन प्रारम्भिक दिनो में आदमी के पास बहुत कम माल-मता होता था। वह अपना किस चीज़ को कह सकता था? बस, अपनी गर्दन में लटके तावीज़ को या लड़ाई में से आनेवाले अपने हथियार को।

घर की हर चीज़ सामूहिक सपत्ति होती थी, क्योंकि घर का कामकाज सामूहिक आधार पर पूरे परिवार द्वारा किया जाता था। यही कारण है कि सबसे प्राचीन स्तूपों में अमीर-गरीब का भेद नहीं है। सभी मृत व्यक्ति समान है।

स्तूपों में गरीब-अमीर बाद में प्रकट हुए।

इस सदी पर, देर्गेव्स्कोयेवाला गाव के पास शव-स्तूपों का एक समूह-उद्घाटन

मिला। यहां तीन तरह की कब्रें थीं – वे, जिनमें रईसों के, मध्यम वर्ग के लोगों के और गरीबों के अवशेष थे।

सबसे बड़े शव-स्तूपों के बीच में एक बड़ा गढ़ा था। यह कब्र थी। इसके भीतर रंगीन चित्रोंवाले यूनानी कलश, सोने की जड़ाई के काम के जिरहबख्तर और बारीक नक्काशी की हुई कटारें थीं।

पहले से छोटे शव-स्तूपों में कदाचित ही सोना या चित्रित कलश होते हैं। फिर भी, इन्हें भी गरीबों की कब्रें नहीं कहा जा सकता। अगर मृतक गरीब होता, तो कब्र में उसके बराबर रोगनदार काली तश्तरी या धातु की पट्टियों का निपुणता-पूर्वक बना हुआ जिरहबख्तर न होता।

सबसे छोटे शव-स्तूपों की संख्या ही सबसे ज्यादा है। ये गरीबों की कब्रें हैं। इनमें पतली खाई में मृतक के दाहिने हाथ के पास बस एक भाला और बायें हाथ के पास एक घड़ा ही है, ताकि अगर वह प्यासा हो, तो पानी पी ले। गरीब अपनी कब्र में भी गरीब ही रहता था।

कहावत है "कब्र की तरह खामोश"। लेकिन क्या ये कब्रें सचमुच खामोश हैं? क्या ये हमें उस सुदूर काल के बारे में नहीं बताती जब पहले अमीर और गरीब पैदा हुए थे? मुर्दे हमें जिंदा लोगों के बारे में काफी कुछ बता सकते हैं।

अगर हम शव-स्तूपों को छोड़ दें और बस्तियों के खंडहरों में जायें, जो हमें दिखाई दे रहे हैं, तो वहां भी हम पुरानी संपदा और पुरानी निर्धनता के चिह्न खोज लेंगे। पुरातत्त्वविदों ने पता लगाया है कि बस्ती की दो बाड़ें थीं। एक उसे बाहर से घेरे हुए थी, जबकि दूसरी ने बस्ती के केंद्रीय भाग के चारों ओर एक घेरा बना रखा था। यहां उन्हें बढ़िया बर्तनों और कलशों के कई टुकड़े मिले, जिन्हें शायद सुदूर यूनान से लाया गया था। लेकिन दोनों बाड़ों के बीच की जगह में उन्हें जो कुछ टुकड़े मिले, वे मिट्टी के बहुत ही सामान्य बर्तन और घड़े थे। प्रकटतः बस्ती के केंद्रीय भाग के निवासी बाहरी भागों में रहनेवालों की अपेक्षा कहीं धनी थे, क्योंकि उनके पास इतने मूल्यवान कटोरे और खाने-पीने के साधन थे।

जो ऊंचे टीले दूर से ही नजर आ जाते थे, वे उनकी कब्रों पर बने थे। कब्रें हमें उन लोगों के बारे में भी बताती हैं, जिन्हें उनमें दफनाया गया था। कभी-कभी वे उन दासों की, जिन्हें अपने मालिक के साथ-साथ दफनाने के लिए मार डाला गया था, या कब्रों में भी अपने पतियों का अनुगमन करनेवाली पत्नियों की रोमहर्षक कहानियां भी बताती हैं।

ये कब्रें धनी कुल के प्रमुख, पिता की निर्मम शक्ति के बारे में किसी भी पुस्तक की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह से बताती हैं। जब वह मरता था, तो वह अपनी पत्नियों और दासों को भी अपने साथ कब्र में घसीट ले जाता था, क्योंकि उसके मूल्यवान कपड़ों और सोने के गहनों की तरह वे भी उसी की संपत्ति थे।

इन वक्रों के अधवार या किलों के खडहरों मे जो अमूल्य वस्तुए सदियों स पडी हुई थी, वे अब सग्रहालयो मे प्रदर्शित की जा रही है। जो चीज इतनी सदिया से आख से छिपी हुई थी, उन्हे प्राचीन अतीत के बारे मे ज्यादा जानने की इच्छा रखनेवाला हर व्यक्ति देख सकता है।

सग्रहालय के दर्शक काच के हर केस के पास खडे होकर सोने की मूठोवाली तलवारो को, अति सुदर मनको की मालाओ को जिनमे से प्रत्येक मनके का एक छोटा-सा बछडे का सिर है बटी हुई जजीरो को कैसो और [illegible] के आकार के चादी के बर्तनो को देखते है।

इन वस्तुओ मे से प्रत्येक के बनाने मे कितना श्रम और कितना कौशल लगा था।

[काम] की मामूली से मामूली कटार के बनाने मे भी कई-कई दिन लग जाते थे। सबसे पहले तो खनिज का ही खनन करना पडता था। वह जमाना बीत चुका था, जब शुद्ध ताबा पैरो तले पडा मिल जाया करता था। अब मनुष्य को खनिज [illegible] की खोज मे जमीन के नीचे गहराई मे जाना पडता था। अधेरी सुरगो के पेदो मे [illegible] खनिज को अपनी गैतियो से तोडते और उसे चमडे के थैलो मे रखकर ऊपर सतह पर भेजते थे।

बडे पत्थरो को तोडने के काम को आसान बनाने के लिए वे जमीन के नीचे [illegible] जलाया करते थे। जब पत्थर लाल हो जाते, तो वे उन पर ठडा पानी डाल देते थे। पानी छन छन करता और भाप के बादलो मे बदल जाता और पत्थर तडक [illegible] और छोटे-छोटे टुकडो मे टूट जाते। इस प्रकार आग और पानी खनिक की [illegible] की सहायता को आ गये।

[illegible] खान ज्वालामुखी जैसी लगती। नीचे की आग से दमकते भाप के बादल ज्वालामुखी के मुख की तरह खान के मुह से निकलते। यही कारण है कि ज्वालामुखी [illegible] रोमन देवता वुल्कन (अग्नि देव) के नाम पर वोल्केनो कहा जाता है।

खनिज के खनन के बाद धातु को पिघलाया जाता। इसके लिए भी बडे हुनर [की] जरूरत थी। धातु को गर्म करने और पिघली धातु को सांचो मे डालने का [illegible] बनाने के लिए उसमे टीन (खनिज रागा) मिलाया जाता था।

[illegible] हुए खनिज और टीन से ताबे और टीन की एक मिश्रधातु बन जाती थी। यह कुछ ताबा ही न था, यह कासा था — स्वय मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गयी [illegible] एक नई धातु।

[illegible] युग मे जब मनुष्य के पास जो अपने भद्दे औजार थे, वे [illegible] आवश्यक होने पर एक आदमी दूसरे का काम आसानी से कर सकता [illegible] मानव जिन थोडे से हुनरो को जानता था, [illegible] हर [illegible] शिकारी कबीले मे सभी आदमी शिकारी होते थे और [illegible] अपना धनुष और बाण बना सकता था।

[illegible] पत्थर को [illegible] आकार मे लाना और [illegible] एक हुनर था और खनिज के एक टुकडे को [illegible] एकदम भिन्न बात थी।

एक शागिर्द को शस्त्रनिर्माता का काम सिखाने में वर्षों लग जाते थे। शस्त्र-निर्माता अपने बेटे को वह सब सिखाता था, जो वह खुद जानता था, क्योंकि यह हुनर कुल की संपत्ति था, उसकी पुश्तैनी दौलत था। कुम्हारों, शस्त्रनिर्माताओं और ठठेरों की कभी पूरी बस्तियां ही बस जाती थी और उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल जाती थी।

मेरा और तेरा

आरंभ में हर कारीगर अपनी बिरादरी के ही लिए, अपने गांव के ही लिए काम किया करता था।

लेकिन कालांतर में शस्त्रनिर्माता या कुम्हार अधिकाधिक अवसरों पर अपनी बनाई चीजों को अनाज, कपड़े या अन्य कारीगरों द्वारा बनाई हुई चीजों से बदलने लगे।

प्राचीन कबीलाई व्यवस्था में दरारें पड़ने लगी थी, जिस तरह आग में गरम किये हुए पत्थर पर ठंडा पानी डालने से पड़ने लगती हैं।

आरंभ में, गांव के सभी निवासी बराबर थे। अब एक दरार ने अमीर परिवारों को गरीब परिवारों से अलग कर दिया, जबकि दूसरी ने कारीगरों को किसानों से अलग कर दिया।

कारीगर जब तक बिरादरी के लिए काम करता था, बिरादरी उसका पेट भरती थी। लोग साथ-साथ काम करते थे और अपनी बनाई और पैदा की हुई सभी चीजों को बांट लेते थे।

लेकिन जब कारीगर अपनी देगचियों और तलवारों की दूसरे गांवों में अदला-बदली करने लगा, तो वह विनिमय में पाये अनाज या कपड़े का अपने अनेक संबंधियों के साथ हिस्सा-बांट नहीं करना चाहता था।

आखिर, जब उसने और उसके बेटों ने इस अनाज और इस कपड़े को अर्जित किया था, तो किसने इसमें उनकी सहायता की थी?

इस प्रकार आदमी "मेरे" और "तेरे" में फर्क करने लगा, खुद अपने परिवार को अपने संबंधियों के परिवारों से अलग करने लगा।

लोग छोटे-छोटे परिवारों में रहने लगे।

प्राचीन यूनान के मिसेनाए और तिरीन्स नामक नगरों में पुरातत्ववेत्ताओं ने ऐसी बस्तियों के खंडहरों की खोज की, जो इस विच्छेद की ओर इंगित करते हैं।

सबसे धनी और सबसे शक्तिशाली परिवार मोटी दीवारों के पीछे पहाड़ी की चोटी पर रहता था। और इस परिवार के पास पत्थर की इन दीवारों के पीछे छिपाने के लिए था भी काफी कुछ! यहां कबीले का सरदार अपने बेटों, उनकी पत्नियों और बच्चों के साथ रहता था।

किसान, जो काफी गरीब थे, नीचे मैदान में अपनी झोंपड़ियों में रहते थे। [illegible] कारीगरों, शस्त्रनिर्माताओं, कुम्हारों और ठठेरों के घर [illegible] हुए थे।

खैर, इस तरह से, लोग अब एक-दूसरे से [illegible]

रते थे। जब किसान कबीले के धनी और शक्तिशाली सरदार को पास से गुजरते
खते, तो वे आदरपूर्वक उसका अभिवादन करते थे, क्योंकि उनका विश्वास था
कि देवता स्वयं शक्तिशालियों के संरक्षक होते हैं।

पुरोहित लोग उन्हें ये बातें सिखाते थे, बचपन से ही ये विचार उनके मस्तिष्क
में बैठा दिये जाते थे।

कारीगर या खनिक को किसान भी अपनी बराबरी का या अपना भाई नहीं
समझता था। क्या यह कालिख लगा आदमी जादूगर नहीं है, जो ज़मीन के नीचे
से तांबा निकालता है, जहां से लपटें और भाप ऊपर फूटकर आती हैं? किसान
को कैसे मालूम होता कि खान में क्या होता है? खनिक खनिज कैसे पाता है? उसे
कोई बताता होगा कि वह कहां है, उस तक पहुंचने में और किसी चमत्कार से
उसे तांबे और कांसे में बदलने में मदद करता होगा। ज़रूर ज़मीन के नीचे खनिज
के रहस्यमय संरक्षक होंगे, जिनसे सीधे-सादे आदमी का बचकर रहना ही
अच्छा।

ये विचार केवल यूनान के लोगों के ही मन में नहीं थे, सभी जगह प्रागैतिहासिक
लोगों के यही विचार थे।

ठगों-जादूगरों की कहानियां हम तक प्राचीन काल से आई हैं।

हमारी भाषाओं में अभी तक ऐसे शब्द मौजूद हैं, जो हमें बताते हैं कि धन
और निर्धनता के बारे में क्या समझा जाता था। प्रागैतिहासिक लोग नहीं समझते
थे कि बिरादरियां अमीर और गरीब परिवारों में कैसे बंट गईं। उनका खयाल था
देवता पहले से मनुष्य के भाग्य का निर्णय कर देते हैं।

मसलन रूसी भाषा में "बोगाती" शब्द का अर्थ है "धनी"। यह "बोग"
द से निकला है, जिसका मतलब "देवता" है। यह शब्द रूसी भाषा में तब आया
र लोग इसी बात पर विश्वास करते थे कि देवता अमीरों की सहायता करते
। और "बेदनी" (गरीबों) को वे केवल "बेदी" (विनाश और दुख)
[illegible] देते हैं।

एक नई व्यवस्था का जन्म

मनुष्य द्वारा तय किये गये रास्ते पर एक बार फिर मुड़कर देखना [illegible]
एक ज़माना था कि जब न अमीर थे और न गरीब, न दास थे और न [illegible]
स्वामी। अपनी दयनीय झाड़ियों में सिमटकर बैठनेवाले सभी [illegible]
समान निर्धन थे। [illegible] और हड्डी के बने उनके हथियार [illegible]
जिस चीज़ ने उन्हें जंगली जानवरों, भूख और ठंड से बचाया [illegible]
वे सब साथ-साथ रहते थे, साथ-साथ शिकार करते थे [illegible]
शक्तियों को एकजुट करके अपना साथ-साथ बचाव करते थे और [illegible]
बनाते थे।

एक आदमी अकेला न केवल [illegible] को मारने में असमर्थ [illegible]
को भी नहीं मार सकता था।

एक आदमी अकेला पूरे के लिए [illegible]

नही ला सकता था या ऊपर निकली चट्टान के नीचे पत्थर की सिल्लियो की दीवार नही बना सकता था।

लोग तब हर चीज को साझे की मानते थे। जब शिकार सफल होता, तो बूढ़े आदमी मास को काटने और उन सबको बाट देते थे, जिन्होंने जानवर का पीछा करने और उसे मारने मे हिस्सा लिया था।

लेकिन हजारो वर्ष बीत गये। मकानों ने प्रागैतिहासिक तबुओ और झाड़ियो की जगह ले ली, चकमक और हड्डी के औजारो की जगह धातु के हथियार आ गये। लोगो ने जुताई शुरू कर दी – पहले कुदालो से, और फिर लकड़ी के हलों से। उन्होंने घोड़े, गाय और भेड को पालतू बना लिया। लोहारखानो से निहाई पर पड़ते हथौड़ो की आवाज सुनी जा सकती थी। कुम्हारों के चाक घूमने लगे। श्रम का विभाजन हो रहा था। लोहार के जमीन जोतने मे कोई तुक न थी, जबकि वह एक कुल्हाड़ी या दराती के बदले आसानी से अनाज ले सकता था। किसान जब अपने अनाज के बदले अपनी आवश्यकतानुसार ऊन ले सकता था, तो उसे भेड़ो के रेवड़ की देखभाल के पचड़े मे पड़ने की जरूरत नही थी।

और इसलिए, पहले नावे और फिर पालवाले जहाज एक गाव से दूसरे गाव को जाने लगे। वे अनाज और ऊन, कुल्हाड़ियो और बर्तनो से लदे होते थे। दूर के "यात्री" प्राय डाकुओ मे बदल जाते थे, क्योंकि डकैती और अदला-बदली साथ-साथ चलते थे।

पहले कोई व्यक्ति अपने रिश्तेदारो मे ज्यादा धनी नही हो सकता था। सभी समान निर्धन थे।

लेकिन, समयान्तर मे, गरीबो की झोपडियो के ऊपरवाली पहाडियो पर पत्थरों की ऊची दीवारे उठ खड़ी हुई, जिन्होंने अमीर और शक्तिशाली परिवारो के मकानो को घेर रखा था। अमीरो के भंडारघरो मे इतना सामान था कि उसे धरने को जगह न थी। साल-दर-साल उनकी दौलत बढ़ती और फैलती ही जाती थी।

धनवानों ने बिरादरी मे सत्ता को अपने हाथो मे ले लिया और गरीबो को अपने अधीन कर लिया। गरीब आदमी को अधिकाधिक अवसरो पर अपने अमीर पड़ोसी से मदद मागने के लिए मजबूर होना पड़ता था। यह सहायता बहुत महगी थी क्योंकि निर्धन आदमी को सख्त जाड़े मे उधार लिया गया अनाज अमीर आदमी को लौटाने के लिए वर्षों काम करना पड़ता था।

इस प्रकार कुछ लोग औरो को दास बनाने लगे।

लेकिन दास-प्रथा केवल इसी तरीके से विकसित नही हुई। लड़ाइयो मे दुश्मन लोग पकड़े जाते थे और आजाद आदमियो को गुलाम बना लिया जाता था।

किसी जमाने मे हर कोई काम करता था। कालान्तर मे, कुछ लोगो ने काम करना एकदम बद कर दिया, जबकि औरो को कोड़ो की मार से काम करने के लिए मजबूर किया जाता था।

किसी जमाने मे शिकार के हथियार और पकड़ा हुआ शिकार भी – सभी चीजें – सभी की सामान्य सपत्ति थी। अब दास-स्वामी बड़ी बड़ी जमीनो, [illegible] के झुडो और [illegible] का ही नही, बल्कि गुलामो का भी एकमात्र [illegible]

ामकी जमीन को जोतते थे, उसके झुंडो की देखभाल करते थे और उसके
ा मे काम करते थे।
मी जमाने मे जो लोग एक ही बिरादरी के होते थे, वे आपस मे नही लड़ते
शांति के साथ रहते थे। रूसी भाषा में "मीर" शब्द "शांति" और "विश-
दोनो के लिए है।
लेकिन दास-प्रथा के प्रकट होने के साथ हर गाव, हर कसबे मे लड़ाई शुरू
ई।
दास-स्वामी गुलामो से घृणा करते थे, गुलामो को दास-स्वामियो से नफरत थी।
गुलाम बच भागने के सपने देखा करता था। और उसका मालिक अपने माल
अपने ज़िदा और बोलते हुए औज़ार को हर कीमत पर रखे रखने पर तुला
था। दास-स्वामित्व पर आधारित राज्य स्वतन्त्र मनुष्यो की सपत्ति की रक्षा
न्त्र बल मे करता था। और अगर दास अपने मालिको के खिलाफ खड़े होने की
मिश करते, तो उन्हे बलात आज्ञा मानने पर मजबूर किया जाता था और निर्मम
ड दिया जाता था।
इस प्रकार प्राचीन आदिम सामुदायिक प्रणाली की जगह एक नई दास-स्वामित्व-
ारी प्रणाली ने ले ली।

जिस टुकड़े पर वह उस समय काम कर रहा होता था, उसी से नहीं, चकमक के किसी भी टुकड़े से होता था।

अतः उसे प्रकृति के किसी कानून की, पृथ्वी पर प्रचलित किसी नियम की जानकारी प्राप्त हो चुकी थी।

"वसंत सर्दियों के बाद आता है"। इसमें सचमुच आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यह बिलकुल प्रत्यक्ष है कि सर्दियों के बाद शरद नहीं, वसंत ही आता है। लेकिन ऋतु-परिवर्तन हमारे पूर्वजों द्वारा लंबे पर्यवेक्षण के बाद की गई सबसे पहली वैज्ञानिक खोजों में एक है। लोगों ने वर्षों की गणना करना इस बात को समझने के बाद ही सीखा कि सर्दी और गरमी अकस्मात ही नहीं आ जाती हैं, बल्कि वसंत सदा सर्दियों के बाद आता है और फिर वसंत के बाद गरमी और शरद का आगमन होता है।

मिस्रियों ने यह खोज नील नदी की बाढ़ों को देख-देखकर की। वे एक बाढ़ से अगली बाढ़ तक के समय को पूरा एक वर्ष मानते थे।

पुरोहित लोग नदी पर निगरानी रखते थे, क्योंकि लोगों का खयाल था कि नदी भी कोई देवता है। आज तक मिस्री मंदिरों की दीवारों पर, जो नील तक पहुंचती थीं, छोटी-छोटी लकीरें बनी हुई हैं जिनकी सहायता से पुरोहित लोग पानी के स्तर को नापा करते थे।

जुलाई के महीने में, जब खेतों की जमीन गरमी से चिटकने लगती थी, किसान लोग उस समय की बेचैनी के साथ प्रतीक्षा करने लगते थे, जब नील नदी का पीला, गादभरा पानी सिंचाई की नालियों में होकर बहने लगेगा। लेकिन शायद इस साल वह आयेगा ही नहीं? अगर देवता लोगों से नाराज हो गये हों और वे उनके खेतों में पानी न भेजें, तो?

सभी तरफ से मंदिरों में भेंटें और चढ़ावे लाये जाते। किसान अपने अनाज के आखिरी मुट्ठे लेकर पुजारियों के पास आते और उनसे अनुनय करते कि जरा जोर से देवताओं की स्तुति करें।

हर दिन उषा काल में पुजारी यह देखने के लिए नदी पर जाते कि पानी ने चढ़ना शुरू किया या नहीं।

हर शाम को वे मंदिर की चौरस छत पर चढ़कर घुटने टेककर तारों को निहारते। तारों भरा आकाश उनका पंचांग था।

और फिर एक दिन पुरोहित लोग मंदिर में गंभीरतापूर्वक घोषणा करते "देवताओं ने तुम पर कृपा की है – आज से तीन रात बाद तुम्हारे खेतों में पानी आ जायेगा।"

धीरे-धीरे, कदम-ब-कदम, लोगों ने उस विचित्र दुनिया को जानना शुरू किया, जिसमें वे रहते थे – परियों की कहानियों और जादू-टोने की दुनिया को नहीं, बल्कि ज्ञान की दुनिया को। मंदिरों की छतें पहली ज्योतिष वेधशालाएं थीं। कुम्हारों और ठठेरों के ठीहे पहली प्रयोगशालाएं थीं, जिनमें पहले प्रयोग किये गये थे।

लोग प्रेक्षण करना, गणना करना और निष्कर्ष निकालना सीख रहे थे।

ा प्राचीन विज्ञान की आधुनिक विज्ञान से बहुत कम समानता थी। यह अभी
म जादू-टोने से बहुत मिलता था, जिसका यह एक अग भी था। लोग तारो
वल प्रेक्षण ही नही करते थे, वे उनसे भाग्यफल भी बताते थे। आकाश और
का अध्ययन करते समय वे आकाश और धरती के देवताओ की भी आराधना
थे। फिर भी, अज्ञान का घना कुहरा छटने लगा था।

वताओं ने वलोक का रास्ता पकड़ा

जादू-टोने की दुनिया के कुहासे में से वस्तुओ की धीरे मनुष्य के आगे उभरने लगी।

एक जमाना था, जब प्रागैतिहासिक लोगो को विश्वास था कि हर कही–हर पत्थर मे, हर पेड मे, हर जीव मे–आत्माओ का वास है।

लेकिन समय के साथ यह विश्वास गायब हो गया।

मनुष्य ने यह सोचना बद कर दिया कि हर जानवर मे कोई आत्मा रहती है। उसकी कल्पना मे अब वन-देवता ने, जो घने जगल मे रहता था, सभी जानवरो की आत्माओ की जगह ले ली।

किसान ने यह सोचना बद कर दिया कि गेहू के हर पूले मे आत्माओ का वास है। उसके दिमाग मे अनाज मे रहनेवाली सभी आत्माए उर्वरता की देवी मे एकाकार हो गई, जो हर चीज को उगाती थी।

इन देवी-देवताओ ने पुरानी आत्माओ की जगह ले ली। अब वे सामान्य मर्त्य-धर्मा मनुष्यो के साथ नही रहते थे। ज्ञान उनको मनुष्य के निवास से अधिकाधिक दूर धकेलता गया। इसके कारण उन्हे ऐसी जगहे तलाश करनी पडी जहा मनुष्य ने कभी पैर नही धरा था–अधेरे और पवित्र वन या पेडो से भरे पर्वत शिखर।

लेकिन कुछ समय के बाद मनुष्य इन जगहो मे भी पहुच गया। ज्ञान ने अधे जगलो को आलोकित कर दिया, पर्वतो की ढालो पर छाये कुहरे को इसने छिन्न भिन्न कर दिया।

और इसलिए देवताओ को एक बार फिर उनके नये निवासस्थान से निका दिया गया। अब वे आकाश पर जा चढे, समुद्री के पेंदे पर चले गये और पृथ्वी सतह के नीचे अधकारमय पाताल मे जा विलीन हो गये।

देवताओ का पृथ्वी पर अवतरण अधिकाधिक विरल होता गया। समय के बारे मे आख्यायिकाए पीढी-से-पीढी को मिलती रही जब वे कि युद्ध या किले की घेरेबदी मे भाग लेने के लिए स्वर्ग से पृथ्वी पर रहते थे।

तलवारो और भालो से लैस होकर देवता मर्त्यधर्मा मनुष्यो के झगडो मे लिया करते थे। निर्णायक घडी मे वे नेता को घने बादल की आड मे कर दे और शत्रु को वज्रापात से मार दिया करते थे। लेकिन–कथाकार कहते है सब बहुत-बहुत पहले हुआ करता था।

इस तरह मानविक अनुभव दीप्ति के घेरे को लगातार प्रसारित करता देव

को पास से दूर, वर्तमान से भूतकाल और इहलोक से "परलोक" की तरफ हटाता अधिकाधिक आगे बढ़ता गया।

देवताओं के साथ कोई भी व्यवहार-सम्पर्क करना कठिन हो गया। पहले हर कोई "चमत्कार" और जादू-टोने के अनुष्ठान कर सकता था। अनुष्ठान स्वयं कहीं सरल होते थे। मिसाल के तौर पर, वर्षा लाने के लिए आदमी का मुंह में पानी भरकर एक विशेष नृत्य करते हुए उसे चारों तरफ फुहारकर छोड़ देना ही काफी था। बादलों को बिखेरने के लिए आदमी छत पर चढ़ जाता और पवन के अनुकरण में फूंक मारता।

अब हम जानते हैं कि न हम इस तरह पानी बरसा सकते हैं और न फूंक मारकर बादलों को बिखरा सकते हैं। और आदमी भी इस निष्कर्ष पर पहुंच गया कि देवता उसकी प्रार्थनाओं को आसानी से नही सुनेंगे। तभी पुजारी ने सामान्य जनों और देवताओं के बीच अपनी जगह ले ली, क्योंकि वह सभी दुर्बोध संस्कारों और विधि-विधानों को, देवताओं की सभी गुप्त कथाओं को जानता था।

पहले समय में सयाना शिकार नृत्य का मात्र निदेशक ही हुआ करता था। अपने कुल के सदस्यों के मुकाबले वह आत्माओं के ज्यादा पास नही होता था।

लेकिन अब पुरोहित एक बिलकुल ही अलग हस्ती बन गया। वह देवताओं के निकट एक पवित्र वाटिका में रहा करता था। सितारों की पोथी में से देवताओं की इच्छा को पढ़ने के लिए वह मंदिर की छत पर जाता था। इस पोथी को केवल वही पढ़ सकता था। लड़ाई के पहले वह बलि के जीव की अंतड़ियों को ही देखकर उसका परिणाम – जीत या हार – बता सकता था। अंत में पुरोहित मनुष्यों और देवताओं के बिचौलिये बन गये।

लेकिन साधारण मनुष्यों से देवता दूर और दूर ही जाते रहे। वह समय बीत चुका था जब देवता सभी मनुष्यों को बराबर समझते थे। अब लोग खुद अपनी और अपने पास-पड़ोस की तरफ देखते थे और अनुभव करते थे कि समानता की पुरानी अवस्था अब बाकी नही रही है। "होना भी ऐसा ही चाहिए," पुजारियों ने कहा। "मनुष्य को हर बात देवताओं पर ही छोड़ देनी चाहिए। जिस तरह राजा और सरदार मनुष्यों पर राज करते हैं, उसी प्रकार देवता दुनिया पर शासन करते है।" लेकिन पुजारियों के उपदेशों को विनम्रतापूर्वक सुनने से सभी लोगों को संतोष नही होता था। ऐसे भी लोग थे, जो देवताओं की इच्छा के आगे झुकने को तैयार न थे।

आगे चलकर एक यूनानी कवि को जोरों से यह पूछना था कि जब धर्मात्मा लोग कष्ट सहते है और पापी मज़े करते हैं, जब बच्चे को अपने पिता के पापों का दंड दिया जाता है, तो जियस (देवराज) का न्याय कहां चला जाता है? जो अकेली बात रह गई है, वह यह कि आशा की उपासना की जाये – वह देवी, जो अभी तक लोगों के साथ ही रह रही है। अन्य सभी देवता ओलिंपस (देवलोक) चले गये हैं।

तिज
स्तीर्ण
आ

प्रागैतिहासिक मानव सत्य और कथा, ज्ञान और अंधविश्वास के भेद को नही जानता था।

दूध अगर रखा रहे, तो जिस तरह उससे मलाई को अलग होने मे समय लगता है, उसी तरह ज्ञान को अंधविश्वास से अलग होने मे हजारो वर्ष लग गये।

हम तक जो गीत और महाकाव्य आये है, उनमे देवताओ और वीरो के किस्सो से विभिन्न कबीलो और सरदारो के इतिहास को, गढे हुए भूगोल से सही भौगोलिक ज्ञान को और प्राचीन आख्यानो से तारो के बारे मे पहली जानकारी को अलग करना कठिन है।

यूनानी हमारे लिए 'इलियड' और 'ओडिस्सी' – दो महाकाव्य छोड गये है, जिनमे उनके प्राचीनतम गीत और आख्यान आ जाते है। ये यूनानी सेनाओ द्वारा विजित ट्रॉय के घेरे और पतन की और ओडिसिअस नामक यूनानी सरदार के अपने जन्मस्थान इथाका लौटकर आने तक विदेशो और समुद्रो मे भटकने की आख्यायिकाएं है। ट्रॉय के परकोटे पर देवता मनुष्यो के साथ कधे से कधा भिडाकर लडे थे – कुछ हमलावरो की तरफ थे, तो कुछ रक्षको के साथ थे। यदि देवताओ का कोई चहेता साघातिक आपदा मे होता, तो वे उसे उठाकर सुरक्षित स्थान पर ले जाते थे। ओलिंपस पर्वत पर भोज के समय वे इस बात पर विचार करते थे कि लडाई को जारी रखा जाये या युद्धरत पक्षो मे मेल करा दिया जाये।

इन आख्यानो मे सत्य कल्पना के साथ घुला-मिला हुआ है। लेकिन कल्पना का अत और सत्य का प्रारभ कहा होता है? क्या यूनानियो ने ट्रॉय पर कभी घेरा डाला भी था? और क्या ट्रॉय का शहर असल मे था भी?

विद्वान लोग वर्षों तक इसी पर बहस करते रहे जब तक कि अत मे पुरातत्त्वविद की कुदाल ने उनके सदेहो को दूर नही कर दिया। 'इलियड' मे दिये सकेतो पर चलते हुए पुरातत्त्वविदो ने एशिया-ए-कोचक की तरफ कूच किया और ट्रॉय के खडहरो को वही जाकर खोद निकाला, जहा उनके होने का विश्वास किया जाता था।

सत्य 'ओडिस्सी' मे भी था। इसे भूगोलवेत्ताओ ने प्रमाणित किया, जिन्होंने ओडिस्सीअस की यात्राओ का एक नक्शे पर अनुसरण किया। अगर तुम अपना नक्शा खोलो, तो तुम स्वप्नविलासियो के देश, इओलुस के द्वीप और सील्ला और कारीब्डीस तक को पा लोगे, जो अपने बीच से गुजरते हुए ओडिस्सीअस के जहाज को नष्ट करने के लिए तैयार थे।

स्वप्नविलासियो का देश असल मे अफ्रीका मे त्रिपोली का तट है, इओलुस के द्वीप वे है, जिन्हे हम लिपारी द्वीपसमूह के रूप मे जानते है, जबकि सील्ला और कारीब्डीस सिसिली और इटली के बीच का जलडमरूमध्य है।

'ओडिस्सी' मे सचाई थी, लेकिन अगर तुम प्राचीन विश्व के भूगोल का 'ओडिस्सी' से ही अध्ययन करने की सोच रहे थे, तो तुम भारी गलती करोगे। कारनामो और यात्राओ की इस सबसे पहली पुस्तक मे भूगोल की अद्भुत

परिधान पहना दिया गया है। पर्वतों को दैत्यों में बदल दिया गया है, द्वीपों
रहनेवाले असभ्य लोग विराट एकनेत्री नरभक्षी बन गये हैं।

उस जमाने मे लोग अपने एकदम पास के परिवेश मे ही परिचित हुआ क
थे। ठीक है कि व्यापारी लोग जहाजो मे बैठकर यात्राएं किया करते
लेकिन वे भी कभी तट से ज्यादा दूर जाने की हिम्मत नही करते
क्योकि खुले समुद्र में जाना बड़ा भयावह होता था। उन दिनो मे न न
थे और न दिक्‌सूचक यंत्र; मल्लाह अटकल से सूर्य और तारो की सहाय
से अपना रास्ता पहचानते थे। तट पर खडी ऊची चट्टान या कोई ऊ
पेड उनके मार्गदर्शक थे।

समुद्र मे हजारो ही खतरे छिपे पड़े थे। हलकी सी हवा के चलने पर भी चौ
सपाट पेंदेवाले जहाज लहरो पर डगमगाने लगते थे। असभ्य पालों पर पार पा
कठिन था। हवा मनुष्य की आज्ञा का पालन नही करना चाहती थी अ
उसके जहाजो के साथ खेलती थी, मानो वह लहरो पर पडी लकडी
खपची हो।

लेकिन जहाज आखिर तट पर पहुच ही जाता था। थके हुए जहाजी उसे त
तक खीच लाते थे। अब यहा, सूखी जमीन पर, वे आखिर आराम कर सकते थे
पर उन्हे चैन नही था। जिस अनजान देश मे वे आये थे, वह समुद्र से भी अधि
डरावना था। जहाजियो को लगातार अपने पर नरभक्षियो के टूट पडने का अंदे
बना रहना, क्योकि दूसरे मल्लाहो से उन्होने जगली लोगो के किस्से सुने थे। उन
भयग्रस्त आखो मे हर अनजान नया जानवर एक भयानक दैत्य बन जाता था। उन
देश के भीतर जाने की हिम्मत न होती थी।

तिस पर भी, हर नई यात्रा मनुष्य के क्षितिज को विस्तृत करती थी। अज्ञ
की सीमाए, कहानी-किस्सो की सीमाएं अधिकाधिक पीछे की तरफ धकेली जा
थीं। सबसे साहसी समुद्रयात्री समुद्र के द्वार तक चले जाते थे, जिसके आगे महासाग
था। इस महासागर को वे विश्व जैसा असीम समझते थे। जब
आरम्भ होता था। इस महासागर को वे विश्व जैसा असीम समझते थे। जब
अपने घरो को लौटते, तो वे अपने मित्रो से कहते कि वे दुनिया
छोर तक हो आये है और यह कि जमीन सभी तरफ एक महासागर
घिरी हुई है।

हजारो वर्षों के बाद लोग यूरोप से भारत और चीन से यूरोप की यात्रा करेंग
समुद्रयात्री महासागर को पार करेंगे और दूसरे छोर पर जमीन पायेंगे – अमरी
जिस पर मनुष्य रहते हैं।

फिर भी, पृथ्वी के विज्ञान मे कई और युगो तक किस्से-कहानियों की छ
जमी रही।

क्रिस्टोफर कोलंबस, जिसने अमरीका की खोज की, सचमुच विश
करता था कि पृथ्वी पर कही कोई बहुत ऊचा पहाड है और उसी प
स्वर्ग स्थित है। उसने स्पेन की महारानी को इस आशय का पत्र लि
कि वह स्वर्ग के बहुत निकट पहुचने और उसके परिवेश की खोज क
की आशा करता है।

अभी पद्रहवी शताब्दी तक रूसी लोगो को पक्का विश्वास था कि उराल पर्वत के उस पार ऐसे लोग रहते है, जो रीछो की ही तरह सर्दियो मे शीतनिद्रा लेते है। एक प्राचीन पाडुलिपि हमारे समय तक बच रही है। इसका शीर्षक है 'पूर्वी देश के अज्ञात लोग'। यह पाडुलिपि बडे विस्तार के साथ ऐसे आदमियो का, जिनके मुह उनकी खोपडी के ऊपर थे और बिना सिर के ऐसे आदमियो का वर्णन करती है, जिनकी आखे उनकी छातियो पर थी।

यह सब हमे बडा मजेदार लगता है। लेकिन आज भी वैज्ञानिक गल्पकथाओ के लेखक अपनी पुस्तको को बाह्य अतरिक्ष की अज्ञात दुनियाओ के भयानक दैत्यो से बसवाते है।

पृथ्वी की सतह का विस्तृत अध्ययन कर लिया गया है यही कारण है कि लेखक अपने पात्रो को धरती के केद्र की ओर, और मगल गृह या चद्रमा पर भेजते है।

पहले गायक

हर सदी के बीतने के साथ जीवन के बारे मे कम रहस्य, कम विचित्र और अज्ञात तथ्य बाकी बचते गये। दस्तकारो का अपने पर अधिकाधिक विश्वास बैठने लगा और देवताओ की प्रार्थना मे वे कम और कम लगते गये। जिस प्रकार सूर्य के निकलने पर घाटी से कुहरा उठ जाता है, उसी प्रकार दैनिक जीवन से जादू-टोने के सस्कार भी उठते जा रहे थे।

जादू-टोने की जड विभिन्न रिवाजो, सास्कारिक खेलो, नृत्यो और गानो मे ही सबसे गहरी थी। लेकिन मनुष्य के प्रबुद्ध मस्तिष्क ने जल्दी ही उसे यहा से भी—कहो कि उसी के घर से—भगाना शुरु कर दिया।

जादू-टोने के सस्कारो, नृत्यो और गानो से जादू तेजी के साथ निकलता जा रहा था और बस गाने और नाच ही बाकी रह रहे थे।

जब यूनानी लोग डायोनीसुस (बाक्स–सुरादेव) का त्यौहार मनाया करते थे, जो उन्हे फल देता था, तो आरभ मे ये पवित्र, जादू-टोने के खेल हुआ करते थे। गायकवृद लोगो को अनाज, फल और शराब देने के लिए प्रकृति को अपनी शीतकालीन गहन निद्रा से फिर जागने मे सहायता करने के लिए डायोनीसुस की मृत्यु और पुनर्जन्म के गीत गाता था।

इस उत्सव के दौरान मूकाभिनेता जानवरो के मुखौटे लगाये होते थे और यज्ञ-वेदी के इर्द-गिर्द नाचते थे।

पहला गायक डायोनीसुस की यत्रणाओ का गीत गाता था और गायकवृद टेक मे सम्मिलित होकर उसका उत्तर देता था।

जादू का यह प्राचीन नाच बहुत कुछ नाटक जैसा है। मूकाभिनेताओ मे और *पहले गायक मे हम भावी अभिनेताओ को देख सकते है। पहले गायक ने न केवल* देवता की यत्रणाओ का ही वर्णन किया, बल्कि उसने उन्हे वस्तुत चित्रित भी किया। उसने अपनी छाती पीटी और याचना मे आसमान की तरफ अपने हाथ फैलाये।

जब देवता का पुनर्जन्म हो गया, तो मूकाभिनेता उल्लसित हो गये, उन्होंने एक-दूसरे को चिढ़ाया और आपस में हंसी-मजाक किया।

कई सदियों के बाद इस जादुई प्रदर्शन से सारा जादू जाता रहा।

लेकिन प्रदर्शन स्वयं शेष रहा। पहले ही की तरह, लोग अभिनय करते, गाते और नाचते थे। लेकिन अब वे देवताओं की यंत्रणाओं को चित्रित नहीं करते थे वे मानवों की पीड़ाओं को व्यक्त करते थे। और उन्हें अभिनय करते देख लोग हंसते और रोते थे, साहस और शूरतापूर्ण कारनामों की प्रशंसा करते थे और मूर्खता और अनाड़ीपन का उपहास करते थे।

इस प्रकार प्राचीन गायकवृंद का पहला गायक त्रासदी का अभिनेता बन गया जबकि हुंगोड़ मूकाभिनेता विदूषक, मसखरे और भांड बन गये।

लेकिन पहला गायक केवल पहला अभिनेता ही नहीं था, वह प्रमुख गायक भी था। आरंभ में वह गायकवृंद के साथ गाता था। इसके बाद वह अकेले गाता था।

कालांतर में गाने को संस्कार से अलग कर दिया गया। गायक धार्मिक खेलों के दौरान और सामंत और उसके सरदारों के उत्सव-भोज में गाया करता था गायक अपनी वीणा के तारों को झनझनाता हुआ गाता था। और प्राचीन परिपाटी के अनुसार शब्द, संगीत और अभिनय को मिलाते हुए कभी-कभी नाचता तक था वह पहला गायक और गायकवृंद, दोनों बन गया। वह गीत भी गाता, और देता भी।

लेकिन वह गाता किसके बारे में था? वह देवताओं और वीरों के बारे में, अपने ही कबीले के सरदार के बारे में, जिसके सामने से वीर-से-वीर मनुष्य भी भाग जाता था, गाता था। वह लड़ाई में खेत रहे योद्धाओं के बारे में, जिन भाइयों का प्रतिशोध लिया जाना था, उनके बारे में गाता था।

यह गाना न प्रार्थना था, न जादू। यह वीर कार्यों की कहानी थी, जो वस्तुतः और भी वीर कार्यों का आह्वान करती थी।

और प्यार और वसंत और दुख के गीत! ये कहां से आये? ये भी किसी समय उन संस्कारों के अंग थे, जो विवाह और मृत्यु के अवसरों पर, कटाई के समय, अंगूरों की चुनाई के समय किये जाते थे। तब दो गायकवृंद बारी-बारी से मधु गीत गाते थे।

चरखा कातती नवयुवती इन गीतों को याद करती। बच्चे को सुलाने के लिए झुलाती मां इन गीतों को गाती।

आज वसंत के गीतों का वसंतकाल में ही या प्रेम के गीतों का विवाहों में ही गाया जाना आवश्यक नहीं है।

वीरों के बारे में और प्रेम के पहले गीतों की रचना किसने की?

इसका उत्तर हम नहीं जानते, जैसे हम यह भी नहीं जानते कि पहली तलवार या पहले चरखे को वस्तुतः किसने बनाया। किसी एक आदमी ने नहीं, बल्कि सैकड़ों ही पीढ़ियों ने हमारे औज़ारों, गीतों और शब्दों को जन्म दिया है। गायक ने अपने

गीत की रचना नही की, उसने जो पहले सुना था, उसे बस औरो को दे दिया। लेकिन एक गायक से दूसरे गायक तक जाते-जाते गीत बडे होते और बदलते चले गये। जिस प्रकार नदी कितने ही नालो से पोषित होती है, उसी प्रकार महान महाकाव्य भी इन प्रारभिक गीतो से ही विकसित हुए।

हम कहते हैं कि 'इलियड' होमर की रचना है। लेकिन होमर कौन था? उसके बारे मे केवल आख्यानो से ही पता चलता है। और होमर का व्यक्तित्व स्वय उतना ही काल्पनिक है, जितने कि वे वीर, जिनकी गौरव गाथा उसने गाई है।

जब वीर नायको के बारे मे पहले गीत बनाये गये, तब गायक का अभी तक अपने कुल और कबीले से घनिष्ठ सबध था। तब लोग हर काम मिलकर किया करते थे और गीतो की रचना भी पीढियो के सामान्य प्रयासो मे ही हुई थी।

गायक पुरानी पीढियो से प्राप्त गीत मे परिवर्तन या सुधार करते समय भी अपने को उस गीत का लेखक या रचयिता नही मानता था।

लेकिन कालातर मे आदमी "मेरा" को "तेरा" से अलग करने लगा। कुल टूट गये, पुरानी एकता जाती रही। दस्तकार अब अपने लिए काम करता था वह अब यह अनुभव नही करता था कि वह कुल की इच्छा की पूर्ति करनेवाला मात्र एक औजार है।

कई सदियो के बाद मेगारा के कवि थिओग्नीस ने लिखा

> अपनी कला के फल, इन कविताओ पर
> मैने अपनी मुहर लगा दी है।
> कोई इन्हे चुरायेगा या बदलेगा नही।
> हर कोई यही कहेगा
> "ये रही मेगारा के थिओग्नीस की कविताए!"

सामुदायिक व्यवस्था का कोई आदमी ऐसा कभी नही कह सकता था।

धीरे-धीरे मनुष्य "मैं" शब्द का अधिक उपयोग करने लगा। वह समय कभी का बीत चुका था, जब वह यह विश्वास करता था कि काम करनेवाला वह नहीं है, बल्कि उसके जरिये कोई और काम करता था। यहा गायक यह कहते हुए कि "गीत का वरदान" उसे देवताओ से मिला है, अभी तक कला की उन प्रेरक देवियो की ही चर्चा करता है, जिन्होने उसे गीत की प्रेरणा दी, किंतु वह अपने बारे मे भी नही भूलता।

> देवताओ ने मुझे शब्द दिया है
> मै भुलाई नही जाऊगी।

प्राचीन यूनानी कबायली मान्यताओं की इस दुनिया में पुराना नये के साथ मिल

गया है। उसका विश्वास था कि शब्दों का यह वर उसे देवियों ने दिया है, न
उसने स्वयं इसे अपनी भाषा में खोजा है, जैसे कि खनिक पहाड़ों में खनिज की
करता है। किंतु इसी पंक्ति में हम रचयिता के गर्व को, एक कवि के गर्व को
पाते हैं, जिसे मालूम है कि उसका नाम भुलाया नहीं जायेगा।

इस तरह मनुष्य बड़ा हो रहा है। और वह जितना ही ऊपर चढ़ता जाता
उसका क्षितिज भी उतना ही विस्तृत होता जाता है।

हमारा संग्रहालय

प्रिय पाठको, तुम लोगों ने यह पुस्तक पढ़ी और शायद इसमें सम्मिलित अनोखे चित्रों को देखकर तुम्हें हंसी भी आई होगी। यह पुस्तक बड़े प्रतिभाशाली लेखकों ने लिखी है जो मानवजाति के इतिहास को बड़ी ही रोचक और लोकप्रिय शैली में प्रस्तुत कर पाए। सब किस्सों की तरह इतिहास भी प्रमाणित तथ्यों पर आधारित है। इन तथ्यों में सम्मिलित है भौतिक संस्कृति की वस्तुएं जो विश्व के संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। अपनी किताब में भी हमने एक छोटे-से संग्रहालय की आयोजना की है। हम आपको इस संग्रहालय का दौरा करने के लिए निमंत्रित करते हैं।

तुर्य युग के आरंभ की
स्पति और जीव-जंतु

...नु और मध्यपाषाण युग के मुख्य मानव के निवास-स्थान

८
१०
९
११
१२

विषय-सूची

मनुष्य महाबली है . . ५

अध्याय १

अदृश्य पिंजरा . . . ७
जंगल की सैर . . ८
जगल के क़ैदी . . . १०
मछलिया तट पर कैसे आईं ११
मौन साक्षी १४
आदमी आज़ादी की राह पर १७
अपने पुरखो से मुलाकात २०

अध्याय २

हमारे नायक के दादा-परदादा और भाई-भतीजे २१
हमारे नातेदार राफेल और रोज़ा २४
क्या चिंपाज़ी आदमी बन सकता है ?
हमारा नायक चलना सीखता है २५
पैरों ने हाथों को काम के लिए कैसे आज़ाद किया २७
हमारा नायक धरती पर उतरता है २८
लुप्त कड़ी ३१

अध्याय ३

मनुष्य नियमों को तोड़ता है ३७
मानव के हाथों के छोड़े चिह्नों पर . . ३८
ज़िंदा केंचवा और ज़िंदा पौधा ४०
हाथ का केंचवा . . ४२
उद्यमी मनुष्य और उद्यमी नदी . ४३
मनुष्य की जीवनी का आरम्भ . ४४
मनुष्य समय बनाता है . . ४७
बिनाई की ज़िंदगी . ४८

पूर्वजों से बातचीत १०७
पुरानी बोली की छिपटिया . . १०९

अध्याय ८

हिमनदिया पीछे हटी ११३
बर्फ के कैदी ११४
मनुष्य जगल से जूझता है . . ११६
आदमी का चौपाया दोस्त ११७
आदमी नदी से लडता है . ११९
शिकारी-मछियारे का घर . १२०
जहाजो की परनानी १२१
पहले कारीगर. १२३
बीज साक्षी है १२५
नये मे पुराना १२७
अद्भुत भंडारघर. . . . १२९

अध्याय ९

समय की सुई आगे चलती है १३३
झील की कहानी १३५
पहला कपड़ा १३७
पहले खनिक और इस्पातढालनेवाले १३८
रूस के पहले कृषक . . . १४०
मानव-उद्योग का प्रभात . १४१

अध्याय १०

दो कानून १४५
पुरानी "नई दुनिया" . . १४६
गलतियों की शृंखला . . . १५०

अध्याय ११

जादुई जूते . . . १५५
पुरानी इमारत में पहली दरारें १५६
पहले खानाबदोश . १६१
लिखा औज़ार १६२

पाठकों से

रादुगा प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन के बारे मे आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हम बडी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है
१७, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत सघ।

याद और यादगार १६३
दास और स्वाधीन लोग १६५
तंबू मकान और मकान शहर कैसे बना १६७
किले का ढंग १७०
जिंदा लोगों की कहानी, मुर्दों की जबानी १७१
एक नई धातु का जन्म १७३
मेरा और तेरा १७४
एक नई व्यवस्था का जन्म १७५

अध्याय १२

विज्ञान का प्रारंभ १७६
देवताओं ने देवलोक का रास्ता पकड़ा १८१
क्षितिज विस्तीर्ण हुआ १८३
पहले गायक १८५
हमारा संग्रहालय . . . १८६

पाठकों से

रादुगा प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु अनुवाद और डिजाइन के बारे मे आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हम बडी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है
१७, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत सघ।